वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

SW- 02

Historical and Professional Development of Social Work

(समाज कार्य का एतिहासिक एवं व्यावसायिक विकास)

अनुक्रमणिका

इकाई संख्या एवं इकाई का नाम	पृष्ठ संख्या
इकाई **1** इंग्लैण्ड में समाज कार्य का ऐतिहासिक विकास(1800 से पूर्व)	1-9
इकाई 2 इंग्लैण्ड में समाज कार्य का ऐतिहासिक विकास(1800 से 1900 तक)	10- 18
इकाई 3 इंग्लैण्ड में समाज कार्य का ऐतिहासिक विकास(1900 से 1950 तक)	19-24
इकाई 4 इंग्लैण्ड में समाज कार्य का ऐतिहासिक विकास(1950 से अब तक)	25-29
इकाई 5 संयुक्त राज्य अमेरिका में समाज कार्य का ऐतिहासिक विकास(1800 से पूर्व)	30-34
इकाई 6 संयुक्त राज्य अमेरिका में समाज कार्य का ऐतिहासिक विकास(1800 से 1900)	35-45
इकाई 7 संयुक्त राज्य अमेरिका में समाज कार्य का ऐतिहासिक विकास(1900 से 1950 तक)	46-55
इकाई 8 संयुक्त राज्य अमेरिका में समाज कार्य का ऐतिहासिक विकास(1950 से अब तक)	56-59
इकाई 9 भारत में समाज कार्य का ऐतिहासिक विकास(1800 से पूर्व)	60-65
इकाई 10 भारत में समाज कार्य का ऐतिहासिक विकास(1800 से 1900 तक)	66-71
इकाई 11 भारत में समाज कार्य का ऐतिहासिक विकास(1900 से 1950 तक)	72-78
इकाई 12 भारत में समाज कार्य का ऐतिहासिक विकास(1950 से अब तक)	79-92
इकाई 13 व्यवसाय :अर्थ, गुण एवं मानदण्ड	93-101
इकाई 14 समाज कार्य : एक व्यवसाय के रूप में	102-110
इकाई 15 भारत में समाज कार्य व्यवसाय	111-116
इकाई 16 समाज कार्य प्रक्रिया	117-122
इकाई 17 समाज कार्यकर्ता की भूमिका एवं कार्य	123-131
इकाई 18 समाज कार्य व्यवसाय की चुनौतियाँ	132-138

इकाई-1

इंग्लैण्ड में समाज कार्य का ऐतिहासिक विकास

(1800 से पूर्व)

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 भूमिका

1.3 1800 से पूर्व समाज कार्य का ऐतिहासिक विकास

1.4 धर्म का युग

1.5 अविवेकपूर्ण दान का युग

1.6 सुपात्र निर्धनों की सहायता का युग

1.7 राज्य हस्तक्षेप का युग

1.8 एलिजाबेथ निर्धन अधिनियम

1.9 सारांश

1.10 अभ्यास प्रश्न

1.11 सन्दर्भ ग्रन्थ

1.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात आप –

1. इंग्लैण्ड में समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास को विभिन्न चरणों में समझ सकेंगे।
2. सन् 1800 से पूर्व इंग्लैण्ड में लोगों की सहायता से सम्बन्धित जो भी कार्य किये गये , उसका विश्लेषण कर सकेंगे |

1.1 प्रस्तावना

समाज कार्य का आरम्भ इंग्लैण्ड से माना जाता है। प्रत्येक समाज में लोगों की सहायता करने का उद्देश्य उन्नति करने से रहा है। इंग्लैण्ड में भी समाज कार्य का आरम्भ धर्म से माना जाता है। जिसमें धार्मिक भावना से प्रेरित होकर के लोगों ने निराश्रित अथवा असहाय लोगों की सहायता करने का प्रयास किया। यही सहायता कालान्तर में एक व्यावसायिक रूप को प्राप्त किया।

1.2 भूमिका

मानव समाज के इतिहास में प्रत्येक समाज और प्रत्येक युग में दुर्बल, निर्धन, निराश्रयी व्यक्ति रहे हैं। प्रत्येक समाज अपने कमजोर सदस्यों वृद्ध, रोगी, अपंग, अनाथ सदस्यों की किसी न किसी रूप में सहायता करता आया है। सभी सभ्यताओं में ऐसे चिन्ह मिलते हैं जिनसे पता चलता है कि उस समय के निवासी, उन निवासियों के प्रति, जो बीमार, वृद्ध, अपंग, निर्धन एवं निराश्रित थे, दया की भावना रखते थे। धर्म और धार्मिक संस्थाओं के प्रारम्भ होते ही धार्मिक गुरूओं ने हर समाज में ऐसे सभी व्यक्तियों को सुरक्षा प्रदान करने में नेतृत्व प्रदान किया। धार्मिक भावनाओं, ईश्वर की कृपा प्राप्त करने की इच्छा ने सहायता और दान को प्रोत्साहन दिया। परस्पर सहायता प्रदान करने की भावना का होना ईसाई धर्म में आज्ञा के रूप में माना जाता था। इसी भावना के कारण धार्मिक संस्थाओं द्वारा मांगे गए दान में देशवासी काफी सहायता करते थे। जागीरदार प्रथा में ऐसा ही होता रहा।

1.3 1800 से पूर्व समाज कार्य का ऐतिहासिक विकास

आवश्यकताग्रस्त व्यक्तियों की सहायता करने का कार्य मानव समाज की स्थापना से ही होता आ रहा है। आदि काल से ही धर्म गुरूओं, प्रचारकों तथा अनुयायियों ने दीन दुखियों की सहायता करने का उत्तरदायित्व प्रदान किया। मानव समाज के इतिहास में प्रत्येक समाज और प्रत्येक युग में दुर्बल, निर्धन, निराश्रयी व्यक्ति रहे हैं। प्रत्येक समाज अपने कमजोर सदस्यों वृद्ध, रोगी, अपंग, अनाथ सदस्यों की किसी न किसी रूप में सहायता करता आया है। सभी सभ्यताओं में ऐसे चिन्ह मिलते हैं जिनसे पता चलता है कि उस समय के निवासी, उन निवासियों के प्रति, जो बीमार, वृद्ध, अपंग, निर्धन एवं निराश्रित थे, दया की भावना रखते थे। धर्म और धार्मिक संस्थाओं के प्रारम्भ होते ही धार्मिक गुरूओं ने हर समाज में ऐसे सभी व्यक्तियों को सुरक्षा प्रदान करने में नेतृत्व प्रदान किया। धार्मिक भावनाओं, ईश्वर की कृपा प्राप्त करने की इच्छा ने सहायता और दान को प्रोत्साहन दिया। परस्पर सहायता प्रदान करने की भावना का होना ईसाई धर्म में आज्ञा के रूप में माना जाता था। इसी भावना के कारण धार्मिक संस्थाओं द्वारा मांगे गए दान में देशवासी काफी सहायता करते थे। जागीरदार प्रथा में ऐसा ही होता रहा।

1.4 धर्म का युग

इंग्लैण्ड में भी समाज कार्य को धार्मिक भावनाओं से ही पे्ररणा मिली और धार्मिक संस्थाओं ने ही विशेष प्रकार से सहायता के कार्य का प्रलोभन दिया। प्राचीन समय के धार्मिक नेताओं ने दान वितरण के कार्य को अत्यधिक महत्व दिया। ऐसी परिस्थिति में धार्मिक भिक्षावृत्ति का अधिक प्रचलन हो जाना स्वाभाविक था क्योंकि भिक्षा द्वारा जीवन निर्वाह करना सरल था और धार्मिक भिक्षावृत्ति आदर की दृष्टि से देखी जाती थी।

यद्यपि चर्च भिक्षावृत्ति को अनुमोदन प्रदान करते थे तथापि राज्य इस विषय में चर्च से से सहमत न रह सका और इस परिस्थिति पर प्रतिबन्ध लगाने के लिए 800 ए0डी0 में विधान पास हुआ जिसके अनुसार राज्य ने भिक्षावृत्ति को निषिद्ध कर दिया और समर्थ भिखारियों को भीख देने पर दण्ड निर्धारित कर दिया। राज्य और चर्च में यह संघर्ष मध्यकाल तक चलता रहा। इस संघर्ष का परिणाम यह हुआ कि पुरानी चर्च की संस्थाओं का स्थान कुछ अंश तक चिकित्सालयों ने ग्रहण कर लिया। यह चिकित्सालय राज्यों, डयूक्स एवं लार्डस की सहायता से स्थापित किए गए और इन चिकित्सालयों में वृद्धों, रोगियों, अनाथों, गर्भवती स्त्रियों और परित्यक्त बच्चों की सहायता की जाती थी। चर्च और असांप्रदायिक अधिकारियों में संघर्ष केवल इस विषय में नहीं था कि उन्हें भिक्षा देनी चाहिए या नहीं बल्कि इस पर भी था कि चर्च की संस्थाओं का प्रबन्ध संतोषजनक नहीं है और धन का दुरूपयोग किया जाता है।

मध्यकालीन गिरजाघरों ने निर्धनों की सहायता के कार्यों का प्रशासन मुख्य पादरियों, स्थानीय पादरियों और पादरियों के नीचे तीसरे स्तर के अधिकारियों (डेकन्स) को दे दिया। ईसाई धर्म को राजकीय धर्म का स्तर प्राप्त होने के साथ-साथ मठों में निर्धनों के लिए संस्थायें स्थापित की गई जो अनाथाश्रमों, वृद्धों, रूग्ण और अपंगों के गृहों के रूप में सेवा प्रदान करने लगी और बेघरों के लिए शरण देने का कार्य करने लगी। मुख्य रूप से धार्मिक प्रचारक दान एकत्रित करने और लाचारों को सहायता प्रदान करने में संलग्न रहे परन्तु इसके फलस्वरूप भी पूरे योरोप में भिक्षावृत्ति अधिक बढ़ गई क्योंकि भिक्षा मांगना, न केवल आसान साधन था वरन् इसे समाज में मान्यता भी प्राप्त थी। भिक्षावृत्ति के इस प्रकार बढ़ जाने को राज्य ने अच्छा नहीं समझा। Charle Magne के कानून पास होने के साथ 800 राज्यों ने भिक्षावृत्ति रोकने के कार्य किये और उन नागरिकों पर जुर्माना निर्धारित किया गया जो स्वस्थ शरीर के भिखारियों को भिक्षा देगें। इस प्रकार के कानूनों का उद्देश्य दासों और ग्रामीण श्रमिकों को जागीरों पर रूकने के लिए बाध्य करना था और किसानों और यात्रियों को आवारा भिखारियों द्वारा लूटे जाने से बचाना था। आवारगी और भिक्षावृत्ति को रोकने के लिए योरोप की सरकारों ने कड़े कानून बनाये परन्तु कोई भी सरकार अवारगी और लूटमार को समाप्त करने में पूर्णरूप से सफल नहीं हो सकी।

सुधारान्दोलन (रीफारमेशन) के समय अर्थात् सोलहवीं शताब्दी में यह संघर्ष और भी अधिक हो गया। असांप्रदायिक अधिकारियों ने विभिन्न प्रकार के उपाय भिक्षावृत्ति को नियंत्रित करने के लिए किए परन्तु इसमें वे पूर्णतया सफल न हो सका।

1.5 अविवेकपूर्ण दान का युग

इंग्लैण्ड में तेरहवीं, चैदहवीं और पंद्रहवीं शताब्दियों में दान वितरण कार्य अधिकतर चर्च या उसकी अन्य संस्थाओं अर्थात् धार्मिक संस्थाओं द्वारा सम्पन्न होता था, परन्तु धीरे-धीरे राज्य की ओर से इस कार्य पर नियंत्रण एवं हस्तक्षेप होने लगा। इंग्लैण्ड में दान वितरण कार्य का विकास इस प्रकार हुआ। 14वीं शताब्दी तक निर्धनों, अपंगों, एवं अपाहिजों को भिजा देने एक पुण्य का कार्य समझा जाता था। चर्च का प्रमुख कार्य निर्धनों को दान देना तथा उनकी सहायता करना था। निर्धनों की सहायता सम्बन्धी कार्यो का उत्तरदायित्व मुख्य पादरियों, स्थानीय पादरियों और, पादरियों के नीचे के तीसरे स्तर के डेकन्स के नाम से सम्बोधित किये जाने वाले अधिकारियों के द्वारा किया जाता था। ईसाई धर्म को राज धर्म का स्तर प्राप्त होने के साथ-साथ मठों में निर्धनों के लिए संस्थायें स्थापित की गई जो अनाथो, वृद्धों रोगियों और अपंगों की बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति करती थी तथा बेघरों को शरण देती थी। इससे भिक्षावृत्ति में वृद्धि हुई जिसे राज्य ने अच्छा नही समझा। निर्धनों की सहायता के लिए ऐतिहासिक उल्लेख के अनुसार 1839 इंग्लैड तथा वेल्स की स्थापना 1,53,57,000 जनसंख्या में निर्धनों पर किया जाने वाला व्यय 44,06,907 पाउण्ड था। निर्धन सहायता पर इतना अधिक व्यय किये जाने के बावजूद भी इससे कोई भी लाभ नही होता था।

1.6 सुपात्र निर्धनों की सहायता का युग

1349 में किंग एडवर्ड 3 ने यह आदेश दिया कि शारीरिक दृष्टि से हष्ट-पुष्ट प्रत्येक व्यक्ति कोई न कोई कार्य अवश्य करे तथा वह अपने पैरिस (निवास स्थान) को छोड़े बिना किसी भी ऐसे व्यक्ति के यहाँ करें जो उसे काम देना चाहे। यह पहला प्रयास था जिसके अधीन निर्धनता के लिए स्वयं निर्धन व्यक्ति को उत्तरदायी ठहराया गया तथा शारीरिक दृष्टि से सक्षम व्यक्तियों को दान एवं भिक्षा पर निर्भर रहने के बजाये काम करने के लिए बाध्य किया गया।

जर्मनी में मार्टिन लूथर ने 1520 में भिक्षावृत्ति को समाप्त करने, भिक्षा देने पर रोक लगाने और निर्धन सहायता वकार्य के लिए साधारण कोष बनाये जाने का सुझाव दिया जिसमें धन, खाद्य-पदार्थ, वस्त्र आदि इकट्ठा किए जाने का सुझाव दिया गया। योरोप के अन्य देशों में भी इस प्रकार के विचार सामने आये जैसे-फ्रान्स, आस्ट्रिया, स्विटजरलैण्ड (ज्युरिच) आदि देशों ने भी इस प्रकार के कार्यक्रमों का विकास किया। समुदाय पर निर्धनों की सहायता का वैधानिक उत्तरदायित्व समझा जाने लगा परन्तु लाचार परिवारो की सामाजिक दशाओं में परिवर्तन लाने के लिए कुछ न किया गया। स्पैनिश दार्शनिक Juan Luis Vives (सोलहवीं शताब्दी) ने पहली बार यह मत प्रकट किया कि निर्धन व्यक्तियों की परिस्थितियों की ओर ध्यान दिया जाना चाहिए। Juan Luis Vives अपने युग का एक प्रसिद्ध वैज्ञानिक था। उन्होंने सुझाव दिया कि पूरे नगर को छोटे-छोटे भागों में बांटा जाय, प्रत्येक भाग को दो सिनेटर्स और उनकी सहायता के लिए एक मंत्री को सौंप दिया जाये जिससे वह उस क्षेत्र के प्रत्येक निर्धन परिवार की सामाजिक दशाओं की छान-बीन करें और उसे परम्परागत दान के वितरण के स्थान पर व्यावसायिक प्रशिक्षण, नौकरी और पुनर्वास द्वारा सहायता प्रदान की जाये। Juan Luis Vives के ये दूरदर्शी विचार काफी लम्बे समय तक योरोप में अभ्यास में नहीं लाये गए। परन्तु लगभग 25 वर्ष बाद टपअमे की विचारधारा को अपनाया गया और 1788 में हेम्बर्ग में Juan Luis Vives के सुझाव के अनुसार सिनेटर्स द्वारा नियुक्त की गयी ऐच्छिक समिति के माध्यम से व्यक्तिगत निर्धनों की दशाओं को छानबीन करने और सहायता प्रदान करने के लिए नगर को 60 छोटे-छोटे भागों में बांटा। प्रत्येक भाग में जन सहायता कमिश्नर की नियुक्ति की गयी। प्रत्येक भाग में लगभग बराबर संख्या में निर्धन परिवार रहते थे। हर कमिश्नर में तीन आदरणीय नागरिक रखे गये जो अवैतनिक होते थे। छानबीन के कार्य को एक केन्द्रीय मण्डल, जिसमें पांच सिनेटर्स और दस नागरिक होते थे, संचालित करता था। इस कमिश्नरों का कार्य निर्धनों से साक्षात्कार करना, उनके स्वास्थ्य, आय और नैतिकता के विषय में जानकारी लेना और प्रत्येक परिवार की व्यक्तिगत आवश्यकताओं को निर्धारित करना था। बच्चों और नवयुवकों को केन्द्रीय अनाथालयों से सम्बन्धित औद्योगिक विद्यालयों द्वारा मौलिक पाठ्यक्रमों में प्रशिक्षण देने की व्यवस्था की गयी। इसी प्रकार योरोप के कई नगरों में इस प्रकार के कार्यक्रम चलाये गये।

फ्रांस में Father Vincent de Paul ने महत्वपूर्ण कार्य किया। उन्होंने धनी परिवारों की महिलाओं को प्रोत्साहित करके निर्धनों की सहायता के लिए "Ladies of Chairty" नामक संगठन का गठन किया। इस संगठन की सदस्या निर्धन परिवारों में खाद्य पदार्थ और वस्त्रों का वितरण करती थी। इसी प्रकार किसान वर्ग की युवा महिलाओं को लेकर Daughter of Charity नाम के संगठन की स्थापना की गई। यह युवा महिलाएं निर्धनों की सेवा करती थी और यही समाज कार्यकर्ताओं की अगुवाई बनीं। Father Vincent से प्रभावित होकर न केवल फ्रांस में ही बल्कि बहुत से दूसरे देशों में भी सहायता कार्यक्रमों को एक नया मोड़ दिया।

1525 में उल्रिच ज्विन्गली ने इसी प्रकार की अपील स्विटजरलैंड में की। 17वीं शताब्दी में फ्राँस में फादर विन्सेन्ट द पाल ने अनेक प्रकार के सुधार किये। चान्सलर बिस्मार्क ने 18वीं शताब्दी में जर्मनी में अनेक प्रकार के सुधार सम्बन्धी कार्यक्रम चलाये। इन सभी सुधारों के परिणाम स्वरूप समाज कार्य के विकास के लिए उचित भूमि तैयार हुई।

1.7 राज्य हस्तक्षेप का युग

सुपात्र निर्धनों की सहायता के पश्चात् सहायता प्रदान करने का अधिकार राज्य द्वारा किया जाने लगा। लगभग 150 वर्षों तक चली आ रही निर्धनों की सहायता करने की परम्परा के बाद राज्य की ओर से हेनरी अष्टम् ने 1531 में नए कानून की घोषणा की। हेनरी अष्टम का 1531 का यह पहला कानून था जिसे निर्धन सहायता के लिए सरकार

का रचनात्मक कार्य कहा जा सकता है। इस कानून से यह प्रबन्ध किया गया कि नगर प्रमुख और शान्ति के न्यायाधीश कार्य करने में असमर्थ उन वृद्धों और निर्धनों जिनकी देखभाल गांव करता था के प्रार्थना पत्रों के सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी प्राप्त करेंगे और ऐसे व्यक्तियों का निबन्धन करेंगे। उन्हे एक निर्धारित क्षेत्र में भिक्षा मांगने के लिए लाइसेंस दिया जायेगा। स्वस्थ शरीर बेरोजगार व्यक्तियों द्वारा भिक्षा मांगने पर नियंत्रण करने के लिए उन नागरिकों पर दंड लगाए जाने की व्यवस्था की गई जो ऐसे भिखारियों को नगद रूपये या रहने का स्थान देंगे। इस कानून की घोषणा इस बात का प्रतीक है कि पहली बार राज्य ने निर्धनों की समस्या को मान्यता दी और उनकी सहायता को उत्तरदायित्व को स्वीकार किया। इस कानून की घोषणा से इंग्लैण्ड के निर्धन सहायता कार्य की सम्पूर्ण प्रणाली में मूल परिवर्तन आ गये। निर्धनों की सहायता के लिए कोई अन्य साधन जुटाना भी आवश्यक हो गया। हेनरी जन्म स्थान पर जाकर मजदूरी करने की भी व्यवस्था की गयी। हेनरी के द्वारा चर्च की सम्पत्ति के जब्त किये जाने के कारण यह आवष्यक हो गया है कि निर्धनों की दूसरे तरीकों से सहायता की जाये।

1532 में कारीगरों के कानून के अधीन मजदूरी और काम करने का समय निष्चित किया गया तथा बेकार घूमने वाले तथा आवारों को कठिन काम करने के लिए बाध्य किया गया। 1536 में ही पहली बार इंग्लैण्ड की सरकार के तात्वाधान में निर्धनों की सहायता के लिए एक योजना बनायी गयी जिसके अधीन ऐसे निर्धनों के जो 3 वर्ष से काउन्टी में रह रहे हो, उनकी पैरिसों में पंजीकरण की व्यवस्था की गई। चर्चो द्वारा पैरिस के निवासियों से एकत्रित किये गये स्वेच्छापूर्ण दान से पैरिसों में पाये जाने वाले असमर्थ निर्धनों के पालन-पोषण के लिए धन की व्यवस्था से की गयी। ह्रष्ट-पुष्ट भिक्षुकों को काम करने के लिए बाध्य किया गया और 5 से 14 वर्ष की आयु के बीच के निकम्मे बच्चों को उनके माता-पिता से लेकर प्रषिक्षण के लिए मस्टरों को दिया गया। निर्धनों के निरक्षकों को नया कानून लागू करने हेतु नियुक्ति किया।

इसी दौरान दातव्य उपयोगों का कानून बनाया गया जिसके अधीन सभी प्रकार के दोनों को एक वर्ग के अन्तर्गत पारिभाषित किया गया। इसके अन्तर्गत बन्धकों की मुक्ति, अकिंचनों की सहायता, शिक्षा के प्रावधान तथा अनाथों की देखभाल एवं प्रषिक्षण जैसे मसलों को सम्मिलित किया गया।

इन समस्याओं का समाधान करने के लिए 1536 में एक नया कानून बनाया गया। इस कानून से इंग्लैण्ड में सरकार की ओर से जन सहायता की पहली योजना की स्थापना हुई। इस कानून के अन्तर्गतः

1. स्थानीय अधिकारी, जिसमें चर्च अधिकारी भी सम्मिलित हैं, चर्च के माध्यम से धन इकट्ठा करेंगे, जो निर्धन, दुर्बल, लंगड़े, रोगी व्यक्तियों की सहायता के लिए प्रयोग में लाया जायेगा, जिससे भिक्षावृत्ति को कम किया जा सके।

2. न्यायाधीश और अन्य स्थानीय अधिकारियों को 5 वर्ष से 14 वर्ष की आयु के बच्चों को यदि, वह भीख मांगते पाये गये, उनके माता-पिता से लेकर अन्य नागरिकों को सौन देने का अधिकार दिया गया जिससे उन्हें अजीविका कमाने के लिए प्रशिक्षण दिया जा सके।

3. हुष्ट-पुष्ट आवारा और बहादुर भिखारियों को कोड़े लगाए जाएंगे और यदि वे बार-बार घूमते पाये जायें तो उनके हाथ पैर काट दिए जायेंगे।

4. निर्धनों का उनके ही गांव/पैरिश मे निबन्धन किया जाएगा यदि वह उस गांव/पैरिश में 3 वर्ष या इससे अधिक समय तक रह चुके हों।

5. गांव/पैरिश को अपने दुर्बल निर्धनों को गांव वाली से चर्च के माध्यम से इकट्ठे किए गए ऐच्छिक चन्दों से सहारा देना होगा।

यद्यपि यह कानून कठोर था परन्तु सोलहवीं शताब्दी में इस कानून से निर्धन सहायता कार्य जो चर्च द्वारा अनियमित ढंग से किया जा रहा था सरकार द्वारा एक नियमित ढंग से किया जाना आरम्भ हुआ।

1563 में पार्लियामेन्ट को निर्धन सहायता कार्यों को चलाने के लिए नये कदम उठाने पड़े। एक कानून से प्रत्येक परिवार के मुखिया को बाध्य किया गया कि उसे अपनी आय और सम्पत्ति के आधार पर साप्ताहिक चन्दा देना होगा। यह स्वीकार कर लिया गया कि निर्धनों की सहायता का उत्तरदायित्व सरकार पर है।

जैसे-जैसे समय व्यतीत होता गया सहायता वितरण के कार्य में राज्य एवं असाम्प्रदायिक अधिकारियों ने अधिक से अधिक भाग लेना आरम्भ किया। इंग्लैण्ड में पहली बार राजकीय साधनों का प्रयोग सहायता वितरण के वलिए उस समय हुआ जब 1572 में एलीजबेथ ने सामान्य कर लगाया जिससे निर्धनों की सहायता के लिए कोष इकट्ठा किया जाये और निर्धनों के लिए निरीक्षक नियुक्त किए जायें जो नए विधान को चलाने का कार्य करें। इस प्रकार सोलहवीं शताब्दी में पहली बार इस सिद्धान्त की स्वीकृति हुई कि निर्धनों की सहायता का उत्तरदायित्व राज्य पर है।

1576 में सुधारगृह स्थापित किये गये जिनमें पटसन, पटुआ, लोहा एकत्रित किया जाता था और स्वस्थ शरीर वाले निर्धनों, विषेष रूप से युवकों को कार्य करने के लिए बाध्य किया जाता था। 1576 में क्षेत्रीय न्यायाधीशों को यह अधिकार भी दे दिया गया कि वह सुधार गृहों के प्रयोग के लिए किसी भी मकान को खरीद सकतें हैं या किराये पर ले सकते हैं। इन सुधार गृहों को ऐसे पदार्थ दिये गये जिनसे बेरोजगार स्वस्थ शरीर वाले व्यक्तियों से जबरदस्ती कार्य कराया जा सके और उनमें कार्य करने की योग्यता उत्पन्न हो सके और सहायता कार्यों की आवश्यकता को कम किया जा सके।

1597 के कानून से शान्ति के न्यायाधीशों को यह अधिकार दिया गया कि वह चर्च वार्डेन और चार धनी परिवारों के प्रमुख मुखिया नियुक्त करेंगे। ऐसे व्यक्तियों के लिए, जो दुर्बल, अपंग, वृद्ध, अन्धे, लंगड़े और कार्य करने में असमर्थ हों, भिक्षागृह की स्थापना की जायेगी और बच्चों और माता-पिता को एक दूसरे की सहायता करने के लिए बाध्य कर दिया गया।

इंग्लैण्ड के इन प्रारम्भिक सहायता कार्यों पर टिप्पणी करते हुए कार्ल दि स्कीनिज ने 1943 में कहा कि हेनरी अष्टम से लेकर एलिजाबेथ तक पास किये गये कानूनों से एक सिद्धान्त और एक परम्परा की स्थापना होती है जिसके अन्तर्गत स्थानीय नागरिकों को सहायता के लिए स्थानीय रूप से धन जमा करने और स्थानीय स्तर पर सहायता कार्य के प्रशासन की पद्धति का निर्माण हुआ। इसमें निर्धनों के ओवरसियर सम्मानित अधिकारी माने गये और जन सहायता की एक पद्धति का निर्माण हुआ जिसमें कार्य करने में असमर्थ व्यक्ति को अनुदान और स्वस्थ शरीर वाले व्यक्तियों से जबरदस्ती कार्य करवाये जाने की व्यवस्था रखी गई। 200 वर्षों तक निर्धनता को कठोर कानूनों से नियंत्रित करने के बाद सरकार ने यह पहचाना कि निर्धनों की सहायता का उत्तरदायित्व सरकार पर है। 1349 से लेकर 1601 तक जो अनुभव हुए उनमें इंग्लैण्ड के शासन यह बात मान गये कि निर्धनों में लाचारी और हीनता विद्यमान है और इसे दण्ड देकर दूर नहीं किया जा सकता और व्यक्तिगत आवश्यकताओं को राज्य के साधनों का प्रयोग करके ही पूरा किया जा सकता है।

1.8 एलिजाबेथ निर्धन अधिनियम

सन् 1558 में क्वीन एलिजाबेथ ने राज्य की बागडोर अपने हाथ में ली। सन् 1558 से पूर्व 1563, 1572 और 1576 में निर्धन सम्बन्धी कानून बनाये जो कर और जबरन चन्दे वसूलने, आवारा घूमने वालों को जबरदस्ती कार्य

पर लगाने, कार्य करने के इच्छुक व्यक्तियों को काम देने, भिक्षा गृहों और सुधार गृहों के निर्माण सम्बन्धी थे। इनके शासन के अन्तिम वर्षों में इन सभी कानूनों को 39 एलिजाबेथ 1597 और 43 एलिजाबेथ 1601 के रूप में एक सूत्र में बांध दिया गया। यह कानून Elizabethan Poor Law या The Poor Law of 1601 के नाम से प्रसिद्ध है। इस नये कानून में पिता अथवा पितामह के निर्वाह का उत्तरदायित्व उनकी सन्तान पर ठहराया गया। इस कानून ने उन निर्धनों की देख-रेख का उत्तरदायित्व, जिसके सम्बन्धी सहायता न दे रहे हों, गांव स्थानीय समुदाय पर माना। गांव या पैरिश को यह सहायता केवल उन्हीं निर्धन व्यक्तियों की करनी होगी जिन्होंने गांव ही में जन्म लिया हो या गांव में कम से कम 3 वर्ष से रहते आये हों। इस कानून के प्रमुख प्रावधान निम्नलिखित हैः-

1. किसी भी ऐसे व्यक्ति का पंजीकरण न किया जाये जिसके सम्बन्धी, पति अथवा पत्नी, पिता अथवा पुत्र सहायता कर सकने की स्थिति में हों।

2. निर्धन कानून के अन्तर्गत 3 प्रकार के निर्धनों को सहायता प्रदान करने की व्यवस्था की गई हैः-

(क) स्वस्थ शरीर वाले निर्धनः- स्वस्थ शरीर वाले निर्धनों एवं भिक्षकों को सुधारगृहों अथवा कार्यग्रहों में कार्य करने के लिए बाध्य किया गया। नागरिकों को इस बात का आदेश दिया गया कि वे स्वस्थ शरीर वाले भिक्षकों को भिक्षा न दें। दूसरे गाँवों से आये हुए निर्धनों को उन्हीं स्थानों पर भेजने की व्यवस्था की गई जहाँ वे पिछले एक वर्षो से रह रहे थे। ऐसे स्वस्थ शरीर वाले भिक्षकों अथावा आवारों को जो सुधार गृह में कार्य करने से मना करे, जेल में डाल दिया जाये और उनके गले तथा पैरों में बंधन डाल दिये जाये।

(ख) शक्तिहीन निर्धनः- कार्य करने में असमर्थ रोगियों, वृद्धों, अंधों, गूंगो, बहरों, बच्चों और अल्प आयु के षिषुओं वाली माताओं को इस श्रेणी में सम्मिलित किया गया। इनके पास अपना निवास स्थान होने की स्थिति में उन्हें उनके घरों में ही रखकर निर्धनों के ओवरसियरों द्वारा खाना, कपड़ा, ईधन इत्यादि के रूप में बाह्रय सहायता प्रदान करने की व्यवस्था की गई। आवास विहिन होने की स्थिति में उन्हें सुधारगृहों में रखे जाने की सुविधा थी।

(ग) आश्रित बच्चेः- अनाथ माता-पिता द्वारा परित्यक्त, निर्धनों माता-पिता अथवा पितामह के बच्चों को इस श्रेणी के अन्तर्गत सम्मिलित किया गया। इन्हें ऐसे नागरिकों के पास रखे जाने की व्यवस्था की गयी जो सरकार के उनके पालन-पोषण के लिए कम से कम पैसे की माँग करें। 8 वर्ष या इससे अधिक आयु के ऐसे बच्चों को जो कुछ घरेलु अथवा अन्य काम कर सकते थे, किसी नागरिक के साथ बंधक करते हुए दिया जाता था। ऐसे बच्चे मालिकों का घरेलु व्यवसाय सीखते थे और 24 वर्ष की आयु तक मालिकों के साथ रहते थ। लड़कियों को घर की नौकरानी के रूप में रखा जाता था और उन्हें 21 वर्ष की आयु अथवा विवाह होने तक मालिकों के घर में रहना पड़ता था।

1. यदि बच्चे अपने निर्धन माता-पिता या सम्बन्धियों के साथ रह सके तो उन्हें उत्पादन के लिए आवश्यक ऐसी वस्तुएँ प्रदान की जायें जिनसे वे घरेलु उद्योग चला सकें। ऐसा सम्भव न होने की स्थिति में इन बच्चों को निर्धन गृहों में रखा जाये।

2. निर्धनों के ओवरसियरों को इन कानून को लागू करने तथा इसका प्रशासन करने का उत्तरदायित्व सौंपा गया था। इन ओवरसियरों की नियुक्ति शान्ति न्यायाधीशों या मजिस्टेªटों द्वारा की जाती थी। ये ओवरसियर निर्धनों से प्रार्थनापत्र लेते थे, उनकी सामाजिक दशाओं का पता लगाते थे और समुचित सहायता प्रदान करने के सम्बन्ध में आवश्यक निर्धन लेते थे।

3. निर्धन सहायता हेतु वित्तीय व्यवस्था करने के लिए निध्रन कर लगाकर कर कोष स्थापित किया गया था जिसमें निजी दान, कानून का उल्लंघन करने पर किये गये जुर्माने इत्यादि से प्राप्त धनराशि जमा की जाती थी।

इस प्रकार 1601 का यह निर्धन कानून इंग्लैण्ड को 300 वर्षो तक जन सहायता के क्षेत्र में अपेक्षित मानदण्ड निर्धारित करते हुए निर्धनों को सहायता प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता रहा।

1662 में एक बस्ती कानून बनाया गया जिसके अधीन शान्ति के न्यायाधिशों का यह अधिकार प्रदान किया गया कि वे ऐसे किसी भी नवागन्तुक को उसके पुराने निवास स्थान पर वापस भेज सकते थे। जो निर्धनों के ओवरसियरों के मत में भविष्य में इस समुदाय के लिए एक बोझ बन सकता था।

1696 में कार्य गृह कानून के बन जाने के बाद ब्रिस्टल तथा अन्य शहरों में कार्य गृहों की स्थापना की गई जिनमें वहाँ निर्धनों प्रौढ़ों एवं बच्चे को कताई-बुनाई इत्यादि के प्रषिक्षण अवसर प्रदान किये गये।

1722 में ओवरसियरों को इस बात का अधिकार प्रदान किया गया कि वे ऐसे उत्पादन कर्ताओं के साथ अनुबंध करे जो निर्धनों को सेवायोजित करने को तैयार हो।

1782 में बनाये गये निर्धन कानून संषोधन अधिनियम जिसे गिलबर्ट कानून के नाम से भी जाना जाता है, के अधीन कार्यगृहों की ठेकेदारी व्यवस्था का उन्मूलन कर दिया गया, अवैतनिक निर्धनों के ओवरसियरों के स्थान पर वैतनिक निर्धनों के संरक्षकों की नियुक्ति की गयी तथा तब तक घर पर ही सहायता प्रदान करने की व्यवस्था की गयी जब तक कि निर्धन सहायता प्राप्त करने वाले व्यक्ति को सेवा योजन न प्रदान किया जाये।

1795 मे स्पीन्हमलैण्ड कानून की घोषणा की गई जिसके अधीन एक सार्वभौमिक कार्य सारिणी अथवा अजिविका मापक्रम का विकास किया गया ताकि श्रमिकों की मजदूरी का पूरण किया जा सकें और कम कम मजदूरी की पूर्ति के लिए श्रमिकों के परिवार के आधार को ध्यान में रखते हुए अपेक्षित सहायता निर्धनों को घर पर ही पहँुचायी जा सके।

प्रजातंत्र एवं मानवता के विकास के साथ-साथ निर्धन सम्बन्धी विधान की प्रणालियों का विरोध स्वाभाविक था। उन्नीसवीं शताब्दी में यह विरोध दो प्रकार से प्रकट हुआ।

1. निर्धन विधान को परिवर्तित करने का प्रयास किया गया और परापकारिता को राज्य के हाथ से लेने की चेष्टा की गई।

2. निराश्रितों के निरोध के लिए आर्थिक, शैक्षिक एवं भेषजिक संस्थाओं के ढांचे एवं कार्यात्मकता में उन्नति करने का प्रयास किया गया।

दूसरे प्रयास के फलस्वरूप कारखाना विधान, वृद्धावस्था पेन्शन की मांग, निःशुल्क शिक्षा एवं भैषजिक सेवाओं में उन्नति हुई। पहले प्रयास में समाज कार्य उत्पन्न हुआ।

1.9 सारांश

सारांश के रूप में इंग्लैण्ड में समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास के प्रारम्भिक चरणों के विषय में बताया गया है। इंग्लैण्ड में समाज कार्य का आरम्भ धार्मिक कार्यों से हुआ तथा उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त तक सहायता प्रदान करने की परम्परा का उत्तरदायित्व व्यक्तिगत के स्थान पर राज्य द्वारा किया जाने लगा।

1.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

(1) इंग्लैण्ड में समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास के प्रारम्भिक चरणों का उल्लेख कीजिए।

(2) एलिजाबेथ निर्धन कानून के उद्देश्यों को स्पष्ट कीजिए।

(3) इंग्लैण्ड के समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास के प्रारम्भिक चरण में राज्य के द्वारा किये गये हस्तक्षेपों को स्पष्ट कीजिए।

(4) समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास में चर्च की भूमिका का उल्लेख कीजिए।

(5) निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

(अ) हेनरी अष्टम्

(ब) एडवर्ड तृतीय

(स) क्वीन एलिजाबेथ

(द) सुपात्र निर्धनों की सहायता

1.11 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. Friedlander, A.W.: Indtrodution of Social Welfare, Prentice Hall, INC. New York. 1995.
2. Thomas P.T.: Profession Traning in Social Work, in Sugata Das Gupta (ed) "Towards in philosophy of Social work in India Popular Books Services, New Delhi, 1967.
3. Ahamad, Mirza Raffiuddin, Samaj Kayra : Darshan evam Pranaliyan, Repid Books Services, Lucknow, 1969.
4. Mishra, P.D. Social Work Profession in India, New Royal Book Co., Lucknow, 2004.
5. Sudan K.S., Samaj Karya : Siddant evam Abhyas, N.S. Publications Lucknow, 2011.
6. Mishra, P.D., Samaj Karya : Itihas, Darshan evam Pranaliyan, New Royal Book Co. Lucknow, 2004.
7. Singh, D.K., and Bhartiya, A.K., Social Work : Philosophy and Methods, New Royal Book Co. Lucknow, 2009.
8. Shastri R.R., Social Work Tradition in India, Welfare Forum and Research Organization, Varanasi , 1986.
9. Dinitto, D.M. and Mcneece, C.A. Social Work Issues and Opportunities : In a Challenging Profession, LYCEUM Books INC, Chicago, 2008.
10. O.Hare, Thomas, Essential Skills of Social Work Practics: Assesment Intervetion Evaluation LYCEUM Books INC, Chicago, 2009.
11. Adams, R.; Dominelli, L. and Payne, M.; Social Work : Themes, Issues and Critical Debates, Second edition (ed), Palgrave, New York, 1998.
12. Clark, S. Social Work as Community Development: A Management Model for Social Change, Second Eddition (ed), Ashgate Publishing Ltd., England, 2000.
13. Colby, Ira and Dziegielewski, S., Introdution to Social Work: The People's Profession , Second Eddition (ed) LYCEUM Books INC, Chicago, 2004.
14. Srivastava S.P. "Addressing the future of Social Work in India" Social Work Education in India (ed) by S.Signh and S. Swaminathan New Royal Books Co. 2003.
15. Singh, Surendra, : Future Chellanges before Social Work Proffesion in India and reuired response, contemporary Social Work Volume 12 October 1995.

इंग्लैण्ड में समाज कार्य का ऐतिहासिक विकास

(1800 से 1900 तक)

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 भूमिका

2.3 1800 से 1900 तक समाज कार्य का ऐतिहासिक विकास

2.4 टॉमस चार्मस का दृष्टिकोण

2.5 समन्वय एवं नियंत्रण का युग

2.6 दातव्य संगठन समिति

2.7 कैनन बारनेट का दृष्टिकोण

2.8 दातव्य संगठन समिति की असफलता

2.9 सारांश

2.10 अभ्यास प्रश्न

2.11 सन्दर्भ ग्रन्थ

2.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात आप –

1.सन् 1800 से 1900 के मध्य इंग्लैण्ड में समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास को जान सकेंगे।

2. इस काल में इंग्लैण्ड में समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास की आधारशिला रखने में टॉमस चार्मस, कैनन बारनेट इत्यादि विद्धानों की महत्वपूर्ण भूमिका को समझ सकेंगे।

2.1 प्रस्तावना

सन् 1800 से पूर्व इंग्लैण्ड में लोगों की सहायता करने का उत्तरदायित्व जहां धार्मिक भावना से प्रेरित था वहीं उन्नीसवीं शताब्दी में सहायता का उत्तरदायित्व राज्य के द्वारा किया जाने लगा तथा कई प्रकार की सीमाओं का निर्माण किया गया। जिससे कि आवश्यकताग्रस्त लोगों की सहायता की जा सके। इस काल में विभिन्न विद्धानों ने समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास को आगे की ओर ले जाने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया।

2.2 भूमिका

सत्रहवीं और अठारवीं शताब्दियों में इंग्लैण्ड के बन्दियों की दशा बड़ी असन्तोषजनक थी। उनके आवास एवं भोजन और वस्त्र का उचित प्रबन्ध न था। पुरूषों और स्त्रियों को पृथक स्थान पर रखने का कोई प्रबन्ध न था। जौन हावर्ड और इलीजबेथ फ्राई ने कारगारों को भोजन एवं वस्त्र सम्बन्धी दशाओं को सुधारने का प्रयास किया। परन्तु उन्हें इसमें पूर्ण सफलता न प्राप्त हो सकी।

2.3 1800 से 1900 तक समाज कार्य का ऐतिहासिक विकास

समाज कार्य का उन्नीसवीं शताब्दी तक का इतिहास बताता है कि सहायता की एक योजना जब असफल हो जाती थी तो दूसरी उसके स्थान पर चलाई जाती थी और इस प्रकार परीक्षण होते रहते थे। उन्नीसवीं शताब्दी में भी अविवेक पूर्णदान का सिलसिला जारी था। निजी दान-संस्थाएं न्यून पारिश्रमिक के अभाव को कम करने के लिए सहायता देती थी। दण्डात्मक कार्यशालाएं जिनमें स्त्रियां और पुरूष एक साथ रहते थे, अभी भी चल रही थी। घरों पर दी जाने वाली सहायता भी अपनी अपर्याप्त मात्रा में चल रही थी। वह सभी प्रणालियां पृथक-पृथक और संयुक्त रूप दोनों ही प्रकार से असफल थी।

उन्नीसवीं शताब्दी का मध्य एक ऐसा समय था जबकि मानवता एवं प्रजातांत्रिक आदर्शों का मिलाप दृढ़ व्यक्तिवाद से हुआ जिसका अर्थ था धनवानों की अच्छाई और बुद्धिमता और विज्ञान एवं व्यापारिक प्रबन्ध में विश्वास। उस समय दरिद्रता एवं निराश्रिता को अपमान समझा जाता था और इसी कारण समाज का ध्यान निर्धनता के कारणों की ओर आकर्षित हुआ।

2.4 टॉमस चार्मस का दृष्टिकोण

उस समय की दान पद्धति के एक महान आलोचक टामस चामर्स (1780-1847) थे। उनका विचार था कि प्रचलित सार्वजनिक एवं चर्च की दान पद्धति निरर्थक है। उससे निर्धन व्यक्ति अनैतिक हो जाते हैं और उनकी आत्मावलम्बन की इच्छा नष्ट हो जाती है। उनका विचार था कि इस प्रकार का दान निर्धनों के सम्बन्धियों, मित्रों और पड़ोसियों की सहायता करने की इच्छा को नष्ट कर देता है और इससे परोपकारी पड़ोसियों की सहायता करने की इच्छा को नष्ट कर देता है और इससे परोपकारी व्यक्तियों की सहायता करने की उत्सुकता का प्रयोग नहीं हो पाता।

उन्होंने निम्नलिखित प्रक्रम का सुझाव दियाः

1. दरिद्रता की प्रत्येक घटना की सावधानी से जांच की जाय, यह ज्ञात किया जाय कि निराश्रिता का क्या कारण है और निर्धनों को आत्मावलम्बन की संभावना को विकसित किया जाय।
2. यदि स्वावलम्बन संभव न हो तो सम्बन्धियों, मित्रों , तथा पड़ोसियों को उत्साहित किया जाये वे अनाथों, वृद्धों, रोगियों तथा असमर्थों को आश्रय दें।
3. यदि परिवार की आवश्यकताएं इस प्रकार पूरी न हो तो कुछ ऐसे धनी नागरिक ढूंढ़े जाएं जो उनका भरण-पोषण कर सके।
4. यदि इनमें से कोई उपाय सफल न हो तो तभी जिले का डीकन अपनी धार्मिक परिषद से सहायता की प्रार्थना करे।

चार्मस की वैयक्तिक एवं पादरी प्रादेशिक दान की अवधारणा दान के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण योगदान थी। उन्होंने प्रत्येक घटना में वैयक्तिक आधार पर जांच करने और दरिद्रता के कारणों को ज्ञात करने का प्रयत्न करने के सिद्धान्त को विकसित किया। उनके विचार में निर्धनता का कारण व्यक्ति की अज्ञानता एवं दूरदर्शिता का अभाव था। उन्होंने उन सामाजिक तथा आर्थिक कारणों की अवहेलना की जो व्यक्ति की शक्ति से बाहर होते हैं। फिर भी उनकी यह धारणा थी कि निराश्रितों के कल्याण पर वैयक्तिक रूप से ध्यान देना चाहिए सहायता के कार्य की उन्नति में सहायक हुई। चामर्स के देहान्त के पश्चात् कुछ समय तक उनकी योजना कार्यान्वित न हो सकी परन्तु 1869 में लन्दन चैरिटी ऑर्गनाईजेशन सोसाइटी उन्हीं के विचारों के आधार पर स्थापित हुई।

2.5 समन्वय एवं नियंत्रण का युग

1802 में हेल्थ ऐन्ड मारल्स ऐक्ट पास हुआ और 1833 में फैक्टरी ऐक्ट बना। इन विधानों द्वारा औद्योगिक निर्माणशालाओं में कार्य करने वाले श्रमिकों की दशा में सुधार हुआ।

1832 में निर्धन कानून के प्रषासन एवं व्यावहारिक कार्यान्वयन की जाँच करने के लिए शाही आयोग की नियुक्ति की गई। इस आयोग के सचिव एडविन चाडविक थे। इस आयोग ने कहा कि निर्धन सहायता बच्चों एवं स्वस्थ शरीर वाले व्यक्तियों में आवारपन एवं भिक्षावृत्ति को प्रोत्साहित करती है। इस आयोग ने निम्नलिखित संस्तुतियाँ की:-

(क) स्पीन्हमलैण्ड विधि से प्रदान की जाने वाली आंषिक सहायता का उन्मूलन किया जाए।

(ख) सहायता प्राप्त करने की इच्छा रखने वाले सभी अभ्यार्थियों को कार्यगृहो ं में रखा जाए।

(ग) केवल रोगियों वृद्धों, अषक्तों एवं नवजात वाली विधवाओं को ही बाहरी सहायता प्रदान की जाये।

(घ) विभिन्न पैरिसों में सहायता सम्बन्धी कार्यो को मिलाकर एक निर्धन कानून संघ का संगठन किया जाये।

(ड.) निर्धन सहायता प्राप्त करने वालों के स्तर को समुदाय में कार्य करने वाले व्यक्तियों के स्तर से नीचे रखा जाये अर्थात् ''कम पात्रता'' के सिद्धान्त को लागू करते हुए सहायता पाने वाले व्यक्तियों को कार्य करने वाले व्यक्तियों की स्थिति से नीचे रखा जाये, तथा

(च) नियंत्रण स्थापित करने के लिए एक केन्द्रीय परिषद की स्थापना की जाये।

2.6 दातव्य संगठन समिति (charity organization society)

1832 में निर्धन कानून की संस्तुतियों के आधार पर 1834 में नया निर्धन कानून बनाया गया जिसके अधीन शारीरिक दृष्टि से स्वच्छ व्यक्तियों को कार्यषालाओं में रखने, संरक्षक परिषद द्वारा प्रसारित निर्धन कानेन संघों का निर्माण करने तथा निर्धन सहायता के क्षेत्र में एकरूपतापूर्ण नीति का निर्धारण करने हेतु एक स्थायी शाही निर्धन कानून आयोग के बनाये जाने का प्रावधान किया गया। इस नये कानून ने आयोग की सभी संस्तुतियों को लागू करने पर बल दिया। 1834 के पुअर ला रिफार्म ने निर्धन सहायता पर होने वाले व्यय को कम किया और एक अधिक उपयोग सहायता प्रशासन संगठित किया परन्तु मिल मालिकों और औद्योगिक श्रमिकों के बीच आर्थिक खाई को यह अधिनियम कम न कर सका। देश के परोपकारी व्यक्ति मिश्रित भिक्षा गृहों की क्रूरता एवं हीनता से अपने जानने वाले एवं अन्य व्यक्तियों, बच्चों और अपंगों को बचाने के लिए प्रयास करने लगे। बहुत सी दानार्थ समितियां बन गयी। परन्तु इनकी कड़ी आलोचना होने लगी क्योंकि इन पर यह आरोप लगाया गया कि यह

अधिक धन नष्ट करती हैं, अपने दान एवं उपहारों से व्यक्तियों में भिक्षावृत्ति बढ़ती है और निर्धनों को अपने पैरों पर खुद खड़ा होने से रोकती हैं।

उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्व इंग्लैण्ड में सभी चर्च और 100 दान समितियं दान वितरण का कार्य करती थीं। इन समितियों में परस्पर सहयोग न होने के कारण सायता के कार्य में द्वितीयवृत्ति होती थी और धन अधिक मात्रा में क्षय होता था। इसके अतिरिक्त निर्धनों की आत्मावलम्बन की प्रेरणा भी नष्ट हो जाती थी। दान समितियों में परस्पर सहयोग के इस अभाव को दूर करने के लिए रेवेंरेंड हेनरी सौली ने 1868 में यह सुझाव दिया कि एक परिषद बनाई जाये जो निजी और सार्वजनिक समितियों में सहयोग स्थापित करें।

इस संस्था ने टामस चाल्स के इस विचार को स्वीकृत किया कि प्रत्येक व्यक्ति अपनी निर्धनता का उत्तरदायी है और सार्वजनिक दान लेने से निर्धनों का आत्म सम्मान नष्ट हो जाता है और वे दान पर निर्भर करने लग जाते हैं। दसने चाल्स के इस विचार को भी स्वीकृत किया कि निर्धनों को अपने भरण-पोषण के लिए अपनी समस्त योग्यताओं का प्रयोग करना चाहिए।

इस संस्था के प्रमुख विचार यह थे कि दान देना बन्द कर देना चाहिए, सहायता के कार्य में सहयोग होने चाहिए, और सहायता के प्रत्येक प्रार्थी की जांच होनी चाहिए कि उसे आत्म निर्भर होने के लिए किन वस्तुओं की या किस बात की आवश्यकता है। दान संगठन समितियों का कार्य प्रार्थियों से साक्षात्कार करना, उनके सामाजिक असामथ्र्य की चिकित्सा की योजना बनाना और जो संस्थाएं पहले ही से विद्यमान थीं उनसे धन प्राप्त करना था। समाज कार्य के ऐतिहासिकों का विचार है कि समाज कार्य की संगठित क्रियाओं की वर्तमान पद्धति की उत्पत्ति चैरिटी आर्गनाइजेशन सोसाइटी की इसी योजना से हुई।

इस आन्दोलन का यह उद्देश्य था कि अविवेकपूर्ण दान बन्द कर दिया जाये, बिना जांच को सहायता न मिले, दो या इससे अधिक संस्थाएं जान बूझकर एक ही व्यक्ति की एक ही समय सहायता न करें और सार्वजनिक सहायता के साथ-साथ निजी चंदे न दिए जाएं जिससे निराश्रितों का उत्तरदायित्व निश्चित रूप से स्थिर किया जा सके।

इस योजना को कार्यान्वित करने के लिए चैरिटी आर्गनाइजेशन सोसाइटी की क्षेत्रीय समितियां बना दी गई। यह समितियां स्वयं सहायता का कार्य प्रत्यक्ष रूप से न करती थी बल्कि प्रार्थियों एवं सहायता देने वाली संस्थाओं के बीच सम्बन्ध करती थीं कि सहायता की आवश्यकता है या नहीं और यह कि किस प्रकार कीसहायता की आवश्यकता है। इससे स्पष्ट हो जाता है कि चैरिटी आर्गनाइजेशन सोसाइटी की इस योजना में हमें वैयक्तिक कार्य (केसवर्क) और सामूहिक कार्य (ग्रूप वर्क) दोनों ही की झलक मिलती है।

इस प्रकार दान संगठन समितियां प्रार्थियों एवं कल्याणकारी संस्थाओं दोनों ही के लिए समाज कार्य सम्बन्धी सेवा प्रदान करती थी। प्रार्थियों को इस बात में सहायता दी जाती थी कि वे वर्तमान सहायता का उच्चतर रूप से प्रयोग कर सकें जिससे उनके चरित्र पर उसका बुरा प्रभाव न पड़े। कल्याणकारी संस्थाओं की यह सहायता की जाती थी कि वे निराश्रिता सहायता का कार्य उच्चतर रूप से सम्पन्न कर सकें और दरिद्रता का भय को दूर करने के लिए दमनात्मक एवं रोधक उपायों की आवश्यकता न हो।

दान संगठन समिति की योजना का एक और पक्ष यह था कि प्रार्थी की सहायता की जाती थी कि वह समाज के आर्थिक संगठन में अपना पुनः स्थापना कर सके। इसका उद्देश्य यह होता था कि प्रार्थी समाज में अपना सामान्य स्थान ग्रहण कर सके। परन्तु दान संगठन समिति के नेताओं ने यह स्पष्ट नहीं किया कि कल्याणकारी संस्थाओं की सेवाओं का प्रयोग करने में सहायता करने और प्रार्थियों को समाज में पुनः स्थापित करने में क्या

अन्तर है। वास्तव में एक ओर तो वे दान की आवश्यकता को स्वीकृत करते थे और दूसरी ओर इस बात का प्रयास करते थे कि लोग दान न ले। वे इस बात में अधिक रूचि नहीं रखते थे कि दान लेने से जो बुराइयां उत्पन्न होती हैं उन्हें दूर करें। इसका अर्थ यह था कि निर्धन सहायता की एक सामाजिक रूप से उपभोगी पद्धति की संभावना में विश्वास नहीं रखते थे। इसी कारण दान संगठन समितियां निर्धन सहायता के अधिकारियों एवं परोपकारी संस्थाओं का समर्थन प्राप्त करने में असफल रही और पर्याप्त समय तक समाज कार्य का प्रयोग व्यक्तियों के सहायता सेवाओं के उच्चतर प्रयोग के लिए न हो सका। समाज कार्य की उत्पत्ति निराश्रिता की समस्या को सुलझाने के लिए हुई। समाज कार्य अविवेकपूर्ण दान, जन सहायता (मास रिलीफ) और दान को स्वयं एक उद्देश्य बनाने के विरूद्ध था।

थामस चामर्स के विचारों में व्यक्ति के पुनर्वास के लिए उसमें आत्म निर्भरता लाना आवश्यक है। इन सहायता समितियों के मतानुसार निर्धन की निर्धनता का कारण उसका व्यक्तिगत दोष माना जाता था। सरकारी निर्धन सहायता अधिकारियों का भी यही विचार था। इस परिस्थिति में सुधार लाने की दृष्टि से 1869 में लन्दन नगर में Society for Organizing Charitable Relief and Repressing Mendicity की स्थापना की गई जिसका नाम कुछ समय बाद Charity Organization Society (COS) कर दिया गया। इसके सिद्धान्त Thomas Chalmers के सिद्धान्त से ही निर्देशित थे। इस सोसाइटी ने Chalmers के इन विचारों को मान लिया कि व्यक्ति अपनी निर्धनता के लिए उत्तरदायी है और सहायता प्राप्त करना उसके आत्म सम्मान को नष्ट करता है और उसे भिक्षा पर रहने पर विवश करता है। इस सोसाइटी Chalmers के इस विचार को भी माना कि निर्धन को अपने आप का भरण पोषण अपनी सम्पूर्ण योग्यताओं का प्रयोग करके, करने के लिए कहा जाना चाहिए। इन सिद्धान्तों का व्यावहारिक रूप में प्रयोग करते हुए इस सोसाइटी ने एक पूछताछ विभाग खोला जो पुअर ला अधिकारियों, चैरिटी सोसाइटीज और व्यक्तिगत परोपकारी पुरूषों से सहायता मांगने वालों की सूचना उपलब्ध कराता था। इस प्रकार बहुत सेऐसे व्यक्ति मिले जिन्होंने भिक्षावृत्ति को एक व्यवसाय के रूप में धारण कर लिया था और एक साथ कई सहायता संस्थाओं से सहायता प्राप्त कर रहे थे।

इस सोसाइटी ने नगर को बहुत से छोटे-छोटे जनपदों में विभाजित किया। प्रत्येक जनपद में सहायता कार्य। के लिए नागरिकों के समूह बनाये गये जो स्वयंसेवकों के रूप में कार्य करने लगे। यह स्वयं सेवक उन परिवारों में जो इनके अधीन रखे गये, व्यक्तिगत रूचि लेने लगे और ऐसा करते समय इन परिवारों की जीवन धारा को बदलने का प्रयास करने लगे, बड़े जनपदों में इस कार्य को करने के लिए COS द्वारा वैतनिक कर्मचारी नियुक्त किये गए।

यह सोसाइटी सरकारी निर्धन सहायता के विरूद्ध थी और अपने सदस्यों को निर्धनों पर सरकारी व्यय को कम करने को कहती थी। यह गैर सरकारी प्रयासों को बढ़ावा देने लगी। 1869 में स्थापित इस London Charity Organization Society की भांति इंग्लैण्ड और स्काटलैण्ड के अन्य नगरों में भी इस प्रकार की समितियां संगठित की गयी और 9 वर्षों बाद यह आन्दोलन अमेरिका में भी फैल गया।

इन प्रयासों के अतिरिक्त The Settlement House आन्दोलन, जिसमें बड़े-बड़े विश्वविद्यालयों के विद्यार्थी गन्दी बस्तियों में जाकर रहने लगे, एक और महत्वपूर्ण कार्य था जिसने निर्धन सहायता कार्य को प्रभावित किया।

इसी प्रकार सामाजिक अनुसंधान सर्वेक्षण करके निर्धनता के आकार और कारणों का पता लगाकर भी निर्धन सहायता कार्यों को प्रभावित करने का प्रयास किया गया।

1877 में प्रिजन ऐक्ट ने दंड सम्बन्धी संस्थाओं का प्रशासन एक केन्द्रीय संस्था नेशनल प्रीजन कमीशन को सौंप दिया। तभी कारगारों की दशा में संतोषजनक सुधार हुआ।

उन्नीसवीं शताब्दी में निर्धन सहायता की पद्धति को सामाजिक सुधार आन्दोलनों, सामाजिक अनुसंधान की प्रणालियों और दान संगठन समितियों ने भी प्रभावित और परिवर्तित किया।

सामाजिक सुधार के आन्दोलनों का उद्देश्यों प्रमुख रूप से निर्धनों के प्रति समाज के उत्तरदायित्व को स्वीकृत कराना था। इसी समय श्रमिक संघ आन्दोलन प्रारम्भ हुआ जिसने श्रमिक सदस्यों की सहायता का प्रबन्ध किया। चार्टिस्ट आन्दोलन द्वारा विशेष प्रकार से श्रमिकों के मतदान के अधिकार की मांग की गई। क्रिस्चन सोशलिस्ट आन्दोलन ने शिक्षा द्वारा श्रमिकों की दशा में सुधार लाने का प्रयास किया।

उन्नीसवीं शताब्दी में चार्लस बूथ और रावेन्ट्री ने सामाजिक शोध द्वारा निर्धनता का पता लगाने का प्रयास किया और इस बात का अवसर प्रदान किया कि समाज की आर्थिकक आवश्यकताओं का वैज्ञानिक और विषयात्मक रूप से पता लगाया जाये और उन आवश्यकताओं की पूर्ति का प्रबन्ध किया जाये। 1886 में चार्ल्स बूथ ने जो शोध कार्य किये उससे पता चला कि लन्दन की 1/3 जनसंख्या उस समय निर्धन थी। रावेन्ट्री के शोध कार्य के अनुसार भी 27 प्रतिशत व्यक्ति निर्धन थे।

2.7 कैनन बारनेट का दृष्टिकोण

दान संगठन समिति के एक नेता कैनन बारनेट थे। उनके अनुसार निर्धनता का कारण वैयक्तिक दोष था। इसके अतिरिक्त इसका कारण यह था कि अविवेकपूर्ण दान सरलता के साथ मिल जाता था और इससे चरित्र पर बुरा प्रभाव पड़ता था और यह कि धनी व्यक्ति भौतिक रूचि रखते थे और भोगविलास करते थे। वैयक्तिक दोष से बारनेट का तात्पर्य था आलस्य, दूरदर्शिता का अभाव और दान पर निर्भर रहने की इच्छा।

बारनेट और उनके साथियों ने निर्धनता की समस्या को सुलझाने का दो प्रकार से प्रयास किया। उन्होंने इस बात की कोशिश की कि अविवेकपूर्ण दान बिल्कुल ही बन्द कर दिया जाये और ''पुअर ला'' के अधीन सहायता केवल वर्क हाउस में दी जाये। दूसरे उन्होंने इस बात की चेष्टा की कि व्यक्तियों को पुनः आत्मस्वालम्बी बनाया जाये और इसके लिए उनकी आवश्यकताओं एवं योग्यताओं का सावधानी से अध्ययन किया जाये।

बारनेट का विचार था कि इस बात का निर्णय करना कठिन है कि किसका चरित्र अच्छा है और किसका बुरा क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति को विभिन्न परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है और उनका व्यवहार विभिन्न कारणों से प्रभावित होता है। इसके अतिरिक्त उनका विचार था कि इस प्रकार के निर्णय को स्वीकृत करने में एक प्रकार का अपमान है और इसमें आत्म सम्मान नष्ट हो जाता है। बारनेट का विचार था कि निर्धन विधान अधिकारियों के अधीन दी जाने वाली बहिर्वासी सहायता आउट डारे रिलीफ बन्द कर देनी चाहिए और इसके स्थान पर सार्वजनिक सहायता किसी वर्क हाउस या अन्य संस्था में दी जानी चाहिए क्योकि यह सहायता प्रत्येक उस व्यक्ति को मिल सकती थी जो अपनी स्वतंत्रता के बदले अपने जीवन का पुनर्संगठन करना चाहे उनके लिए दान संगठन समिति की उपसमितियों की सेवाएं उपलब्ध होनी चाहिए। व्यक्ति अपनी कठिनाइयां इन समितियों के सामने रख सकते थे (बिना आत्म सम्मान को हानि पहुचाएं हुए) क्योंकि इसका अर्थ दान की प्रार्थना करना नहीं बल्कि केवल इस बात की सहायता मांगना हुआ कि उन्हें समाज में पुनः आदरणीय स्थान मिल सके।

बारनेट के मतानुसार समाज कार्य का उद्देश्य चरित्र का सुधार था। सहायता का उद्देश्य वैयक्तिक क्लेश को थोड़े समय के लिए कम करना नहीं है बल्कि समाज के रोग की चिकित्सा है। समाज का रोग उनके अनुसार आलस्य और निराश्रिता है। उनके विचार में प्रत्येक व्यक्ति को अपने दोषों के दंड का भुगतान करना चाहिए और इसमें किसी को हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए।

2.8 दातव्य संगठन समिति की असफलता

अपनी पूरी कोशिश के उपरान्त भी दान संगठन समिति के नेता अपने उद्देश्यों मे असफल रहे क्योंकि अविवेकपूर्ण दान निरन्तर प्रचलित रहा बल्कि बढ़ता ही गया। इसका कारण यह था कि लोग इस बात के लिए तैयार न थे कि निर्धनता को दूर न किया जाये जब तक कि निर्धन व्यक्ति सपरिवार वर्कहाउस में जाने के लिए तैयार न हों। अतः बहुत से लोग जिनमें दान संगठन समिति के दृष्टिकोण से चरित्र सम्बन्धी दोष होते थे दान संगठन उपसमितियों के अतिरिक्त अन्य स्थानों और संस्थाओं से आर्थिक सहायता पा जाते थे।

इसके अतिरिक्त दान संगठन समिति की सहायता उन्हीं लोगों को दी जाती थी जिनका चरित्र दान संगठन समिति के दृष्टिकोण से प्रशंसनीय हो और जो दान संगठन समिति का मार्ग प्रदर्शन स्वीकृत करने और उसके सामाजिक आदर्शों का पालन करने पर तैयार हो। कुछ ही समय उपरान्त दान संगठन समिति के नेताओं ने योग्य एवं अयोग्य प्रार्थियों में अन्तर करना आरम्भ कर दिया। बारनेट इस अन्तर से सहमत न थे और तत्पश्चात् उन्होने दान संगठन समिति के प्रमुख दोष उसकी गहरी निन्दायुक्ति और इसकी यह कल्पना थी कि धनी व्यक्ति निर्धनों से बौद्धिक एवं नैतिक रूप से उच्चतर होते है और उन्हें इस बात का अधिकार है कि आर्थिक सहायता के साथ निर्धनों के जीवन पर पूर्णरूपरेण नियंत्रण करें।

इस मनोवृत्ति के कारण बहुत से ऐसे सेवार्थी, जिनकी सहायता कुछ कम सत्ताधारी एवं अधिकारात्मक रूप से की जा सकती थी, इस प्रकार की सहायता लेना पसन्द न करते थे। इस प्रकार दान संगठन समिति की सहायता केवल उन्हीं लोगों को मिल पाती थी जो उसके सामने झुक जाते थे और जो दान संगठन समिति की प्रणालियों के कारण उसी प्रकार दरिद्रता की सीमा तक पहुंच सकते थे जैसे दान और चन्दे के कारण जिसे दान संगठन समिति के नेता समाप्त करना चाहते थे। इससे यह स्पष्ट है कि दान संगठन समिति अपने इस उद्देश्य में सफल न हो सकी कि निराश्रिता और दरिद्रता का निवारण किया जा सके और इस समिति की प्रणालियों ने भी दरिद्रता और निराश्रिता को बनाए रखा।

इसी कारण उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में (1892) बारनेट दान संगठन आन्दोलन से पृथक हो गए। उनका विचार था कि इस आन्दोलन की प्रणालियां निराश्रिता को दूर करने में असफल हैं क्योंकि उस समय निर्धनों और निराश्रितों की एक बड़ी सड़कों और सार्वजनिक स्थलों पर दिखाई देती थी।

बारनेट का विचार था कि इस परिस्थिति को सुधारने के लिए सहायता केवल उन्हीं लोगों को नहीं मिलनी चाहिए जिनका चरित्र संतोषजनक हो बल्कि प्रत्येक प्रार्थी को मिलनी चाहिए। बारनेट का विचार था कि समाज कार्य की सेवाएं उन्हीं लोगों को मिलनी चाहिए जो अपने चरित्र की अयोग्यताओं के कारण समाज में अपना सामान्य स्थान ग्रहण नहीं कर सकते और जिन्हें उदाहरण स्वरूप अपने पारिवारिक कर्तव्य या रोजगार सम्बन्धी कर्तव्य के पालन करने में कठिनाई का सामना हो और जो इस सम्बन्ध में सहायता एवं उत्साह चाहते हों। इन सब बातों के अतिरिक्त दान संगठन समिति की असफलता का मुख्य कारण यह था कि इसके नेता सहायता की पद्धति में सुधार लाने के स्थान पर उसे समाप्त कर देने के पक्ष में थे। फिर भी समाज कार्य में जिन व्यक्तीकरण की प्रणालियों का प्रवेश उन लोगों ने किया उनका प्रयोग कुछ समय उपरान्त इस समस्या के सुलझाने के लिए हुआ कि किस प्रकार निर्धन सहायता बिना बुरे परिणामों के दी जाये अर्थात् सहायता पाने वाले में निराश्रिता एवं निर्भरता की प्रवृत्ति न उत्पन्न हों।

इस समय पहली बात तो यह हुई कि यह समझा जाने लगा कि सामाजिक सामान्जस्य के लिए धन के प्रयोग और आर्थिक कठिनाई के निवारण के लिए धन के प्रयोग में अन्तर है और इस प्रकार समाज कार्य एक स्वतंत्र पथ पर चल पड़ा जिसमें सामाजिक सामंजस्य को महत्व दिया जाने लगा।

दूसरी महत्वपूर्ण बात यह हुई कि जब निराश्रिता का निवारण निर्धनों के सुधार द्वारा न हो सका तो आर्थिक व्यवस्था को सुधारने की ओर समाज का ध्यान केन्द्रित हुआ। बेरोजगारी मुआवजा, स्वास्थ्य, बीमा एवं वृद्धावस्था सहायता की मांग की जान लगी।

तीसरी बात यह हुई कि इस समय, अर्थात् उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में समाज कार्य एवं सामाजिक बीमा की संस्थाओं के साथ-साथ निर्धन सहायता की संस्था भी निराश्रितों की न्यूनतम आवश्यकताओं को पूरा करने का कार्य करती रही। जैसे-जैसे समय व्यतीत होता गया पुअर ला के अन्तर्गत दी जाने वाली सहायता के सेवार्थियों की संख्या कम होती गई।

इस प्रकार हम देखते हैं कि यद्यपि दान संगठन समिति आन्दोलन निराश्रिता के उन्मूलन में असफल रहा फिर भी इसी आन्दोलन से समाज कार्य की आधुनिक प्रणालियों की उत्पत्ति हुई। समाज कार्य में व्यक्तिकरण की अवधारणा इसी आन्दोलन की प्रमुख देन है।

2.9 सारांश

सारांश के रूप में इस अध्याय में सन् 1800 से 1900 के मध्य इंग्लैण्ड में समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास से सम्बन्धित विभिन्न प्रकार के किये गये प्रयासों का उल्लेख किया गया है। इसके अन्तर्गत समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास की यथार्थता को जानने का प्रयास किया गया है। यह अध्याय स्पष्ट करता है कि किस प्रकार से इंग्लैण्ड में समाज कार्य को एक व्यवसाय का रूप प्राप्त करने में विभिन्न चरणों से गुजरना पड़ा है।

2.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

(1) सन् 1800 से 1900 के मध्य इंग्लैण्ड में समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास की रूपरेखा को स्पष्ट कीजिए।

(2) टामस चार्मस के विचारों को समझाइए।

(3) दातव्य संगठन समिति पर संक्षिप्त टिप्पणी कीजिए।

(4) कैनन बारनेट के विचारों का उल्लेख कीजिए।

(5) दातव्य संगठन समिति की असफलता के कारणों को समझाइये।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. Friedlander, A.W.: Indtrodution of Social Welfare, Prentice Hall, INC. New York. 1995.
2. Thomas P.T.: Profession Traning in Social Work, in Sugata Das Gupta (ed) "Towards in philosophy of Social work in India Popular Books Services, New Delhi, 1967.
3. Ahamad, Mirza Raffiuddin, Samaj Kayra : Darshan evam Pranaliyan, Repid Books Services, Lucknow, 1969.

4. Mishra, P.D. Social Work Profession in India, New Royal Book Co., Lucknow, 2004.
5. Sudan K.S., Samaj Karya : Siddant evam Abhyas, N.S. Publications Lucknow, 2011.
6. Mishra, P.D., Samaj Karya : Itihas, Darshan evam Pranaliyan, New Royal Book Co. Lucknow, 2004.
7. Singh, D.K., and Bhartiya, A.K., Social Work : Philosophy and Methods, New Royal Book Co. Lucknow, 2009.
8. Shastri R.R., Social Work Tradition in India, Welfare Forum and Research Organization, Varanasi , 1986.
9. Dinitto, D.M. and Mcneece, C.A. Social Work Issues and Opportunities : In a Challenging Profession, LYCEUM Books INC, Chicago, 2008.
10. O.Hare, Thomas, Essential Skills of Social Work Practics: Assesment Intervetion Evaluation LYCEUM Books INC, Chicago, 2009.
11. Adams, R.; Dominelli, L. and Payne, M.; Social Work : Themes, Issues and Critical Debates, Second edition (ed), Palgrave, New York, 1998.
12. Clark, S. Social Work as Community Development: A Management Model for Social Change, Second Eddition (ed), Ashgate Publishing Ltd., England, 2000.
13. Colby, Ira and Dziegielewski, S., Introdution to Social Work: The People's Profession , Second Eddition (ed) LYCEUM Books INC, Chicago, 2004.
14. Srivastava S.P. "Addressing the future of Social Work in India" Social Work Education in India (ed) by S. Signh and S. Swaminathan New Royal Books Co. 2003.
15. Singh, Surendra,: Future Chellanges before Social Work Proffesion in India and Reuired Response, Contemporary Social Work, Volume 12 October 1995.

ईकाई-3

इंग्लैण्ड में समाज कार्य का ऐतिहासिक विकास (सन् 1900 से 1950 तक)

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 भूमिका

3.3 विलियम बेवरिज के पूर्व

3.4 विलियम बेवरिज रिपोर्ट तथा उसके पश्चात्

3.5 सामाजिक सुरक्षा

3.6 सारांश

3.7 अभ्यास प्रश्न

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

3.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात आप -

1. सन् 1900 से 1950 के मध्य इंग्लैण्ड में समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास के विषय में जान जायेंगे |
2. इस काल में इंग्लैण्ड में समाज कार्य को अत्यधिक बल प्राप्त हुआ, जिसके कारण समाज कार्य को एक व्यावसायिक रूप प्राप्त करने में किस प्रकार प्रारम्भिक सफलता प्राप्त हुई इससे अवगत हो सकेंगे |

3.1 प्रस्तावना

समाज कार्य का उद्देश्य लोगों की सहायता करना है। सन् 1900 से 1950 तक इंग्लैण्ड में समाज कार्य के क्षेत्र में अत्यधिक वृद्धि हुई तथा लोगों की सहायता करने का दायित्व जहां व्यक्ति विशेष के हाथों में था, वहीं कालान्तर में इस उत्तरदायित्व का निर्वाहन संस्थागत रूप में किया जाने लगा।

3.2 भूमिका

बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में इंग्लैण्ड में बेरोजगारों की संख्या में अत्यधिक वृद्धि हुई। जिसका परिणाम यह हुआ कि बेरोजगारों तथा उनके परिवारों द्वारा निर्धन सहायता की मांग की जाने लगी। इस समस्या का आकार इतना अधिक विस्तृत था कि पूर्व में बनाये गये निर्धन कानून असफल होने लगे और समस्या का समाधान करना कठिन हो गया। इस समस्या के समाधान के लिए विभिन्न प्रकार के कानूनों का निर्माण किया गया।

3.3 विलियम बेवरिज के पूर्व (Befor William Bevridge)

विलियम बेवरिज रिपोर्ट के आने से पूर्व इंग्लैण्ड में निर्धनों की सहायता करने तथ उनकी समस्या का समाधान हेतु कानूनों का निर्माण किया गया। जिसका संक्षिप्त विवरण नीचे दिया गया है।1905 में लार्ड जार्ज हेमिल्टन की अध्यक्षता में निर्धन कानून एवं दुःख निवारण शाही आयोग का गठन किया गया। इस आयोग की संस्तुतियों के अनुसरण में 1905 में बेकार कर्मकार अधिनियम पारित किया गया जिसके अधीन स्थानीय कष्ट निवारण समिति देने का प्रावधान किया गया।

1908 में वृद्धावस्था पेंषन कानून पास हुआ जिसके अधीन 70 वर्ष से अधिक आयु के आवश्यकताग्रस्त निर्धनों को 5 षिलिंग प्रति सप्ताह की पेंशन दिये जाने की व्यवस्था की गयी। 1909 में श्रम कार्यालय अधिनियम पारित किया गया।

1911 में राष्ट्रीय बीमा कानून बना जिसके अधीन निम्न आय समूह के श्रमिकों के अनिवार्य स्वस्थ बीमे की व्यवस्था की गयी। 1920 में ब्लाइन्ड परसन्स ऐक्ट ने 50 वर्ष या इससे अधिक आयु के अयोग्य नेत्रहीनों के लिए पेन्शन की व्यवस्था की।

1925 में विधवा, अनाथ एवं वृद्धावस्था अंशदायी पेंशन अधिनियम पास किया गया जिसके अंतर्गत 65 वर्ष से अधिक आयु के पुरूषों, 60 वर्ष से अधिक आयु की महिलाओं, विधवाओं, अनाथों और 14 वर्ष के कम आयु के (यदि स्कूल जा रहे हों तो 16 वर्ष से कम आयु के) आश्रित बच्चों को बीमा योजना के अन्तर्गत सम्मिलित किया गया जिसकी वित्तीय व्यवस्था मालिकों और श्रमिको द्वारा दिये गये अंषदानों से की जाती थी। इन अंषदानों का संग्रह अनुमोदित समितियों द्वारा किया जाता था। बीमा की इस योजना के अंतर्गत लाभ भोगियों को डाकघर के माध्यम से समान दर पर लाभ प्रदान किये जाते थे। दावों के उचित होने का निर्णय स्वास्थ्य, मंत्रालय की स्थानीय शाखा के कार्यालय द्वारा किया जाता था। अंषदान और लाभ दोनों के लिए एक जैसी दर ही रखी गया थी ताकि विभिन्न श्रेणियों के श्रमिक लाभभोगियों को समान धनराशि का भुगतान किया जा सके।

1925 में स्थानीय शासन अधिनियम पारित किया गया जिसने निर्धन कानून संघों एवं संरक्षक परिषदों को समाप्त कर निर्धन सहायता के प्रषासन का उत्तरदायित्व काउन्टी काउंसिलों और शहरों के बरो कौंसिलों को दे दिया।

1931 में राष्ट्रीय व्यवस्था अधिनियम बनाया गया जिसके अधीन ऐसे बेकार व्यक्तियों को राज्य कोष से बेकारी सहायता देने की व्यवस्था की गई जिन्होंने बेकारी बीमा के अधीन उपलब्ध सभी लाभ प्राप्त कर लिए हो अथवा जो इन लाभों के लिए पात्र न हो।

1934 में बेकारी अधिनियम पास किया गया जिसके अधीन बेकारी सहायता के प्रषासन का उत्तरदायित्व बेकारी सहायता बोर्ड को सौंपा गया। 1939 में इस बोर्ड को युद्ध के षिकार व्यक्तिष्यों को भत्तों का भुगतान करने का दायित्व भी प्रदान किया गया और 1940 में वृद्धावस्था पेंषन अधिनियम बना जिसके अधीन वृद्धों को, विषेष रूप से चिकित्सकीय उपचार के लिए, उनकी आवष्यकता पर आधारित पेंषनों के भुगतान की व्यवस्था की गयी।

3.4 विलियम बेवरिज रिपोर्ट तथा उसके पश्चात्

द्वितीय महायुद्ध के मध्य श्री विलियम बेवरिज ने ब्रिटिश सामाजिक सेवा के ढांचे के विषय में अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। उन्होंने अभाव, रोग, अस्वच्छता, अज्ञानता, एवं आलस्य के उन्मूलन पर बल दिया।

वर्तमान इंग्लैण्ड की सामाजिक सुरक्षा पद्धति बेवरिज के प्रतिवेदन पर आधारित हैं। इस प्रतिवेदन का उद्देश्य यह था कि प्रत्येक नागरिक को उसके सहयोग से एक मौलिक आय स्तर का आश्वासन दिया जाये। बेवरिज के प्रतिवेदन पर आधारित सामाजिक सुरक्षा पद्धति के अन्तर्गत पांच विशेष कार्यक्रम प्रचलित हुए:-

1. एक संयुक्त, विस्तृत और पर्याप्त सामाजिक बीमा कार्यक्रम,

2. एक सार्वजनिक सहायता कार्यक्रम जिससे उन लोगों को सहायता दी जाती है जिनकी आवश्यकताएं सामाजिक बीमे से पूरी नहीं हो पाती।

3. शिशु सहायता से अब पारिवारिक सहायता कहलती है और जिसके अन्तर्गत पहले बच्चे के उपरान्त बच्चे के लिए साप्ताहिक सहायता मिलती है।

4. सभी व्यक्तियों के लिए निःशुल्क स्वास्थ्य एवं पुनर्वास सेवांए, और

5. आर्थिक संकट में जन-वृत्तिहीनता से सुरक्षित रखने के लिए सार्वजनिक कार्यो द्वारा पूर्ण सेवायोजन की उपलब्धि।

यह एक संयुक्त योजना थी जिससे एक राष्ट्रीय संस्था को चलाना था। इसी योजना पर ग्रेट ब्रिटेन की सामाजिक सुरक्षा पद्धति का आधार है।

बेवरिज रिपोर्ट के आधार पर 1944 में अपंग व्यक्ति कानून बना जिसके अधीन वाणिज्य तथा औद्योगिक प्रतिष्ठानों के लिए यह आवष्यक कर दिया गया कि वे अपंगों को रोजगार दें। 1944 में ही पेंशन एवं राष्ट्रीय बीमा मंत्रालय का गठन किया गया और इसके अधीन एक राष्ट्रीय सहायता परिषद् बनायी गई जो सहायता प्रदान करने के लिए उत्तरदायी थी। 1945 में परिवार भत्ता कानून पास किया गया। 1946 में राष्ट्रीय बीमा कानून बनाया गया जिसके अधीन स्वास्थ्य, अपंगता एवं वृद्धावस्था बीमा इत्यादि योजनाएँ बनायी गयी। 1946 में कर्मकार क्षतिपूर्ति अधिनियम बनाया गया। इसी वर्ष राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा कानून बना। 1948 में राष्ट्रीय सहायता बोर्ड बना जिसका उत्तरदायित्व आवष्यकताग्रस्त व्यक्तियों के लिए जन सहायता का प्रावधान करना था।

हम अभी उपर बता चुके हैं कि निराश्रिता का निवारण जब निर्धनों के सुधार द्वारा न हो सका तो सामाजिक ढांचे के सुधार की ओर ध्यान केन्द्रित हुआ। इस बात का प्रयास किया जाने लगा कि विधान द्वारा विभिन्न प्रकार की सुविधाएं उपलब्ध की जाएं।

नैशनल इन्शोरेन्स का कार्यक्रम बीमा किये हुए कर्मचारियों और उनके नियोक्ताओं के योगदान और संसद के अनुदान से चलाया जाता था हेल्थ इन्शोरेन्स का कार्यक्रम अनुमोदित समितियां चलाती थी। अन एम्प्लायमेन्ट बेनिफिट्स का कार्यक्रम सेवायोजन कार्यालय चलाते थे। बीमे के कार्यक्रम को चलाने के लिए अन्शदान और लाभ विधान द्वारा निश्चित किये जाते थे। आवश्यकता के समय बीमा किये हुए कर्मचारी की आर्थिक स्थिति को ज्ञात किये बिना सहायता दी जाती थी जिस कोष में पिता या पति ने अन्शदान किया हो उससे लाभ लेने में कोई अपमान नहीं समझा जाता था।

3.5 सामाजिक सुरक्षा (Social Security)

इंग्लैण्ड की सामाजिक पद्धति का आधर बेवरिज प्रतिवेदन पर है। सामाजिक सुरक्षा पद्धति के निम्नलिखित अंग है:-

1. वृद्धावस्था, असामथ्र्य, एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी बेमे की एक विस्तृत सामाजिक बीमा योजना जो 1946 के नैशनल इंश्योरेंस ऐक्टर पर आधारित है।

2. श्रमिक मुआवजा जो इन्डस्ट्रियल इन्जरीज ऐक्ट 1946 पर आधारित है।

3. पारिवारिक सहायता (फैमिली ऐलाउन्सज) के एक पद्धति जो 1945 के फैमिली ऐलाउन्सज ऐक्ट पर आधारित है।

4. सार्वजनिक सहायता जो 1948 के नैशनल असिस्टेंस ऐक्ट द्वारा उपलब्ध की जाती है।

5. सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवायें जो 1946 के नैशनल हेल्थ सर्विस ऐक्ट के अनुसार उपलब्ध कीजाती है।

इंग्लैण्ड की सामाजिक सुरक्षा पद्धति का सबसे महत्वपूर्ण अंग सामाजिक बीमा योजना है। इस योजना में स्वास्थ्य बीमा, वृत्तिहीनता बीमा, वृद्धावस्था (निवृत्ति) बीमा एवं असामथ्र्य बीमा, श्रमिक मुआवजा और विवाह, प्रसूति, तथा मृत्यु के लिए विशेष अनुदान सम्मिलित हैं। यह योजना साढ़े तीन करोड़ व्यक्तियों को रोग, वृत्तिहीनजा, वृद्धावस्था, असामथ्र्य, धनोपार्जन करने वाले की मृत्यु और औद्योगिक दुर्घटना के समय सहायता प्रदान करती है। इस योजना के अन्तर्गत बीमा किये हुए लोगां की 3 श्रेणियां बनाई गई।

1. सेवायुक्त व्यक्ति,

2. स्वयं सेवायुक्त व्यक्ति,

3. वह व्यक्ति जो सेवायुक्त नहीं है।

पहली श्रेणी के लिए कोष सेवायुक्त व्यक्ति और उनके नियोक्ताओं के अंशदान से एकत्र किया जाता है। यह अंशदान सेवायुक्त व्यक्तियों की आय के अनुसार होता है और आकस्मिता के समय उन्हें बिना उनकी आवश्यकताओं की जांच किये हुए सहायता मिलती है।

दूसरी ओर तीसरी श्रेणी के व्यक्तियों को एक निश्चित अंशदान करना पड़ता है और सरकारी खजाना उनके अंशदान का 1/3 भाग देता है।

सरकारी बीमे की योजना का प्रशासन मिनिस्ट्री आफ पेंशन्स ऐण्ड नेशनल इंश्योरेंस द्वारा चलाया जाता है। परन्तु इस योजना से सभी लाग नहीं लाभान्वित हो पाते अतः सार्वजनिक सहायता का एक सहायक कार्यक्रम प्रचलित है।

नेशनल असिस्टेंस ऐक्ट आफ 1948 के अनुसार सार्वजनिक सहायता दो नई योजनाओं के अन्तर्गत उपलब्ध की जाती है।

1. जिन व्यक्तियों को आर्थिक सहायता की आवश्यकता होती है उन्हें नेशनल असिस्टेन्स बोर्ड द्वारा आर्थिक सहायता की जाती है।

2. व्यक्तिगत और संस्था सम्बन्धी सेवायें काउन्टी कौसल्स द्वारा प्रदान की जाती है।

पारिवारिक सहायता प्रार्थना करने पर प्रत्येक ऐसे परिवार को दी जाती है जिसमें सोलह वर्ष की आयु से कम के दो या इससे अधिक बच्चे हों चाहे उस परिवार का आर्थिक स्तर कुछ भी हो। यह पारिवारिक सहायता 8 शिलिन्ग प्रति सप्ताह के हिसाब से मिलती है। इसके अतिरिक्त सब बच्चों को दिन का भोजन मनोरंजन, एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी सेवायें फ्री डे कैम्प या समर वैकेशन होम्स में निःशुल्क उपलब्ध की जाती हैं।

सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाएं प्रत्येक ब्रिटिश नागरिक को प्रार्थना करने पर निःशुल्क उपलब्ध की जाती है।

इस योजना का प्रयोग इंग्लैण्ड की 67 प्रतिशत जनसंख्या करती है और लगभग 97 प्रतिशत चिकित्सक भी इस योजना के अन्तर्गत सेवा प्रदान करते हैं।

प्रसूति के समय निःशुल्क भैषजिक सहायता दी जाती है। क्षयरोग ग्रस्त व्यक्तियों को भैषजिक सहायता और सार्वजनिक सहायता प्रदान की जाती है। क्षयरोग से ग्रस्त रोगी जब चिकित्सालय से लौटते हैं तो समाज कार्यकर्ता उनकी उत्तररक्षा का प्रबन्ध करते हैं इसके अतिरिक्त शिशु निर्देशन एवं मानसिक स्वास्थ्य चिकित्सालय भी स्थापित हैं जो मानसिक रोग का निरोध करते हैं।

सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवा योजना के कुछ व्यय का 13 प्रतिशत भाग सामाजिक बीमा योजना कोष से आता है। इस व्यय का शेष भाग राष्ट्रीय एवं स्थानिक कर द्वारा पूरा किया जाता है।

कुछ स्थानों पर बच्चों, वृद्धों एवं असमर्थों के लिए भैषजिक समाज कार्यकर्ता कल्याण अधिकारी के नाम से नियुक्त किये जाते हैं।

प्रत्येक व्यक्ति को सामाजिक बीमा योजना में साप्ताहिक दान करना पड़ता है। परन्तु कोई व्यक्ति सामाजिक बीमा योजना के अन्तर्गत न आता हो तो भी उसे स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध होती हैं।

3.6 सारांश

सारांश के रूप में इस अध्याय में सन् 1900 से 1950 के मध्य इंग्लैण्ड में समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास के अन्तर्गत सामाजिक सुरक्षा से सम्बन्धित उपायों की शुरूआत की गयी। जिसका मुख्य उद्देश्य आवश्यकताग्रस्त लोगों की सहायता करना रहा है। इस काल में औद्योगीकरण का भी अत्यधिक प्रभाव पड़ा। जिसके द्वारा समाज कार्य की विकास को अत्यधिक बल प्राप्त हुआ।

3.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

(1) सन् 1900 से 1950 के मध्य इंग्लैण्ड में समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास की रूपरेखा को स्पष्ट कीजिए।

(2) विलियम बेवरिज रिपोर्ट का उल्लेख कीजिए।

(3) सामाजिक सुरक्षा प्रावधान को स्पष्ट कीजिए।

(4) निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

(अ) राष्ट्रीय बीमा अधिनियम, 1946

(ब) निर्धन कानून एवं दुःख निवारण शाही आयोग

(स) द्वितीय विश्वयुद्ध का समाज कल्याण कार्यक्रमों पर प्रभाव

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. Friedlander, A.W.: Indtrodution of Social Welfare, Prentice Hall, INC. New York. 1995.

2. Thomas P.T.: Profession Traning in Social Work, in Sugata Das Gupta (ed) "Towards in philosophy of Social work in India Popular Books Services, New Delhi, 1967.
3. Ahamad, Mirza Raffiuddin, Samaj Kayra : Darshan evam Pranaliyan, Repid Books Services, Lucknow, 1969.
4. Mishra, P.D. Social Work Profession in India, New Royal Book Co., Lucknow, 2004.
5. Sudan K.S., Samaj Karya : Siddant evam Abhyas, N.S. Publications Lucknow, 2011.
6. Mishra, P.D., Samaj Karya : Itihas, Darshan evam Pranaliyan, New Royal Book Co. Lucknow, 2004.
7. Singh, D.K., and Bhartiya, A.K., Social Work : Philosophy and Methods, New Royal Book Co. Lucknow, 2009.
8. Shastri R.R., Social Work Tradition in India, Welfare Forum and Research Organization, Varanasi , 1986.
9. Dinitto, D.M. and Mcneece, C.A. Social Work Issues and Opportunities : In a Challenging Profession, LYCEUM Books INC, Chicago, 2008.
10. O.Hare, Thomas, Essential Skills of Social Work Practics: Assesment Intervetion Evaluation LYCEUM Books INC, Chicago, 2009.
11. Adams, R.; Dominelli, L. and Payne, M.; Social Work : Themes, Issues and Critical Debates, Second edition (ed), Palgrave, New York, 1998.
12. Clark, S. Social Work as Community Development: A Management Model for Social Change, Second Eddition (ed), Ashgate Publishing Ltd., England, 2000.
13. Colby, Ira and Dziegielewski, S., Introdution to Social Work: The People's Profession , Second Eddition (ed) LYCEUM Books INC, Chicago, 2004.
14. Srivastava S.P. "Addressing the future of Social Work in India" Social Work Education in India (ed) by S.Signh and S. Swaminathan New Royal Books Co. 2003.
15. Singh, Surendra, : Future Chellanges before Social Work Proffesion in India and reuired response, contemporary Social Work Volume 12 October 1995.

इकाई -4

इंग्लैण्ड में समाज कार्य का ऐतिहासिक विकास

(1950 से अब तक)

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 भूमिका

4.3 कर्नेजी प्रतिवेदन

4.4 समाज कार्य शिक्षा

4.5 सामाजिक सुरक्षा लाभ

4.6 सारांश

4.7 अभ्यास प्रश्न

4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

4.0 उद्देश्य

प्रस्तुत अध्याय के अध्ययन के बाद आप –

1. इंग्लैण्ड में समाज कार्य व्यवसाय के ऐतिहासिक विकास की पृष्ठभूमि मे यह जान जायेंगे कि किस प्रकार से समाज कार्य ने एक व्यावसायिक स्वरूप को प्राप्त किया है।
2. इंग्लैण्ड में समाज कार्य की स्थापना, वृद्धि तथा विकास का विश्लेषण कर सकेंगे ।

4.1 प्रस्तावना

सन् 1950 के बाद इंग्लैण्ड में समाज कार्य व्यवसाय को बल प्राप्त हुआ। इसके पूर्व समाज कार्य व्यवसाय को सामाजिक मान्यता प्राप्त नहीं थी। कालान्तर में समाज कार्य ने उल्लेखनीय वृद्धि की है। इस संदर्भ में इस अध्याय में यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि समाज कार्य ने अन्य क्षेत्रों यथा स्वास्थ्य एवं बीमा, सामाजिक सुरक्षा इत्यादि में महत्वपूर्ण भूमिका को निभाया है। समाज कार्य के द्वारा जो भी प्रयास किया गया है, वह उल्लेखनीय है।

4.2 भूमिका

उन्नीसवीं शताब्दी से इक्कीसवीं शताब्दी तक इसकी मुख्य मान्यता यह है कि समाज कार्य के इतिहास का समझना तथा भविष्य के लिए नये विकल्पों को जानने का प्रयास करना, विशेष रूप से जब समाज कार्य की

भूमिका प्रश्नवाचक थी तथा इसका किसके साथ सम्बन्ध है। इंग्लैण्ड में 1950 तक समाज कार्य षिक्षा का शुभारंभ कहीं भी नही हो पाया था। समाज कार्य के क्षेत्र में प्रषिक्षित जनषाक्ति बहुत कम थी क्योंकि प्रषिक्षण की सुविधाएँ ही उपलब्ध नही थीं किन्तु मानसिक स्वास्थ्य, चिकित्सकीय समाज कार्य, बच्चों की देख-रेख, परिविक्षा इत्यादि विषिष्ट क्षेत्रों में प्रषिक्षण प्रदान करने के लिए अल्पकालीन प्रषिक्षण कार्यक्रम चलाये जाते थे।

4.3 कर्नेजी प्रतिवेदन

कार्नेजी की पहली रिपोर्ट (1947) जो समाज कार्यकर्ताओं के सेवायोजन एवं प्रशिक्षण से सम्बन्धित थी, के अंतर्गत इस बात की संसस्तुति की गई कि किसी विष्वविद्यालय के अंतर्गत स्वतंत्र रूप से चलने वाला समाज कार्य विद्यालय खोला जाए।

संस्तुति के आधार पर एक परिषद का गठन किया गया। 1950 में इस एक वर्षीय वैयक्तिक समाज कार्य सम्बन्धी परा प्रमाण-पत्र के लिए पाठ्यक्रम बनाने के लिए उत्तरदायित्व सौंपा गया। इस समिति ने इस मान्यता के आधार पर एक सामान्य पाठ्यक्रम बनाया कि विभिन्न क्षेत्रों में कार्य करने वाले सभी समाज कार्यकर्ताओं को एक सी मूलभूत निपुणता की आवष्यकता होती है। समाज कार्यकर्ताओं को मानव सम्बन्धी ज्ञान सर्वप्रथम प्रदान किया जाना चाहिए क्योंकि वे चाहे जहाँ कार्य करें उन्हें एक ही प्रकार के व्यक्ति मिलेगें।

कार्नेजी ट्रस्ट की दूसरी रिपोर्ट 1951 में प्रकाशित हुई। इसके अंतर्गत इस विद्यालय का नाम बदलकर समाज कार्य विद्यालय के स्थान पर व्यावहारिक समाज अध्ययन संस्थान कर दिया गया।

4.4 समाज कार्य शिक्षा

1951 में टाविस्टाक क्लीनिक के मानसिक स्वास्थ्य के क्षेत्र में कार्य करने वाले समस्त कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षण देने के लिए एक वर्ष का प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाने का निर्णय लिया। 1959 तक 24 समाज विज्ञान विभागों में से 6 में व्यावसायिक समाज कार्य षिक्षा प्रदान की जाने लगी थी।

1950 से अब तक जब सेटलमेंट आन्दोलन अपने समापन की ओर था उसी समय वैयक्तिक समाज कार्य अपने चरम स्थिति कीओर बढ़ रहा था। वास्तव में 1950 के दशक और 1960 के दशक के प्रारम्भिक चरण में सामूहिक क्रिया समाज कार्य के एक भाग के रूप में प्रस्तुत करता है।

1959 में राष्ट्रीय बीमा कानून में संशोधन किया गया। समान कर प्रणाली के स्थान पर सेवायोजक तथा कर्मचारी की अवकाश ग्रहण पेंशन के अंशदान तथा लाभों का एक क्रमिक कार्यक्रम चलाया गया।

पहला द्विवर्षीय स्नातकोत्तर समाज कार्य षिक्षा का कार्यक्रम 1966 में यार्क विश्वविद्यालय में प्रारंभ किया गया। ससेक्स विश्वविद्यालय में 14 महीने के शैक्षिक पाठ्यक्रम को दो वर्ष का बना दिया गया। इसी प्रकार नाटिंघम विष्वविद्यालय में भी दो वर्षीय स्नोतकोत्तर समाज कार्य पाठ्यक्रम प्रारंभ किया गया। अक्टूबर, 1966 में क्रमिक अंषदानों एवं लाभों के इसी सिद्धान्त को आय से सम्बन्धित पूरकों को प्रदान करने के लिए भी लागू किया गया और इसके अधीन बेकारी, बीमारी तथा विधवाओं को समान दर पर प्रदान किये जाने वाले लाभ क्रमिक दर पर दिये जाने लगे। 1970 के अंत तक समाज कार्य की सम्पूर्ण षिक्षा व्यक्ति, समूह तथा समुदाय को आधार मानकर समान रूप से प्रदान की जाती थी। 1975 में इंग्लैण्ड के 35 विश्वविद्यालयों में सामाजिक प्रशासन तथा समाज कार्य के विभाग थे।

1970 में रेडिकल जरनल केस काॅन की स्थापना को इस प्रक्रिया को अत्यधिक बल मिला और समाज कार्य की अवधारणा के महत्व को स्वीकार किया जाने लगा। 1970 के दशक के उत्तरार्ध में विभिन्न प्रकार के विषय पूर्ण रूप से स्पष्ट नजर आने लगे तथा 1980 के दशक के प्रारम्भ में Bailey और Brake ;1975द्ध Jores(1983) तथा Simpkin (1983) यूके के प्रतिनिध थे जो कि सैटलमेंट आन्दोलन के प्रतिभागी थे जिसे बाद रेडिकल समाज कार्य के नाम से जाना गया। रेडिकल समाज कार्य को मान्यता के आधार पर समाज कार्यकर्ता अत्यधिक क्षमतावान थे जो कि नीतियों को परिवर्तित करा सकते थे। रेडिकल समाज कार्य आन्दोलन का अध्ययन करने से स्पष्ट होता है कि वह वर्ग पर आधारित था जिसमें सामान्यतः प्रजाति, जेण्डर, अपंगता आदि पर कम ध्यान दिया गया।

4.5 सामाजिक सुरक्षा लाभ

1975 में सामाजिक सुरक्षा लाभ अधिनियम बनाया गया जो इंग्लैण्ड के निवासियों को व्यापक सामाजिक सुरक्षा प्रदान करते हुए समाज कल्याण के विकास की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। अप्रैल 1976 में कर्मचारियों द्वारा दिये जाने वाले अंषदान को उनकी आय से पूर्णरूपेण सम्बद्ध कर दिया गया और अंषदानों की समान एवं क्रमिक दरों को समाप्त कर दिया गया। जार्डन ने 1984 में बताया है कि संगठित समाज कार्य के कार्यकलापों के विकास एवं वृद्धि का अर्थ तीन विभिन्न तरीकों से निकाला जा सकता है। प्रथम प्रकार में वैयक्तिक समाज कार्य पर केन्द्रित किया जा सकता है। जिसका उद्भव वातव्य संगठन समिति द्वारा हुआ। द्वितीय प्रकार में समाज कार्य की भूमिका सामाजिक प्रशासन विशेष रूप से निर्धनता से निजात दिलाने विभिन्न प्रकार से सम्बन्धित है। जिसका उद्भव मुख्य रूप से निर्धन अधिनियम के पारित होने से हुआ साथ ही दातव्य संगठन समिति के कार्यों को भी आगे की ओर अग्रसर किया। तीसरे प्रकार में समाज कार्य की भूमिका का केन्द्र सामाजिक क्रिया पर आधारित रहा है जो कि विशेष रूप से सैटलमेंट आन्दोलन द्वारा प्रारम्भ हुआ।

1986 में सामाजिक सुरक्षा अधिनियम पारित किया गया था। इसके अधीन सम्पूर्ण व्यवस्था में व्यापक सुधार किये गये है इनमें राज्य की आय से सम्बन्धित पेंशन योजना वैयक्तिक एवं व्यावसायिक पोषण योजनाओं को प्रोत्साहित करने वाली नवीन व्यवस्थाओं तथा पारिवारिक आय पूरक, पूरक लाभ एवं आवास लाभ के स्थान पर आय ये सम्बन्धित अनेक प्रकार के लाभों को प्रदान किया जाना उल्लेखनीय है। अप्रैल 1987 में सामाजिक कोष से मातृ एवं दाह संस्कार पर होने वाले व्यय हेतु धनराशि दिये जाने का प्रावधान किया गया।

वर्तमान समय में राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा, वैयक्तिक समाज सेवाएँ तथा सामाजिक सुरक्षा इंग्लैण्ड में पाई जाने वाली समाज कल्याण व्यवस्था के प्रमुख अंग है। राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा के अंतर्गत सभी नागरिकों को उनकी आय पर ध्यान दिये बिना व्यापक रूप से चिकित्यकीय सेवायें प्रदान की जा रही हैं स्थानीय प्राधिकरण, वैयक्तिक समाजसेवी एवं ऐच्छिक संगठन वृद्धों, असमर्थो, तथा देखभाल की आवष्यकता रखने वाले बच्चों को सहायता एवं परामर्ष प्रदान करते हैं। सामाजिक सुरक्षा व्यवस्था वित्तीय आवष्यकता रखने वाले व्यक्तियों को एक मूलभूत जीवन स्तर का आष्वासन प्रदान करती है और इसके लिए इस व्यवस्था के अधीन रोजी-रोटी कमान में असमर्थता की अवधि में आय प्रदान की जाती है तथा परिवारों को सहायता दी जाती है और असमर्थता के कारण होने वाले अतिरिक्त व्यय का वहन करने के लिए सहायता प्रदान की जाती है।

इंग्लैण्ड में सार्वजनिक कल्याण और सामाजिक बीमा योजनाओं के प्रसार के पश्चात् भी निजी सामाजिक संस्थाओं के लिए कार्य करने के अनेक अवसर हैं। विशेष प्रकार से ऐच्छिक संस्थाएं वृद्धों, रोगियों, असमर्थों एवं

नवयुवकों के लिए सेवाएं उपलब्ध करती है। ऐच्छिक संस्थाओं के अन्तर्गत निम्नलिखित प्रकार की सामाजिक सेवाएं प्रदान की जाती हैः-

प्रसूति तथा वृद्धावस्था गृह, स्वास्थ्य निरीक्षण, माताओं एवं शिशुओं की रक्षा, क्षयरोग से ग्रस्त रोगियों के लिए चिकित्सालय, मानसिक न्यूनता से ग्रस्त बच्चों एवं प्रौढ़ व्यक्तियों के लिए आवास, रोगियों के लिए उत्तरक्षा सेवाएं बाल अपराधियों एवं प्रौढ़ अपराधियों के लिए परीक्षण एवं करावकाश की सेवाएं, अल्प व्यस्कों, वृद्धों एवं वृत्तिहीनों के लिए मनोरंजन गृह, विवाह सम्बन्धी मार्ग प्रर्दशन संस्थाएं, शिशु मार्ग प्रदर्शन चिकित्सालय, विपत्ति सहायता, वृद्धों के लिए उनके निवास स्थानों अथवा संस्थानों में वैयक्तिक सहायता एवं ग्रामीण क्षेत्रों में सांस्कृतिक एवं शैक्षिक केन्द्रों का आयोजन। इंग्लैण्ड की ऐच्छिक कल्याणकारी संस्थाओं के प्रमुख कार्यों को चार भागों में विभाजित किया जा सकता है।

1. नये परीक्षण करना और समाज कार्य की नई दिशाएं विकसित करना ताकि यदि वे सफल हों तो उन कार्यों को राजकीय संस्थाएं ग्रहण कर सकें।

2. जहां सार्वजनिक सेवाएं अपर्याप्त हों वहां सहायक सेवाएं प्रदान करना और वैयक्तिक रक्षा एवं उपदेश देना।

3. समाज कार्य सेवाओं का अर्थ जतना को समझाना और विधायकों एवं राजकीय संस्थाओं को उन समस्याओं से परिचत कराना जिन पर उनका ध्यान केन्द्रित हो सका है।

4. समुदाय की सामाजिक एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी आवश्यकताओं का पता लगाने के लिए सामाजिक अन्वेषण करना जिससे सामाजिक विधान बनाए जा सके और राज्य की ओर से समस्या को सुलझाने का प्रबन्ध हो सके।

ऐच्छिक सामाजिक संस्थओं की क्रियाओं में ऐच्छिक कार्यकर्ता भी भाग लेते हैं परन्तु वे प्रशिक्षण प्राप्त समाज कार्यकर्ताओं के निरीक्षण में कार्य करते हैं।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा का दायित्व केन्द्र सरकार द्वारा प्रत्यक्ष रूप से ग्रहण किया जाता है। यह सहायता इसके एजेण्टों के रूप में कार्य करने वाले स्वास्थ्य प्राधिकरणों एवं बोर्डो दी जाती है। केन्द्र सरकार सामाजिक सुरक्षा के लिए भी प्रत्यक्ष रूप से उत्तरदायी है। स्थानीय प्राधिकरण के द्वारा प्रदान की जाने वाली वैयक्तिक समाज सेवाओं के क्षेत्र में केन्द्र सरकार अप्रत्यक्ष रूप से उत्तरदायित्व वहन करती है।

इस प्रकार ऐच्छिक संस्थाएं अब अपना अधिकतर ध्यान आकर्षित सहायता की ओर न देकर वैयक्तिक समस्याओं और बाल अपराध सम्बन्धी समस्याओं एवं को सुलझाने की ओर देती है। व्यक्तियों की संवेगात्मक समस्याओं को सुलझाने में ऐच्छिक संस्थाओं का बड़ा महत्व है।

4.6 सारांश

सारांश के रूप में इस अध्याय में समाज कार्य शिक्षा के विकास, स्वास्थ्य एवं बीमा तथा सामाजिक सुरक्षा से सम्बन्धित प्रावधानों अथवा अधिनियमों से प्राप्त होने वाले लाभों के विषय में जानकारी प्राप्त की गयी है।

4.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

(1) सन् 1950 के पश्चात् इंग्लैण्ड में समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास की रूपरेखा को स्पष्ट कीजिए।

(2) सामाजिक सुरक्षा लाभ से सम्बन्धित प्रावधानों का उल्लेख कीजिए।

(3) कर्नेजी रिपोर्ट का संक्षिप्त विवरण दीजिए।

(4) समाज कार्य शिक्षा के विकास का मूल्यांकन कीजिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. Friedlander, A.W.: Indtrodution of Social Welfare, Prentice Hall, INC. New York. 1995.
2. Thomas P.T.: Profession Traning in Social Work, in Sugata Das Gupta (ed) "Towards in philosophy of Social work in India Popular Books Services, New Delhi, 1967.
3. Ahamad, Mirza Raffiuddin, Samaj Kayra : Darshan evam Pranaliyan, Repid Books Services, Lucknow, 1969.
4. Mishra, P.D. Social Work Profession in India, New Royal Book Co., Lucknow, 2004.
5. Sudan K.S., Samaj Karya : Siddant evam Abhyas, N.S. Publications Lucknow, 2011.
6. Mishra, P.D., Samaj Karya : Itihas, Darshan evam Pranaliyan, New Royal Book Co. Lucknow, 2004.
7. Singh, D.K., and Bhartiya, A.K., Social Work : Philosophy and Methods, New Royal Book Co. Lucknow, 2009.
8. Shastri R.R., Social Work Tradition in India, Welfare Forum and Research Organization, Varanasi , 1986.
9. Dinitto, D.M. and Mcneece, C.A. Social Work Issues and Opportunities : In a Challenging Profession, LYCEUM Books INC, Chicago, 2008.
10. O.Hare, Thomas, Essential Skills of Social Work Practics: Assesment Intervetion Evaluation LYCEUM Books INC, Chicago, 2009.
11. Adams, R.; Dominelli, L. and Payne, M.; Social Work : Themes, Issues and Critical Debates, Second edition (ed), Palgrave, New York, 1998.
12. Clark, S. Social Work as Community Development: A Management Model for Social Change, Second Eddition (ed), Ashgate Publishing Ltd., England, 2000.
13. Colby, Ira and Dziegielewski, S., Introdution to Social Work: The People's Profession , Second Eddition (ed) LYCEUM Books INC, Chicago, 2004.
14. Srivastava S.P. "Addressing the future of Social Work in India" Social Work Education in India (ed) by S.Signh and S. Swaminathan New Royal Books Co. 2003.
15. Singh, Surendra, : Future Chellanges before Social Work Proffesion in India and reuired response, contemporary Social Work Volume 12 October 1995.

ईकाई-5

संयुक्त राज्य अमेरिका में समाज कार्य का ऐतिहासिक विकास (1800 से पूर्व)

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 भूमिका

5.3 ऐच्छिक सेवाएं

5.4 बच्चों की रक्षा हेतु कार्य

5.5 अमेरिका में राज्य का हस्तक्षेप

5.6 सार्वजनिक आश्रम से सम्बन्धित कार्य

5.7 सारांश

5.8 अभ्यास प्रश्न

5.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

5.0 उद्देश्य

प्रस्तुत अध्याय के अध्ययन के पश्चात आप –

1.अमेरिका में समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास से अवगत हो जायेंगे।

2. अमेरिका में प्रारम्भिक समय में किये जा रहे स्वैच्छिक कार्यों, दान, बच्चों की रक्षा हेतु कार्य तथा लोगों के लिए सार्वजनिक आश्रम के विषय को स्पष्ट रूप से समझ सकेंगे।

3. सन् 1800 से पूर्व अमेरिका में लोगों की सहायता हेतु जो भी संयुक्त रूप से प्रयास किये गये ,उनसे अवगत हो सकेंगे

5.1 प्रस्तावना

संयुक्त राज्य अमेरिका में समाज कार्य का विकास का प्रारम्भ जिस प्रकार इंग्लैण्ड में हुआ था उसी प्रकार हुआ। प्रारम्भिक समय में स्वैच्छिक तथा धार्मिक भावना से प्रेरित होकर के लोगों ने असहाय एवं आवश्यकताग्रस्त लोगों की सहायता करने का प्रयास किया। यही प्रयास बाद में एक व्यावसायिक रूप को प्राप्त किया।

5.2 भूमिका

अमेरिका में व्यक्तियों की एक बड़ी संख्या ने सत्रहवीं शताब्दी के में आरम्भ योरप से प्रवेश किया और वहां एक नवीन बस्ती की स्थापना की। अमेरिका की प्राचीन बस्तियों की संस्कृति योरप की प्राचीन सभ्यता और संस्कृति पर आधारित थी। वहां के राजनैतिक स्वरूपों, आर्थिक क्रियाओं, सामाजिक प्रथाओं, रूढ़ियों और धार्मिक दृष्टिकोणों के निर्माण में योरप की परिस्थिति का महत्वपूर्ण स्थान है। समाज कल्याण के क्षेत्र में भी अमेरिका की बस्तियों ने योरप और विशेषतर इंग्लैण्ड का अनुसरण किया। अमेरिका के ऐच्छिक एवं राजकीय समाज कार्य का आधार बहुत कुछ उन विचारों एवं व्यवहारों पर है जिनका जन्म और विकास इंग्लैण्ड में हुआ। समाज कल्याण पर इंग्लैण्ड का प्रमुख प्रभाव यह पड़ा कि इंग्लैण्ड के समान अमेरिका में भी ऐच्छिक दान (प्राइवेट चैरिटी) पर बल दिया जाने लगा आरम्भ में अमेरिका में भी राज्य का कार्य केवल संरक्षण करना ही समझा जाता था। समाज कल्याण राज्य का उत्तरदायित्व न समझा जाता था।

5.3 ऐच्छिक सेवाएं (Voluntry Services)

आरम्भ में दान वितरण का कार्य मुख्य रूप से चर्च द्वारा होता था। दान देते समय निर्धन व्यक्ति की परिस्थिति की कोई जांच नहीं की जाती थी। बल्कि केवल दयालुता की भावना से प्रेरित होकर धार्मिक नेता दान देते थे। उस समय जो समाज कार्य होता था उसे हम दान वितरण का कार्य ही कह सकते हैं।

चूंकि दान का आधार धर्म पर था इसलिए दान केवल उन्हीं लांगों को दिया जाता था जिनका व्यवहार नैतिक रूप से संतोषजनक हो और जो एक विशेष धर्म के मानने वाले हों। समान रूप से चर्च के अधिकारी अभावग्रस्त व्यक्तियों को उनके घरों पर ही सहायता देते थे। अधिकतर सेवा वैयक्तिक या पारिवारिक सम्पर्क द्वारा उपलब्ध की जाती थी परन्तु निराश्रितों की संस्थात्मक रक्षा पर भी बल दिया जाता था। इसके लिए आश्रमों का प्रयोग किया जाता था।

कभी-कभी आश्रम रोगियों, वृद्धों, निर्धनों एवं छोटे बच्चों के लिए स्थापित किये जाते थे और उनमें प्रत्येक प्रकार के लोग रखे जाते थे, अर्थात् पागल व्यक्ति, अनाथ बच्चे, वृद्ध व्यक्ति, वेश्याएं एवं अन्य प्रकार के व्यक्ति बिना किसी पृथकीकरण के रखे जाते थे। अधिकतर आश्रमों में समर्थ व्यक्तियों को कार्य करने पर विवश किया जाता था और आश्रित व्यक्तियों को भोजन, वस्त्र एवं आवास के रूप में संरक्षण उपलब्ध किया जाता था। सामान्य रूप से आश्रम वासियों को कोई शैक्षिक एवं सांस्कृतिक सुविधाएं उपलब्ध नहीं होती थी। बच्चों की औपचारिक शिक्षा का भी प्रायः प्रबन्ध न होता था।

5.4 बच्चों की रक्षा हेतु कार्य (Work for Protection of Children)

आरम्भ में बच्चों के लिए विशेष प्रकार की सेवाएं उपलब्ध थी। सबसे अधक प्रयोग तो आश्रमों का ही होता था। इसके अतिरिक्त अनाथ बच्चों के लिए आरफन असाइलम्स की स्थापना की गई। बच्चों की रक्षा का एक और रूप यह था कि आश्रित बच्चों को एक ठेका पद्धति के अन्तर्गत ऐसे परिवारो को दे दिया जाता था जो उन्हें भोजन, निवास स्थान और औद्योगिक शिक्षा प्रदान करें और इसके बदले में उन बच्चों से निजी कार्य लेते रहें। कभी बच्चों के लिए निःशुल्क प्रतिपोषक गृह उपलब्ध किये जाते थी।

5.5 अमेरिका में राज्य का हस्तक्षेप (State Intervention in USA)

अमेरिका में समाज कार्य के क्षेत्र में राज्य का योगदान कोई नवीन घटना नहीं हैं। आरम्भ में ही अमेरिका की बस्तियों ने इंग्लिस पूअर ला को ग्रहण किया और इस प्रकार सार्वजनिक उत्तरदायित्व के सिद्धान्त की स्वीकृति हुई।

1647 में एक विधान पास हुआ जिसके अनुसार यह निश्चित हुआ कि प्रत्येक नगर निर्धनों की सहायता का प्रबन्ध करेगा, असमर्थों का पालन पोषण करेगा, समर्थ व्यक्तियों को रोजगार उपलब्ध करेगा और इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए (निरीक्षक) नियुक्त करेगा। निर्धनों के निरीक्षक की नियुक्ति इंग्लैण्ड के अनुभव के आधार पर की गई। यह निरीक्षक बड़े महत्वपूर्ण समझे जाते थे। इनके अनेक कार्य होते थे। यह निश्चित करते थे कि नागरिकों को कितना अंशदान करना है और साथ ही अंशदान एकत्र करने का कार्य भी करते थे। जो धन एकत्र होता था वह रोगियां की चिकित्सा, निराश्रितों के आवास, वस्त्र आदि पर व्यय होता था। इसके अतिरिक्त निरीक्षक निर्धनों को सहायता देने के पूर्व उनके सम्बन्धियों की आर्थिक स्थिति का पता लगाते थे और यदि उनकी आर्थिक स्थिति अच्छी होती थी तो उन्हें अपने सम्बन्धियों की सहायता करने पर विवश करते थे। यदि किसी निर्धन के पास कोई सम्पत्ति होती थी तो उसे नगर को हस्तांतरित करना पड़ता था। नगर उसका प्रबन्ध करता था और उसकी आवश्यकतानुसार उसको सहायता देता रहता था। जो विशेष प्रकार के व्यक्ति होते थे उन्हें नगर की बैठकों में प्रस्तुत किया जाता था ताकि उन्हें विशेष रूप से सहायता मिल सके।

न्यूयार्क में रेने सेलर्सविक में भिक्षुक गृह 1657 में स्थापित किया गया था तथा प्लाईमाउथ कालोनी द्वारा स्वस्थ शरीर वाले निर्धनों के लिए पहली कार्यषाला के निर्माण का आदेश 1658 में दिया गया। कालांतर में ऐसे भिक्षुकगृहों एवं कार्यषालाओं को कुछ उपननिवेषों के बड़े शहरों में स्थापित किया गया और इस प्रकार अकिंचनों के भरण-पोषण का उत्तरदायित्व सामान्यतया या तो कस्बों अथवा काउन्टियों द्वारा ग्रहण किया जाता था। सर्वप्रथम 1675 में मैसाचुसेट्स राज्य ने भिखारियों के आवश्यक व्ययों के भुगतान का उत्तरदायित्व ग्रहण किया। इस उत्तरदायित्व के अधीन ऐसे व्यक्तियों को सहायता प्रदान की जाती थी जो थोड़े समय पूर्व ही इस राज्य में आये हुए होते थे अथवा जिन्हें बाहर जाने की चेतावना दी गई होती थी। बाद में अन्य राज्यों ने भी इस उत्तरदायित्व को ग्रहण किया। कालान्तर में राज्यों ने ऐसी संस्थाओं को सहायता देना बंद कर दिया जो बाधितों की सहायता करती थी क्योंकि इनकी संख्या अत्यधिक बढ़ गई थी। मैसोचुसेट्स के विधान मण्डल में 1699 में कानून बना जिसके अधीन आवारा, भिखारियों एवं अव्यवस्थित लोगों को सुधारगृहों में रखते हुए काम में लगान का प्रावधान किया गया।

5.6 सार्वजनिक आश्रम से सम्बन्धित कार्य (Public Shelters Related Work)

1723 में न्यूपोर्ट में पहला आश्रम स्थापित हुआ। इस आश्रम के निवासियों को इस बात की अनुमति प्राप्त थी कि वे अपने ऊपर होने वाले व्यय का कुछ भाग भिक्षा द्वारा एकत्र कर लें। मानसिक रूप से बीमारों की चिकित्सकीय देखभाल की व्यवस्था सर्वप्रथम फिलाडेल्फिया के भिाक्षगृहों में 1732 में की गयी। उसके बाद 1753 में पेन्सिलवैनियां के एक चिकित्सालय में भी यह सुविधा उपलब्ध कराई गई।

1753 में प्राविडेंस काउन्टी वर्क हाउस की स्थापना हुई। इसके निर्माण का व्यय नागरिकों को सहने करना पड़ता था। वर्कहाउस का निरीक्षक होता था जिसको यह अधिकार था कि जो व्यक्ति आत्मस्वालम्बन के योग्य न हों उन्हें वर्कहाउस में भर्ती करे। बच्चे भी इसी प्रकार भर्ती किये जा सकते थे। वर्जीनियां की विलियम्सबर्ग पूर्वी

राज्य ईस्टर्न स्टेट हास्पिटल ऐसी पहली संस्था है जिसकी स्थापना 1773 में मानसिक रूप से असामान्य व्यक्तिों के लिए की गयी थी।

5.7 सारांश

सारांश के रूप में संयुक्त राज्य अमेरिका में यह कहा जा सकता है कि समाज कार्य की उत्पत्ति धार्मिक तथा दान के प्रेरणास्वरूप हुई। जिसके फलस्वरूप समाज कार्य के विकास को एक आधार प्राप्त हो। धार्मिक सेवा तथा दान की प्रथा के द्वारा लोगों की सहायता की जाने लगी।

5.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

(1) अमेरिका में समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास के प्रारम्भिक चरणों का उल्लेख कीजिए।

(2) बच्चों की रक्षा हेतु किये गये कार्यों का उल्लेख कीजिए।

(3) अमेरिका में समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास के प्रारम्भिक चरण में राज्य के द्वारा किये गये हस्तक्षेपों को स्पष्ट कीजिए।

(4) समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास में धर्म की भूमिका का उल्लेख कीजिए।

(5) निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

(अ) सार्वजनिक आश्रम

(ब) राजकीय हस्तक्षेप

(स) स्वैच्छिक सेवा

(द) ऐच्छिक दान

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. Dinitto, D.M. and Mcneece, C.A. Social Work Issues and Opportunities: In a Challenging Profession, LYCEUM Books INC, Chicago, 2008.
2. O'Hare, Thomas, Essential Skills of Social Work Practices: Assessment Intervention Evaluation LYCEUM Books INC, Chicago, 2009.
3. Adams, R.; Dominelli, L. and Payne, M.; Social Work : Themes, Issues and Critical Debates, Second edition (ed), Palgrave, New York, 1998.
4. Clark, S. Social Work as Community Development: A Management Model for Social Change, Second Edition (ed), Ashgate Publishing Ltd., England, 2000.
5. Colby, Ira and Dziegielewski, S., Introduction to Social Work: The People's Profession , Second Edition (ed) LYCEUM Books INC, Chicago, 2004.
6. Srivastava S.P. "Addressing the future of Social Work in India" Social Work Education in India (ed) by S.Signh and S. Swaminathan New Royal Books Co. 2003.
7. Singh, Surendra, : Future Challenges before Social Work Profession in India and required response, contemporary Social Work Volume 12 October 1995.

8. Friedlander, A.W.: Introduction of Social Welfare, Prentice Hall, INC. New York. 1995.
9. Thomas P.T.: Profession Training in Social Work, in Sugata Das Gupta (ed) "Towards in philosophy of Social work in India Popular Books Services, New Delhi, 1967.
10. Ahamad, Mirza Raffiuddin, Samaj Kayra : Darshan evam Pranaliyan, Repid Books Services, Lucknow, 1969.
11. Mishra, P.D. Social Work Profession in India, New Royal Book Co., Lucknow, 2004.
12. Sudan K.S., Samaj Karya : Siddant evam Abhyas, N.S. Publications Lucknow, 2011.
13. Mishra, P.D., Samaj Karya : Itihas, Darshan evam Pranaliyan, New Royal Book Co. Lucknow, 2004.
14. Singh, D.K., and Bhartiya, A.K., Social Work : Philosophy and Methods, New Royal Book Co. Lucknow, 2009.
15. Shastri R.R., Social Work Tradition in India, Welfare Forum and Research Organization, Varanasi , 1986.

इकाई -6

संयुक्त राज्य अमेरिका में समाज कार्य का ऐतिहासिक विकास (1800 से 1900)

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 भूमिका

6.3 निराश्रितों की समस्या

6.4 निर्धनों की सहायता

6.5 येट्स प्रतिवेदन

6.6 विकलांगों की सहायता

6.7 दान संगठन आन्दोलन

6.8 सेटलमेन्ट हाउस आन्दोलन

6.9 सारांश

6.10 अभ्यास प्रश्न

6.11 सन्दर्भ ग्रन्थ

6.0 उद्देश्य

प्रस्तुत अध्याय के अध्ययन के पश्चात आप –

1. अमेरिका में सन् 1800 से 1900 के बीच हुए समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास का विश्लेषण कर सकेंगे।
2. अमेरिका में निराश्रितों से सम्बन्धित कार्यों, निर्धनों की सहायता, विकलांगों की सहायता से सम्बन्धित किये गये कार्यों को जान जायेंगे।
3. इस काल में दान संगठन आन्दोलन तथा सेटलमेन्ट हाउस आन्दोलन के प्रभावों तथा येट्स प्रतिवेदन की सिफारिशों का भी विश्लेषण कर सकेंगे।

6.1 प्रस्तावना

संयुक्त राज्य अमेरिका में समाज कार्य का ऐतिहासिक विकास का प्रारम्भ जिस प्रकार धार्मिक एवं स्वैच्छिक भावना से हुआ था उसी भावना ने कालान्तर में अपने उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु लगातार कार्य करते रहे। इस काल में दो महत्वपूर्ण आन्दोलन दान संगठन तथा सेटलमेन्ट हाउस ने अमेरिका पर अत्यधिक प्रभाव डाला। जिसका परिणाम यह हुआ कि समाज कार्य अपनी प्रारम्भिक अवस्था से संस्थागत अवस्था की ओर बढ़ा।

6.2 भूमिका

आरम्भ में अमेरिका में यह समझा जाता था कि यदि किसी व्यक्ति को आर्थिक अभाव के कारण सहायता की आवश्यकता हो तो इस परिस्थिति का उत्तरदायित्व स्वयं उसी व्यक्ति पर है। व्यक्ति के गुणों का अनुमान उसकी आर्थिक सफलता से लगाया जाता था। आर्थिक सहायता की आवश्यकता व्यक्ति के लिए एक कलंक था।

6.3 निराश्रितों की समस्या

आरम्भ में अमेरिका में यह समझा जाता था कि यदि किसी व्यक्ति को आर्थिक अभाव के कारण सहायता की आवश्यकता हो तो इस परिस्थिति का उत्तरदायित्व स्वयं उसी व्यक्ति पर है। व्यक्ति के गुणों का अनुमान उसकी आर्थिक सफलता से लगाया जाता था। आर्थिक सहायता की आवश्यकता व्यक्ति के लिए एक कलंक था।

निराश्रितों की रक्षा विभिन्न प्रकार से की जाती थी। राजकीय एवं ऐच्छिक आश्रम जो सामान्यता पुअर हाउस कहे जाते थे उनकी सहायता करते थे। इसके अतिरिक्त निराश्रितों की रक्षा ऐच्छिक कल्याणकारी संस्थाओं द्वारा होती थी जो उन्हें असंस्थात्मक सहायता देती थी। इस प्रकार की एक संस्था न्यूयार्क सोसाइटी फार दी प्रिवेन्शन आफ पौपरिज्म थीं जो 1817 में स्थापित हुई थी। इस संस्था का उद्देश्य निराश्रिता का निवारण था। इस संस्था के अनुसार निराश्रिता के 10 कारण थे:

1. अज्ञानता,
2. आलस्य,
3. असंयम,
4. धन का दुरूपयोग,
5. अविवेक-पूर्ण एवं शीघ्रता से किये गये विवाह,
6. लाटरी,
7. रेहन रखले वाले व्यक्ति,
8. वेश्यावृत्ति,
9. जुआ घर, और
10. दान वितरण संस्थाएं।

इस संस्था ने नगर को छोटे-छोटे भगों में विभाजित कर दिया और प्रत्येक क्षेत्र में दो या तीन निरीक्षक नियुक्त कर दिये जिनका कार्य भिक्षावृत्ति को रोकना था। इसके अतिरिक्त इस संस्था ने सेविंग बैंक एवं सेवायोजन

कार्यालय स्थापित किये, बीमा योजना चलाई और घरों पर कार्य करने के लिए सामग्रियां उपलब्ध की। साथ ही साथ इस बात का भी प्रयास किया गया कि नगर में दान वितरण एक ही माध्यम से हो। समाजकार्य के क्षेत्र में इस संस्था का बड़ा ऐतिहासिक महत्व है। इस संस्था ने कारणों को ज्ञात करने औरसुधार का कार्यक्रम बनाने का प्रयास किया। परन्तु यह अपने कार्यक्रम को चलाने में सफल न हो सकी।

6.4 निर्धनों की सहायता

Elizabethan Poor Law की भांति अमेरिका मे भी ओवरसियर एवं निर्धन के सुपरवाइजर्स नगरों एवं गांवों में नियुक्त किए गए। इनका कार्य निर्धन सहायता मांगने वालों के साधनों का पता लगाना, निर्धन कर वसूल करना और निर्धन व्यक्तियों को सहायता प्रदान करना था। **Elizabethan Poor Law** के सिद्धान्त को मानते हुए प्रत्येक नगर में निर्धनों के भरण-पोषण की व्यवस्था की गई और उन्हें खाद्य पदार्थ, वस्त्र, ईधन और अन्य आवश्यक घरेलू वस्तुएं दिये जाने की व्यवस्था की गई। यह सुविधा केवल वैधानिक रूप से अमेरिका में आकर बसने वालों की ही उपलब्ध थी जो तीन माह से लेकर पांच वर्ष तक के निवासी हों। निर्धन सहायता दो प्रकारों में ही दी जाती थी:

1. बाह्य सहायता जो खाद्य पदार्थ, वस्त्र आदि वस्तुओं के रूप में दी जाती थी, और

2. विक्रय पद्धति या खेती/कृषि पद्धति अर्थात् निर्धन को ऐसे नागरिकों के पास रखना जो इस कार्य के लिए सरकार से कम पैसा मांगें। खेती पद्धति के अन्तर्गत विधवाओं और अपंग एवं वृद्धों को थोड़े-थोड़े समय के लिए कई घरों में रखा जाता था। निर्धन सहायता पर आने वाले व्यय की पूर्ति निर्धन कर और कुछ अपराधों के लिए जुर्मानों से की जाती थी।

इंग्लैण्ड और अमेरिका के निर्धन सहायता कार्यों में कई भेद मिलते हैं। सत्रहवीं और अठारहवीं शताब्दी के यह भेद तो मौलिक भेद थेः

1. इंग्लैण्ड में निर्धन सहायता की पद्धति के अन्तर्गत निर्धनों को निर्धन गृहों और कार्य गृहों में रखा जाता था जबकि अमेरिका मे कुछ बड़े नगरों में ही कुछ भिक्षा गृह और सुधार गृह थे, और

2. इंग्लैण्ड में व्यक्तिगत दान की सहायता से निर्धनों की सहायता चिकित्सालयों, अनाथालयों, शरणगृहों के माध्यम से की जाती थी। अमेकिरा में व्यक्तिगत दान का स्थान बहुत कम था जो था भी वह अठारहवीं शताब्दी के अन्त तक समाप्त हो गया।

सरकारी निर्धन सहायता के साथ-साथ धार्मिक संस्थाओं द्वारा भी निर्धनों को सहायता दी जाती थी। परन्तु यह सहायता प्रत्येक चर्च अपने ही धर्मक वर्ग के निर्धनों को देते थे। असामाजिक व्यवहार करने वाले, आलसी व्यक्तियों, मदमत्त, जुआड़ियों आदि को कोई सहायता नहीं दी जाती थी।

एक अन्य प्रकार की गैर सरकारी चैरिटी भी थी जो राष्ट्रीयता पर आधारित थी। इस प्रकार की पहली सहायता समिति बोस्टन नगर में संगठित की गई। आयरिश, डच, जर्मनी और फ्रांस देशों से आए व्यक्तियों ने अपने-अपने देशवासियों के लिए सहायता कार्यक्रम चलाए।

भिक्षागृह के आरम्भ में निर्धनों पर बढ़ते हुए व्यय की आलोचना होले लगी। केवल कुछ राज्यों की सरकारों ने कुछ श्रेणी के निर्धनों पर होने वाले व्यय का उत्तरदायित्व स्थानीय समुदाय (नगर) का ही रहा। स्थानीय सरकारों पर निर्धन सहायता के बढ़ते हुए व्यय का कारण जनसंख्या वृद्धि से निर्धनों की संख्या का बढ़ जाना और फसल की असफलता के कारण बहुत से स्वस्थ शरीर श्रमिकों का निर्धन सहायता मांगना था। इस प्रकार कई

परिवार सरकारी सहायता पर आश्रित होने लगे। इन परिस्थितियों के कारण 1821 और 1823 में अमेरिका के दो राज्यों Massachusetts और New York में समितियां बनाई गयी। यह समितियां इस निर्णय पर पहुंची कि वाह्य कक्ष सहायता (outdoor relief) अधिक खर्चीली, धन नष्ट करने वाली और निर्धनों की नैतिकता को नष्ट करती है। इन समितियों ने भिक्षा गृह और कार्य गृह स्थापित किए और सहायता प्रार्थियों को इन संस्थाओं में रख दिया। परन्तु इन संस्थाओं के माध्यम से भी निर्धनों की दशाओं में प्रोत्याशित सुधार नहीं हुआ क्योंकि इन संस्थाओं मं सभी प्रकार के निर्धनों को एक साथ ही रखा गया। अन्धे, बहरे, अपंग, मानसिक रोगी, बच्चे, वृद्ध, वेश्याएं, अपराधी महिलाएं, पुरूष सभी एक साथ रखे गये।

इन संस्थाओं की दयनीय दशाओं के कारण उन्नीसवीं शताब्दी में निर्धन सहायता में तीन प्रकार के मुख्य परिवर्तन किये गयेः

1. गैर सरकारी चैरिटी सोसाइटीज ने अनाथारलय एवं शरण गृह स्थापित किए और ये अमेरिका के समाज कल्याण क्षेत्र की प्रमुख प्रगतिशील संस्थाएं बन गयी,

2. कुछ श्रेणियों के निर्धनों का उत्तरदायित्व राज्य सरकारों ने अपने ऊपर ले लिया, जैसे मानसिक रोगी, मन्द बुद्धि वाले व्यक्ति और बन्दी अपराधी आदि जिनके लिए स्थानीय स्तर पर सुविधाएं उपलब्ध नहीं थी, और

3. स्थानीय सरकारी सहायता अधिकारियों ने पुरानी सहायता पद्धति को अपमानजनक मानकर उसकी आलोचना करना आरम्भ कर दिया।

6.5 येट्स प्रतिवेदन

1823 में न्यूयार्क में जे0 वी0 एन0 येट्स को निर्धन कानूनों की क्रियाविधि सम्बन्धित सूचना एकत्रित करने का उत्तरदायित्व सौंपा गया। येट्स द्वारा प्रस्तुत किये गये प्रतिवेदन में निर्धनों के दो वर्गो का उल्लेख किया गया हैः

1. ऐसे निर्धनों जिन्हें स्थायी सहायता की आवश्यकता है, तथा

2. अस्थायी निर्धन

येट्स रिपोर्ट में निम्नलिखित संस्तुतियां दी गई है जो कि इस प्रकार है:-

1. प्रत्येक काउण्टी में एक सेवायोजन गृह की स्थाना की जाये जिसके द्वारा बच्चों की शिक्षा और कृषि कार्य के लिए के लिए भूमि प्रदान की जाये,

2. सशक्त निर्धनों तथा आवारों के लिए कार्यगृह उपलब्ध कराया जाये जहाँ पर जबरदस्ती कठिन काम दिया जाये।

3. निर्धन कल्याण के लिए धनराषि एकत्रित करने के उद्देष्य से शराब बनाने वाले कारखानों पर उत्पादन कर लिया जाये,

4. न्यूयार्क की एक काउण्टी में एक वर्ष के निवास के आधार पर वैधानिक बन्दोबस्त करने का नियम बनाया जाये,

5. निष्कासन आदेषों तथा निर्धनों कानूनों से सम्बन्धित मुकदमों में दिये गये फैसलों के विरूद्ध अपील करन की व्यवस्था समाप्त की जाये,

6. 18 से 50 वर्ष के बीच की आयु तथा स्वास्थ्य शरीर वाले किसी भी व्यक्ति को अकिंचन की श्रेणी में न रखा जाये, और

7. गलियों में भीख माँगने वाले व्यक्तियों तथा राज्य के अन्दर अकिंचनों को लाने लोगों को दण्ड दिया जाये।

येट्स रिपोर्ट का अनुसरण करते हुए मैसाचुसेट्स, न्यूयार्क तथा अन्य कई राज्यों में अनाथालयों एवं कार्यग्रहों की स्थापना की गयी। इस रिपोर्ट के तुरन्त बाद 1824 में न्यूयार्क ने काउण्टी निर्धन गृह कानून बनाया। इसके द्वारा अनाथोलयों के प्रबन्ध का कार्य कस्बों से लेकर काउन्टियों को दे दिया गया।

6.6 विकलांगों की सहायता

बहरों के लिए पहला आवासीय स्कूल 1823 में केन्टकीं, डैनविले में खोला गया। 1824 में लेक्सिंगटन में ईसटर्न न्यूनेटिक असाइलम की स्थापना की गयी। मैसाचुसेट्स के असाइलम फार द ब्लाइण्ड (जिसे बाद में परकिन्स इन्स्टीटूयूट तथा मैसाचुसेट्स स्कूल फार द ब्लाइण्ड के नाम से जाना गया) तथा 1832 में न्यूयार्क इन्स्टीट्यूषन फार द ब्लाइण्ड (जिसे बाद में इन्स्टीट्यूषन फार द एजकूषन आफ ब्लाइण्ड के नाम से जाना गया) तथा 1833 में फिलाडेल्फियाँ में अन्धों के लिए एक अन्य संस्था के खोले जाने से प्रेरित होकर ओहियो ने सर्वप्रथम 1837 में एक ऐसी जनसंख्या की स्थापना की जिसकी सम्पूर्ण वित्तीय व्यवस्था राज्य द्वारा की गई। इण्डियाना ऐसा पहला राज्य था जिसने अकिंचन अंधों के भरण-पोषण के लिए 1840 में एक विषेष कानून बनाया। बाद में इसी प्रकार के कानून अन्य राज्यों द्वारा भी बनाये गये। 1843 में न्यूयार्क नगर में असोसियेशन फार इम्प्रूविंग दि कन्डीशन आफ दि पूअर स्थापित हुआ। इसका उद्देश्य उस समय की गंभीर सामाजिक परिस्थितियों का सामन करना और छोटी-छोटी ऐच्छिक संस्थाओं को समन्वित करना था जो एक बड़ी संख्या में उस समय के संकट को दूर करने के लिए स्थापित हुई थी।

इस समिति ने निर्धनों और निराश्रितों में अन्तर किया। निर्धन वह लोग थे जो स्थाई रूप से निराश्रित नहीं होते थे बल्कि जिनमें इस बात की योग्यता होती थी कि यदि उनकी सहायता की जाये तो वे आत्म निर्भर हो सके। निराश्रित वह लोग थे जो स्थाई रूप से निर्धन थे और जिनके व्यक्तित्व में ऐसे दोष थे जिनके कारण पुनर्वास नहीं किया जा सकता था। यह समिति केवल निर्धन व्यक्तियों की सहायता का प्रयास करती थी।

इस समिति ने भी न्यूयार्क को बाईस क्षेत्रों में विभाजित किया। इन क्षेत्रों को तत्पश्चात् दो सौ पच्चीस उपक्षेत्रों में विभाजित कर दिया गया। यह उपक्षेत्र इतने छोटे होते कि एक निरीक्षक प्रत्येक सहायता के प्रार्थी के घर जा सकता था। यह निरीक्षक सामान्यतया धनी पुरूष होते थे जो ऐच्छिक रूप से कार्य करते थे और अभावग्रस्त व्यक्तियों को परिश्रम, संयम और अल्प व्यय का उपदेश देते थे और उनकी सहायता करते थे कि वे अपने अन्दर छिपे हुए गुणों को विकसति कर सकें। यह समिति धन न देकर केवल ऐसा भोजन और वस्त्र देती थी जिसका दुरूपयोग न किया जा सके। आर्थिक सहायता अन्य संस्थाएं, निर्धन व्यक्ति के सम्बन्धी या निरीक्षक व्यक्तिगत रूप से देते थे। समिति सहायता केवल उन्हीं लोगों को देती थी जो नैतिक आदर्शों का पालन करें। इस समिति की ओर से सहायता प्रार्थी की आवश्यकताओं की जांच करने पर ही दी जाती थी कुछ समय उपरान्त इस समिति का सुधारात्मक उत्साह कम हो गया और यह एक मुख्य रूप से सहायता देने वाली संस्था बन गई। 1870 के आर्थिक संकट से यह स्पष्ट हो गया कि निर्धनों की रक्षा के लिए कोई संतोषजनक प्रबन्ध नहीं है और निर्धनों के लिए दान संगठन आन्दोलन की स्थापना हुई।

इंग्लैण्ड में 1844 जार्ज विलियम्स के द्वारा स्थापित किये गये यंग मेन्स क्रिष्चियन एसोषियेषन की सफालता से प्रभावित होकर कैप्टन जे0 वी0 सलीवान ने अमरीका में 1851 में बूस्टन में पहली अमरीकी यंगमेन्स क्रिष्चियन एसोसिएशन की स्थापना की जिसका कार्य युवकों की अनेक प्रकार की आवष्यकताओं की पूर्ति करना था। इसी प्रकार अमरीका में 1886 में ल्यूक्रीषिया ब्वायड पहली यंग वीमेन्स क्रिष्चियन एसोसिएशन की स्थापना बूस्टन में द्वारा की गई।

मूर्खो एंव मंदबुद्धि के युवकों के लिए राज्य द्वारा संचालित स्कूल की सर्वप्रथम स्थापना मैसाचुसेट्स के साउथ बुस्टन में 1848 में की गयी। 1851 में न्यूयार्क में मंदबुद्धि बच्चों के लिए राज्य द्वारा एक विद्यालय की स्थापना की गयी। 1854 में पैन्सिलवैनिया राज्य द्वारा जर्मन टाउन में चल रहे मूर्खो के लिए एक निजी स्कूल को सहायता प्रदान की गई। 1860 में कैलिफोर्निया में बहरों के साथ अंधों के लिए पहले मिश्रित स्केल की स्थापना की गयी। मैसाचुसेट्स ने 1863 में राज्य द्वारा संचालित सभी दान संस्थाओं के अधीक्षण के लिए स्टेट बोर्ड आॅफ चैरिटीज की स्थापना की। दूसरे राज्यों में भी ऐसी ही किया गया।

6.7 दान संगठन आन्दोलन

1870 और 1873 की मंदिरों के परिणामस्वरूप तत्कालीन सहायता व्यवस्था की अनेक कमियाँ उजागर हुई। 1870 में बफैलों के रेवरेण्ड एस0एच0 गुर्टीन नाम के पादरी ने न्यूयार्क में बफैलों चैरिटी आर्गनाइजेशन सोसाइटी की स्थापनी की गई। इस समिति की मान्यता यह थी कि निर्धन जन सहायता लाभ भोगी के लिए हानिकारक है। 1876 में न्यायालयों द्वारा अपराधों के लिउ दोषी ठहराये गये नवयुवकों का सुधारगृह न्यूयार्क के अल्मीरा में स्थापित किया गया तथा महिलाओं की पहली जेल की स्थापना मैसाचुसेट्स के शेरबोर्न में 1879 में की गई।

एक अन्य प्रकार की गैर सरकारी सहायता पद्धति में कुछ समूहों की विशेष आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए बहुत सी परोपकारी संस्थाएं संगठित की गयीं जैसे New York Society for the Prevention of Pauperism, (1857) जिसका उद्देश्य पुनर्वास के साधनों का विकास करने के लिए सहायता देना था केवल अर्थदान करना नहीं था (इस सोसाइटी ने न्यूयार्क नगर को कई जनपदों में बांट कर सहायता कार्य किया)

Association for Improving the Conditions of the Poor, New York (1843), न्यूयार्क में चैरिटी आर्गेनाइजेशन सोसाइटी (1877) बफैलो में चैरिटी आर्गनाइजेशन सोसाइटी की स्थापना हुई। यह समिति लण्डन चैरिटी ऑर्गनाइजेशन सोसाइटी के सिद्धान्तों पर आधारित थी। इस C.S.O. के मुख्य तीन सिद्धान्त थेः

1. सभी स्थानीय चैरिटीज के प्रतिनिधियों के एक मण्डल की देखरेख में सहकारिता,
2. सहायता कार्य में द्वितीयकरण को रोकने के लिए एक केन्द्रीय स्तर पर गुप्त रजिस्टर, और
3. प्रत्येक निर्धन की आवश्यकताओ और उसकी अपनी योग्यताओं एवं प्रयासों का पता लगाने के लिए सामाजिक जांच।

इन समितियों का संगठन करने वाले वह धनी नागरिक थे जिनका मत था कि

1. निर्धनता के मुख्य कारण व्यक्ति के अपने दोष निष्क्रियता (Idleness) उपेक्षा Negligence) कुप्रबन्ध (Mismanagement) आय का मद्य (नशा), जुआं और अन्य दुर्गुणों पर नष्ट करना आदि है और

2. इन व्यक्तियों को सलाह देकर इनकी नैतिकता को दृढ़ किया जा सकता है। परन्तु निर्धनों के घरों में जाकर निर्धनता के अन्य कारणों का भी पता चला जैसे गन्दे पड़ोस एवं घरों के कारण स्वास्थ्य ठीक नहीं रहताए जिससे नैतिक पतन होता है, और कम मजदूरी के कारण वह अपना भरण-पोषण नहीं कर पाते हैं।

इस समिति ने एसोसिएशन फार इनप्रूविंग दि कन्डीशन आफ दि पुअर का अनुसरण किया। इसने नगर को आठ क्षेत्रो में विभाजित किया। प्रत्येक क्षेत्र के लिए निरीक्षक नियुक्त किये गये जो अनिवार्य रूप से पुरूष होते थे। इनकी सहायता नगर की धनी स्त्रियां करती थी जिन्हें फ्रेंडली विजिटर्स कहा जाता था। धनी और निर्धन व्यक्तियों में सम्पर्क स्थापित करने का उद्देश्य यह था कि धनी व्यक्तियों के प्रभाव से निर्धन व्यक्ति सभ्य हो जाएं और उनके व्यक्तित्व मे सुधार हो।

इस समिति ने ऐच्छिक समाज सेवा संस्थाओं से सहकारी सम्बन्ध स्थापित किये। इस समिति का उद्देश्य वर्तमान संस्थाओं को समन्वित करना था। इसके अतिरिक्त यह समिति अपक्षपाती रूप से कार्य करती थी और धर्म राष्ट्रीयता, या राजनीति के आधार पर कोई प्रभेद न करती थी। यह समिति आर्थिक सहायता न प्रदान करके सेवार्थियों को ऐसी संस्थाओं के पास भेजने का प्रबन्ध करती थी जो उनकी प्रत्यक्ष रूप से सहायता कर सके।

इस समिति का उद्देश्य यह था कि सहायता के कार्यक्रम पर सार्वजनिक धन अधिक व्यय न किया जाये बल्कि निजी परोपकारिता द्वारा इस व्यय का भार उठाया जाये। इसीलिए इस समिति ने बाहरी सहायता (आडटडोर रिलीफ) के व्यय को कम कर दिया और इस बात का प्रयास किया कि सार्वजनिक धन केवल संस्था में दी जाने वाली सहायता (इनडोर रिलीफ) पर व्यय किया जाये। इस समिति के नेताओं का विचार था कि सार्वजनिक बाहरी सहायता के कार्यक्रम में धोखे की अधिक सम्भावना है और सार्वजनिक सहायता निर्धनों पर हानिकारक में धोखे की अधिक सम्भावना है और इससे वे सार्वजनिक सहायता पर निर्भर रहने के अभ्यस्त हो जाते हैं।

इस समिति ने निर्धनता की समस्या का राजकीय उत्तरदायित्व के आधार पर नहीं बल्कि निजी परोपकारिता के आधार पर सुलझाने का प्रयास किया। इस आन्दोलन का दोष यह था कि इसने सार्वजनिक कल्याण पद्धति को सुधारने और उच्चतर बनाने की अपेक्षा उसको सीमित करने और नष्ट करने का प्रयास किया।

धीरे-2 यह आन्दोलन दूसरे नगरों में फल गया।

अभी तक लोग यह समझते थे कि निर्धनता का कारण वैयक्तिक दोष, आलस्य, मद्यपान, जुआ और अन्य बुराइयां हैं। यह समझा जाता था कि उपदेश देकर, रोजगार उपलब्ध करके या ऋण देकर निर्धनों का नैतिक उत्थान किया जा सकता है और उन्हें आत्मनिर्भर बनाया जा सकता है। कुछ समय तक चैरिटी आर्गनाइजेशन सोसाइटी के नेताओं का यही विश्वास था। यह वह धनी लोग थे जो निर्धनों के दुखों को दूर करना अपना नैतिक कर्तव्य समझते थे और आशा रखते थे कि राजनैतिक उपद्रव और औद्योगिक संघर्ष को इस प्रकार कम किया जा सकता है। परन्तु जब निरीक्षकों ने निर्धनों के घरों का निरीक्षण करना आरम्भ किया तो पता लगा कि निराश्रिता के अन्य कारण हैं। उन्होनें यह पता लगाया कि अस्वच्छ पड़ोस एवं आवास की दशाएं स्वास्थ्य एवं नैतिकता के लिए हानिकारक हैं, और अल्प पारिश्रमिक पाने वाले व्यक्ति चाहे कितने ही संयम से रहें पर्याप्त भोजन और वस्त्र नहीं प्राप्त कर सकते। जब आर्थिक संकट सामान्य रूप से फैल गई तो नौकरी मिलना कठिन हो गया और यह समझ में आने लगा कि यदि किसी बेरोजगार व्यक्ति को रोजगार न मिल सके तो इसमें उसका कोई दोष नहीं है। इस प्रकार यह समझ में आने लगा कि वैयक्तिक दोष की अवधारणा ठीक नहीं है। सी0ओ0एस0 के नेताओं ने ऐसे उपयों की मांग करना आरम्भ कर दिया जिनसे वह सामाजिक परिस्थितियां मौलिक रूप से बदली जा सकें, अतः वे सामाजिक सुधार के समर्थक हो गए। उन्होंने सामाजिक विधान को प्रलोभन दिया जिससे आवास की दशाओं का सुधार हो सके और क्षय रोग की चिकित्सा और निरोध उच्चतर प्रकार से हो सके। कुछ समितियों ने सेवायोजन

कार्यालय स्थापित किये, ऋण वितरक संस्थाएं स्थापित कीं, धर्मशालाएं बनाए और कानूनी सहायता के लिए समितियां बनाईं, चैरिटी ऑर्गनाइजेशन सोसाइटीज के तत्वाधान में शारीरिक रूप से असमर्थ व्यक्तियों, नेत्रहीनों, विकलांगों एवं मूक बधिर व्यक्तियों के पुनर्वास के लिए प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित किए गए। इसके अतिरिक्त चिकित्सालय, मनोरंजन शिविर और अन्य प्रकार की सेवाएं स्थापित की गई।

चैरिटी ऑर्गनाईजेशन सोसाइटीज के अनेक सक्रिय कार्यकर्ताओं एवं स्वयं सेवकों ने यह मत प्रकट किया कि व्यक्तियों के व्यवहार और सामाजिक एवं आर्थिक समस्याओं का अधिक गहन अध्ययन होना चाहिए और इसके लिए समाज कार्य का विशिष्ट प्रशिक्षण होना चाहिए। सबसे पहले इस प्रकार के अध्ययन का सुझाव अन्न एल0डेविस ने 1893 में दिया था। 1897 में मेरी रिमन्ड ने एक प्रशिक्षण योजना बनाई जिसके आधार पर 1898 में न्यूयार्क में पहली बार समाज कार्य के पाठ्यक्रम की स्थापना हुई। इस प्रकार समाज कार्य की व्यवसायिक शिक्षा की आवश्कता का अनुभव किया जाने लगा। सी0ओ0एस0 ने एक पत्रिका चैरिटीज रिव्यूं के नाम से 1891 में प्रकाशित की जो तत्पश्चात् दी सर्वे के नाम से प्रसिद्ध हुई और जिसमें सामाजिक एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी दशाओं एवं समितियों के कार्यों के विषय में सूचना मिलती थी।

लंदन में निवासियों में पड़ोस की भावना स्थापित करने के उद्देष्य से कैनन सेम्यूअल बार्नेट द्वारा स्थापित टवायनवी हाल के अनुभवों से प्रेरित होकर चाल्स बी0 स्टोवर ने नेबीहुड गिल्ड आफ न्यूयार्क सिटी की 1887 में स्थापना की। इसे वर्तमान समय में यूनिवर्सिटी सेटिलमेंट हाउस के नाम से जाना जाता है। बाद में मिस जेन ऐडम्स ने शिकागों में 1889 में हाल्स्टेड स्ट्रीट में एक हल हाउस की स्थापना की। इसकी सहायता के परिणामस्वरूप न्यूयार्क में कालेज सटिलमेंट फार वीमेन, बूस्टन में ऐण्डोवर हाउस (जिसे बाद में साउथ एण्ड हाउस का नाम दे दिया गया। षिकाबों में षिकागों वीमेन्स, न्यूयार्क में हेन्री स्ट्रीट सेटिलमेंट तथा कोआपरेटिव सोषल सेटिलमेंट (जिसे बाद में ग्रीनविच हाउस के नाम से सम्बोधित किया गया), षिकागों में द यूनिवर्सिटी षिकागों सेटिलमेंट में गुडरिच हाउस, पिट्सबर्ग में आईरीन काफ सेटिलमेंट, सैन्फ्रान्सिस्कों में टैलीग्राफ हिल नेबरहुड हाउस तथा इण्डियानापालिस में प्लेनर हाउस की स्थापना हुई ।

चैरिटी आॅर्गनाइजेशन सोसाइटीज ने सार्वजनिक निर्धन सहायता में सुधार लाने का प्रयास न किया। उनका विचार था कि सार्वजनिक निर्धन सहायता से निराश्रितों का उत्साह एवं नैतिक शक्ति दुर्बल हो जाती है। विभिन्न स्थानों पर नगर पालिकाओं को यह समझाया गया कि सार्वजनिक बर्हिवासी सहायता बन्द की जा सकती है और सहायता देने वाली संस्थाएं इस कार्य को कर सकती है।

सी0ओ0एस0 ने एक ओर तो वर्तमान सहायता देने वाली समितियों में सहयोग एवं समन्वय स्थापित करने का प्रयास किया दूसरी ओर समुदाय के स्वास्थ्य और सामाजिक साधनों में भी उन्नति का प्रयास किया।

कुछ समितियों ने अपनह कार्य प्रणाली में परिवर्तन के सुझावों को पसन्द न किया और अभावग्रस्त परिवारो की सहायता के लिए पृथक प्रबन्ध किया। इस समस्या को सुलझाने के लिए 1908 में पिट्सबर्ग, पेनिसलवैनिया में काउन्सिल आफ सोशल एजेन्सीज की स्थापना हुई जिसका उद्देश्य समाज कल्याण के क्षेत्र में समन्वय स्थापित करना और नियोजन करना था। इसके सदस्य अन्य सामाजिक समितियों के प्रतिनिधि होते थे।

दी असोसिएटेड चैरिटीज आफ पिट्सबर्ग की स्थापना एक परिवार कल्याण समिति के रूप में हुई। इसी आधार पर अन्य स्थानों पर भी कार्यों का विभाजन हुआ। सी0ओ0एस0 ने काउन्सिल आफ सोशल एजेन्सीज का रूप धारण किया और नियोजन एवं समन्वय की क्रियाओं का उत्तरदायित्व स्वीकृत किया। यूनाइटेड चैरिटीज, फेडस्टेड चैरिटीज आदि की स्थापना परिवार एवं शिशु सेवा संस्थाओं के रूप में हुई।

इस प्रकार इन चैरिटी आर्गेनाइजेशन सोसाइटीज ने इन दशाओं को ठीक करने के लिए सामाजिक विधान के निर्माण के लिए कार्य किया। निर्धनो की समस्याओं को ठीक से समझने क लिए 1898 में न्यूयार्क नगर मे पहला समाज कार्य पाठ्यक्रम संगठित किया गया। सभी गैर सरकारी संस्थाओं के कार्यों को ठीक से संगठित एवं उनके संचालन के लिए Council of Social Agencies की स्थापना की गई। अपने कार्य को चलाने के लिए 1913 में Cleveland नगर में एक संयुक्त प्रयास द्वारा धन इकट्ठे करके Community Chest की स्थापना की गई। इस प्रकार इकट्ठे किये गये धन का सभी सामाजिक संस्थाओं में वितरण किया गया।

धीरे-धीरे यह विचार प्रचलित होता गया कि निजी समाजसेवी संस्था को सार्वजनिक कोष से सहायता न मिलनी चाहिए बल्कि उन्हें स्वयं अपने सदस्यों और धनदान आदि का सहारा लेना चाहिए।

1881 में रेडक्रास की अमेरिकन शाखा की स्थापना हुई। इस संस्था का उद्देश्य घायल सैनिकों की सेवा और विपत्ति ग्रस्त परिवारों की सहायता करना था। इसके अतिरिक्त यह संस्था रक्तदान, नर्सिंग सहायता, फस्ट एड एवं जल सुरक्षा सेवाएं भी प्रदान करती थी।

1889 में न्यूयार्क नगर नेबरहुड गिल्ड के रूप में पहले सेटलमेन्ट हाउस की स्थापना हुई। 1891 में इसका नाम युनिवर्सिटी सेटलमेन्ट हाउस रख दिया गया। तत्पश्चात् 1889 में शिकागो में प्रसिद्ध हल हाउस की स्थापना हुई। इस प्रकार अन्य नगरों में भी निर्धन समूहों की सहायता के लिए समान रूप से सेटलमेन्ट हाउस स्थापित किए गए।

6.8 सेटलमेन्ट हाउस आन्दोलन (The Settlement House Movement)

The Settlement House Movement इस समय का एक और महत्वपूर्ण विकास है। औद्योगिकरण के कारण बहुत बड़ी संख्या में श्रमिक अमेरिका के नगरों में आ गए और गन्दी एवं भीड़ की दशाओ में रहने लगे। अन्य देशों से अधिक संख्या में लोगों के आ जाने से भी इस प्रकार के रहन-सवहन में वृद्धि हुई। इंग्लैण्ड के ज्वलदइमम भ्ंसस से प्रभावित होकर अमेरिका के विद्यार्थियों ने इन गन्दी बस्तियों में रहना आरम्भ कर दिया जिससे ऐसे लोगों के रहन-सहन में सुधार किये जा सके। इन Settlement Housses मे में रहने वाले समाज सुधारक बन गए और गन्दी बस्तियों की सफाई, बाल अपराधियों के लिए विशेष बाल न्यायालय, आवासीय विधान और बीमारियों की रोकथाम के लिए मांग रखी गई।

सेटलमेन्ट हाउस आन्दोलन के अनेक उद्देश्य थे। इसका एक उद्देश्य यह था कि औद्योगिकरण से उत्पन्न होने वाली कठिनाई परिस्थितियों और समस्याओं का निवारण किया जाये। इन सेटलमेन्ट हाउसेज मे ऐसे लोगों को शिक्षा एवं मनोरंजन के साधन उपलब्ध किये जाते थे जिनके लिए इसका और कहीं प्रबन्ध न होता था और जिनके अनुचित कार्यों में पड़ जाने का भय होता था। इसके अतिरिक्त उन सेटलमेन्ट हाउसेज में एकीकरण की क्रियाएं भी प्रचलित रहती थी। आवास, अस्वच्छता एवं न्यून पारिश्रमिक के सम्बन्ध में सामाजिक सुधार आन्दोलन भी सेटलमेन्ट हाउस द्वारा चलाए जाते थे। जिन नगरों में सामाजिक विघटन अधिक मात्रा में पाया जाता था वहीं हम की भावना का विकास भी इसी आन्दोलन का उद्देश्य था। इस प्रकार सेटलमेन्ट हाउस में व्यक्तियों की अपेक्षा समूहों की सेवा का प्रबन्ध किया गया और इस प्रकार सामाजिक सामूहिक कार्य की उत्पत्ति हुई।

सेटलमेन्ट हाउस के अतिरिक्त अन्य संस्थाएं भी सामूहिक सेवा के लिए स्थापित हुई। 1851 में यंग मेन्स क्रिस्चन असोसिएशन वाई0एम0सी0ए0 स्थापित हुआ जिसका उद्देश्य नवयुवकों की दशाओं एवं सुअवसरों में

उन्नति करना था। 1856 में बोस्टन में यंग विमेन्स क्रिस्चन असोसिएशन (वाई0डब्लू0सी0ए0) की स्थापना हुई जिसका उद्देश्य नवयुवतियों की दशाओं और सुअवसरों में सुधार करना था।

6.9 सारांश

सारांश के रूप में इस अध्याय में सन् 1800 से 1900 के मध्य अमेरिका में समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास से सम्बन्धित विभिन्न प्रकार के किये गये प्रयासों का उल्लेख किया गया है। इसके अन्तर्गत समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास की यथार्थता को जानने का प्रयास किया गया है। यह अध्याय स्पष्ट करता है कि किस प्रकार से अमेरिका में समाज कार्य को एक व्यवसाय का रूप प्राप्त करने में विभिन्न चरणों से गुजरना पड़ा है।

6.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

(1) सन् 1800 से 1900 के मध्य अमेरिका में समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास की रूपरेखा को स्पष्ट कीजिए।

(2) येट्स प्रतिवेदन की सिफारिशों का उल्लेख कीजिए।

(3) दातव्य संगठन आन्दोलन पर संक्षिप्त टिप्पणी कीजिए।

(4) विकलांग सहायता के लिए किये गये प्रयासों का उल्लेख कीजिए।

(5) समाज कार्य के विकास पर सेटलमेन्ट हाउस आन्दोलन का क्या प्रभाव पड़ा।

6.11सन्दर्भ ग्रन्थ

1. Friedlander, W. A. Indtrodution of Social Welfare, Prentice Hall, INC. New York, 1995.
2. Thomas P.T.: Profession Traning in Social Work, in Sugata Das Gupta (ed) "Towards in Pilosophy of Social Work in India Popular Books Services, New Delhi, 1967.
3. Ahamad, Mirza Raffiuddin, Samaj Kayra: Darshan evam Pranaliyan, Repid Books Services, Lucknow, 1969.
4. Mishra, P.D. Social Work Profession in India, New Royal Book Co., Lucknow, 2004.
5. Sudan K.S., Samaj Karya: Siddhant evam Abhyas, N.S. Publications Lucknow, 2011.
6. Mishra, P.D., Samaj Karya: Itihas, Darshan evam Pranaliyan, New Royal Book Co. Lucknow, 2004.
7. Singh, D.K., and Bhartiya, A.K., Social Work: Philosophy and Methods, New Royal Book Co. Lucknow, 2009.
8. Shastri R.R., Social Work Tradition in India, Welfare Forum and Research Organization, Varanasi, 1986.
9. Dinitto, D.M. and Mcneece, C.A. Social Work Issues and Opportunities: In a Challenging Profession, LYCEUM Books INC, Chicago, 2008.
10. O.Hare, Thomas, Essential Skills of Social Work Practics: Assesment Intervetion Evaluation LYCEUM Books INC, Chicago, 2009.
11. Adams, R.; Dominelli, L. and Payne, M.; Social Work: Themes, Issues and Critical Debates, Second edition (ed), Palgrave, New York, 1998.

12. Clark, S. Social Work as Community Development: A Management Model for Social Change, Second Eddition (ed), Ashgate Publishing Ltd., England, 2000.
13. Colby, Ira and Dziegielewski, S., Introdution to Social Work: The People's Profession, Second Eddition (ed), LYCEUM Books INC, Chicago, 2004.
14. Srivastava S.P. "Addressing the future of Social Work in India" Social Work Education in India (ed) by S.Signh and S. Swaminathan New Royal Books Co. 2003.
15. Singh, Surendra, : Future Chellanges before Social Work Proffesion in India and Reuired Response, Contemporary Social Work Volume 12 October 1995.

इकाई-7

संयुक्त राज्य अमेरिका में समाज कार्य का ऐतिहासिक विकास (1900 से 1950)

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 भूमिका

7.3 समाज कल्याण में राज्य की भूमिका

7.4 बाल कल्याण सेवाएं

7.5 प्रत्यक्ष सहायता

7.6 समाज कल्याण संस्थाएं

7.7 आर्थिक सहायता/अनुदान

7.8 सामाजिक सुरक्षा एवं आपातकालीन सहायता

7.9 समाज कार्य का विकास

7.10 आधुनिक सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम

7.11 सारांश

7.12 अभ्यास प्रश्न

7.13 सन्दर्भ ग्रन्थ

7.0 उद्देश्य

प्रस्तुत अध्याय के अध्ययन के पश्चात आप –

1. अमेरिका में समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास के अन्तर्गत समाज कल्याण के क्षेत्र में राज्य की भूमिका को समझ सकेंगे।
2. समाज कल्याण के क्षेत्र में बाल कल्याण सेवाएं तथा समाज कल्याण संस्थाओं के योगदान से अवगत हो जायेंगे|
3. इस काल का एक महत्वपूर्ण योगदान सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रमों के द्वारा दी जाने वाली सहायता के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

7.1 प्रस्तावना

प्रारम्भिक समय में अमेरिका पहुंचने वाले अप्रवासियों की स्थिति अत्यन्त सोचनीय एवं दयनीय थी। ये प्रवासी विभिन्न पृष्ठभूमियों के थे तथा इनकी भाषा विभिन्न प्रकार की थी। इसके अतिरिक्त लोगों के कल्याण हेतु जो भी कार्य किये जा रहे थे वे पहुंच के बाहर थे। जिसका लाभ लोगों को प्राप्त नहीं हो पा रहा था। इस बात को ध्यान में रखते हुए राज्य ने हस्तक्षेप करना प्रारम्भ किया। जिससे कि लोगों की सहायता की जा सके और उनकी स्थिति में सुधार हो सके।

7.2 भूमिका

अमेरिका में 1950 के पश्चात् राज्य का उत्तरदायित्व अत्यधिक बढ़ गया लोगों की सहायता करने का अधिकार राज्य ने स्वतः ले लिया। इस काल में अमेरिका में मुख्य रूप से कल्याणकारी सेवाओं के द्वारा लोगों की सहायता की जाने लगी। जिसका उद्देश्य लोगों के उत्थान से था।

7.3 समाज कल्याण में राज्य की भूमिका

उन्नीसवीं शताब्दी के अन्य तक सरकारी एवं गैर सरकारी तत्वावधान में दी जाने वाली सामाजिक सेवाएं स्थानीय स्तर पर दी जाती थी। बहुत कम सीमा तक कुछ समूहों के लिए ही राज्य स्तर की सेवाएं उपलब्ध थी। समाज कल्याण के क्षेत्र में 1900 के बाद दो नई प्रवृत्तियां देखने में आती है- 1. सरकारी एवं गैर सरकारी दोनों ही स्तरों पर समाज कल्याण की समस्याओं को राष्ट्रीय स्तर पर समझने की आवश्यकता को पहचाना गया, और 2. समाज कल्याण सेवाओं को प्रदान करने के लिए केन्द्रीय सरकार को राज्यों द्वारा दी जा रही सेवाओं के अनुपूरक के रूप में कार्य करना या कुछ विशेष समूहों को प्रत्यक्ष रूप में केन्द्रीय सरकार द्वारा सेवा प्रदान करना। परन्तु यह भागीदारी 1930 तक आंशिक रूप से देखने में आती है। राष्ट्रीय स्तर के संगठनों का नेतृत्व गैर सरकारी संगठनों के हाथ में था। ये संगठन थे: National Child Labout Committee (1904), National Consumers League (1899), American Association of Mental deficiency (1876), American Humane Association (1877), American Prison Association (1870), National Association of the Deaf (1880), and National Society for the study of Education (1895).

अमेरिका के संविधान में केन्द्रीय सरकार पर समाज कल्याण के उत्तरदायित्व सम्बन्धी किसी विशेष सिद्धान्त का उल्लेख नहीं था। फिर भी केन्द्रीय सरकार कुछ विशेष श्रेणियों के व्यक्तियों को सहायता देने के उत्तरदायित्व से इन्कार नहीं कर सकती थी। इस प्रकार पांच समूह थे जिनको समाज कल्याण सेवाएं दान करना केन्द्रीय सरकार का कार्य था। ये समूह थे: 1. इन्डियन्स ; (The Indians), 2. अप्रवासी ; (The Immigrants) 3. समुद्री जहाजों के चालक एवं यात्री, 4. भूतपूर्व अवकाश प्राप्त सैनिक, और 5. सरकारी कानूनों के अपराधी।

7.4 बाल कल्याण सेवाएं

1909 में अमेरिका के President Roosevelt ने देश भर की बाल कल्याण संस्थाओं के कार्यकर्ताओं का एक सम्मेलन वाशिंगटन में बुलाया। इस Coference on the Care of Dependent Children में एक संकल्प धारण किया गया कि बच्चों को निर्धनता के कारण परिवारों से अलग न किया जाये और यदि किसी सामान्य बालक को अपने परिवार से अलग करना आवश्यक हो तो उसे संस्था में रखने के बजाय किसी पालन गृह (Foster Home) में रखा जाये। यदि बच्चों को कुछ विशेष कारणों से अनाथालय या बाल संस्था में रखना पड़े तो अभी

तक चले आ रहे बड़े-बड़े सह प्रांगणों/आवासालाओं (Dormitories) की अपेक्षा उन्हें छोटी-छोटी इकाइयों में घरेलू वातावरण में ही रखा जाये। इस सम्मेलन ने दो और सिफारिशें की 1. राज्य सरकारें माताओं के लिए पेंशन अधिनियम पारित करें जिससे विधवाओं और त्यागी हुई महिलाओं (Deserted Women) को अपने बच्चे को अपने पास रखने में सहायता मिल सके, और 2. केन्द्रीय सरकार केन्द्र के स्तर पर एक बच्चें की संस्था (Children Agency) स्थापित करे। इस सम्मेलन की पहली सिफारिश को मानते हुए बहुत सी सरकारों ने माताओं को पेंशन और भत्ते के कानून पारित किये और दूसरी सिफारिश को मानकर एक Children's Bureau (1912) की स्थापना की गयी। इस ब्यूरो का कार्य पूरे देश के स्तर पर एक निकासी गृह/सूचना प्रसार गृह (clearing homes) के रूप में कार्य करना, समाज के सभी वर्गों में बाल जीवन व सभी स्तरों पर बाल कल्याण सम्बन्धी विषयों पर जांच एवं इसका विवरण प्रस्तुत करना मुख्य रूप से शिशु मृत्यु दर, जन्म दर, बाल अनाथालयों, बाल न्यायालयों, बाल श्रमिकों और बच्चों के सामाजिक विधानों के प्रश्न सम्बन्धी।

7.5 प्रत्यक्ष सहायता

राज्य ने सार्वजनिक कल्याण का उत्तरदायित्व पर्याप्त समय व्यतीत हो जाने के पश्चात् स्वीकृत किया। अधिकतर राज्य सरकारों ने विपत्ति सहायता का उत्तरदायित्व स्वीकृत कर लिया था। कुछ राज्य सरकारें अनाज की फसल कम होने पर ऋण देती थी। कुछ आर्थिक संकट के समय कोयला या बाढ़ के समय आर्थिक सहायता देती थी। परन्तु यह सब सहायता केवल विपत्तिकाल में ही दी जाती थी। 1918 तक लगभग सभी राज्य सरकारों ने पुराने और अनुभवी सैनिकों की सहायता का उत्तरदायित्व स्वीकृत कर लिया था।

विपत्ति सम्बन्धी सहायता, अनुभवी सैनिकों की सहायता और अस्थाई आवास वाले निर्धनों की सहायता के अतिरिक्त राज्य की ओर से उन्मादी, बहरे और गूंगे व्यक्तियों को भी सहायता प्रदान की जाती थी। कुछ समय उपरान्त बाल अपराधियों, दुर्बल मानसिक योग्यताओं के व्यक्तियों, विकलांगों, एवं नेत्रहीनों के लिए भी संस्थाएं स्थापित हुई। उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य राज्य सरकारों ने आश्रित बच्चों का उत्तरदायित्व स्वीकृत किया। जब राज्य सरकारों ने समाज कल्याण के क्षेत्र में अधिक भाग लेना आरम्भ किया तो कल्याण विभाग स्थापित हुए। इन विभागों के अनेक कार्य हैं। यह राज्य द्वारा उपलब्ध विभिन्न सामाजिक सेवाओं का समन्वय और स्थानीय सेवाओं का निरीक्षण करते रहे है और सूचना एवं शिक्षा का साधन रहे हैं। इस प्रकार का पहला विभाग मैसेजुसेट्स में 1863 में स्थापित , परन्तु 1904 तक केवल 15 ही राज्य सरकारों ने इसका अनुसरण किया। 1931 में 5 राज्यों को छोड़कर सभी राज्यों में यह विभाग स्थापित हो चुके थे। आजकल सभी राज्यों में कल्याण विभाग हैं।

7.6 समाज कल्याण संस्थाएं

अमेरिका के संविधान में वहां के संसद को इस बात का भी अधिकार दिया गया है कि वह जनता के लिए कल्याण सम्बन्धी सुविधाएं उपलब्ध करे 1785 से ही केन्द्रीय राज्य ने विभिन्न राज्यों को विभिन्न प्रकार के सार्वजनिक कल्याण कार्यों के लिए अनुदान दिया है। प्रमुख रूप से व्यवसायिक परामर्श प्रसूति, तथा शिशु रक्षा और विपत्ति सम्बन्धी सहायता के सम्बन्ध में केन्द्र ने राज्यों को अनुदान दिये।

1908 में पिट्सबर्ग में एक काउन्सिल ऑफ सोशल एजेन्सीज स्थापित की गयी जिसका कार्य समाज कल्याण के क्षेत्र में नियोजन एवं समन्वय स्थापित करना था और इसीलिए इसका नाम काउन्सिल ऑफ सोशल एजेन्सीज़ पड़ा। किन्तु इन काउन्सिलों के लिए धन की व्यवस्था करने में अनेक प्रकार की कठिनाईयों आयीं। 1910 में

अमेरिकन ब्वाय स्काउट्स का गठन किया गया। कैम्प फायर गल्स की स्थापना 1911 में की गयी। 1912 में गर्ल्स गाइड को स्थापित किया गया।

1913 में क्लीवलैण्ड में निजी क्षेत्र दान सम्बन्धी सभी कार्यो की संयुक्त वित्तीय व्यवस्था करने की आवष्यकता को स्वीकार किया गया। इसके परिणामस्वरूप सामुदायिक तिजूरी की विचारधारा सामने आई। इन सामुदयिक चेस्टों का कार्य लोगों से अंषदान लेते हुए एक कोष एकत्रित करने के पश्चात् इसे समाज काल्याण के क्षेत्र में कार्यरत संस्थाओं को वितरित करना था।

मैसाचुसेट्स ने 1863 में राज्य द्वारा संचालित सभी दान संस्थाओं के अधीक्षण के लिए स्टेट बोर्ड ऑफ चैरिटीज की स्थापना की गया थी जिसका अधीक्षण एवं नियंत्रण सम्बन्धी उत्तरदायित्व 1925 में लोककल्याण विभाग को सौंपे गये। इस विभाग का नाम 1927 में बदल कर राज्य कल्याण विभाग रखा गया।

7.7 आर्थिक सहायता/अनुदान

1929 में एक महान आर्थिक संकट का सामना देश को करना पड़ा। उस समय 1 करोड़ 50 लाख व्यक्ति बेरोजगार हो गए थे यह समझा जाने लगा कि इस महान संकट का सामना करने के लिए वर्तमान साधन पर्याप्त नहीं है। अतः इस बात की आवश्यकता का अनुभव किया जाने लगा कि केन्द्रीय सरकार समाज कल्याण के क्षेत्र में अधिक उत्तरदायित्व स्वीकृत करें। 1933 में फेडेरल इमर्जेन्सी रिलीफ एक्ट पास हुआ जिसके अनुसार फेडरल इमर्जेन्सी रिलीफ एडमिनिस्ट्रेशन की स्थापना हुई और बेरोजगारों के लिए 50 करोड़ डालर की व्यवस्था की गई। इस धनराशि के कुछ भाग के बराबर राज्यों को धन उपलब्ध करना पड़ता था परन्तु यदि किसी राज्य के पास धन का अभाव हो तो वह इस पूर्ति से वंचित कर दिया जाता था।

प्रत्यक्ष सहायता के अतिरिक्त केन्द्रीय सरकार विभिन्न प्रकार की सहायता का कार्यक्रम चलाती थी। अभावग्रस्त व्यक्तियों को आर्थिक सहायता के अतिरिक्त आर्थिक संकट के समय सामग्रियां निःशुल्क बदी जाती थी। भैषजिक सहायता भी निःशुल्क देने का प्रबन्ध केन्द्र की ओर से था। जो लोग स्थाई आवास नहीं रखते थे उनकी सहायता का भी प्रबन्ध था। विभिन्न प्रकार की कुटीर उद्योग सम्बन्धी योजनाएं बेरोजगारों को कार्य दिलाने की दृष्टि से चलाई जाती थी। फेडरल इमर्जेन्सी रिलीफ ऐक्ट के अन्तर्गत समस्त बेरोजगार व्यक्ति और उनके आश्रितों के लिए सहायता का प्रबन्ध था और प्रजाति, राजनीति, धर्म वर्ण, राष्ट्रीयता आदि के आधार पर कोई प्रभेद न किया जाता था।

7.8 सामाजिक सुरक्षा एवं आपातकालीन सहायता

अमरीकी संविधान में समाज कल्याण के लिए कोई स्थान नहीं था। महान मंदी की स्थिति में बहुत बड़ी संख्या में बेकार व्यक्ति निजी कल्याण संस्थाओं से सहायता की आपेक्षा करने लगे। स्थानीय स्तर पर निजी क्षमता में कार्य करने वाले दातव्य संगठनों ने इन बेकारों की सहायता करने का प्रयास किया किन्तु समस्या इतनी गंभीर थी कि इन संस्थाओं के समस्त वित्तीय संसाधन समाप्त हो गये । इन परिस्थितियों में अमरीकी कांग्रेस ने 1932 में आपातकालीन सहायता एवं निर्माण अधिनियम को पारित किया। इन अधिनियम के अधीन पुननिर्माण वित्त निगम को राज्यों, काउन्टियों और शहरों को सहायता कार्य तथा जन कार्य सहायता परियोजनाओं को ऋण देने का अधिकार प्रदान किया गया।

1933 में संघीय आपातकालीन सहायता अधिनियम पारित किया गया। इस अधिनियम के अधीन अल्प अवधि वाली ऋण की व्यवस्था को समाप्त कर इसके स्थान पर समाज कल्याण हेतु संघीय उत्तरदायित्व वाली

व्यवस्था का निर्माण किया गया। हैरी एल0 हाप्किन्स की अध्यक्षता में संघीय आपातकालीन सहायता प्रषासन की स्थापना की गई।

संघीय आपातकालीन सहायता अधिनियम के अन्तर्गत इस बात का स्पष्ट रूप से प्रावधान था कि सभी आवष्कयतागस्त व्यक्तियों को उनकी न्यूनतम भौतिक आवष्यकताओं की पूर्ति को सुनिष्चित करने तथा उनकी यातनाओं को रोकने के लिए समुचित सहायता प्रदान की जानी चाहिए। राज्यों तथा स्थालीय समुदायों को वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिए इस बात को अनिवार्य बना दिया गया कि वे कार्यक्रमों का अधीक्षण करने हेतु प्रषिक्षित कार्यकताओं की नियुक्ति करें। एजेन्सियों में कार्य करने काले कर्मचारियों के सेवाकालीन प्रषिक्षण की भी व्यवस्था की जाये।

राबर्ट फेचनर के निर्देषन में मार्च, 1933 में आपातकालीन संरक्षण कार्यक्रम जिसे नागरिक संरक्षण कोर के नाम से जाना जाता है, प्रारंभ किया गया। इस कार्यक्रम का उद्देष्य युवको को राष्ट्रीय संसाधनों के संरक्षण के कार्य में सम्मिलित करते हुए उन्हें अस्थायी सेवायोजन प्रदान करना तथा स्वस्थ्य वातावरण, समुचित भोजन, षिक्षा एवं प्रषिक्षण की व्यवस्था करना था।

जनवरी 1935 में राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने यह घोषणा की कि संघ रोजगार दिये जाने योग्य बेकारों के लिए एक कार्य सहायता सम्बन्धी कार्यक्रम का उत्तरदायित्व ग्रहण करे और इसके परिणामस्वरूप मई 1935 में कार्य प्रगति प्रषासन की स्थापना की गई। इस प्रशासन ने केन्द्रीकृत संघीय नियंत्रण के अधीन कार्यक्रम को प्रतिस्थापित किया। आपातकालीन सहातया विनियोग अधिनियम 1935 में पारित किया गया जिसमें अधीन कार्य प्रगति प्रषासन हेतु आवश्यक कोष उपलब्ध कराये गये। 1939 में इस संगठन का नाम बदलकर कार्य परियोजना प्रषासन कर दिया गया।

फेडरल इमर्जेन्सी रिलीफ ऐक्ट के पास होने के पश्चात् यह समझा जाने लगा कि समाज कल्याण के क्षेत्र में एक स्थाई विधान की आवश्यकता है। अतः 1935 में सोशल सिक्योरिटी ऐक्ट पास हुआ। यह समाज कल्याण के क्षेत्र में एक मौलिक केन्द्रीय विधान था। इस विधान ने तीन कार्यक्रमों को प्रचलित किया।

1. एक सामाजिक बीमा कार्यक्रम (सोशल इन्योरेन्श प्रोग्राम) जिसमें केन्द्रीय वृद्धावस्था बीमा पद्धति एवं केन्द्रीय बेरोजगारी मुआवजा पद्धति सम्मिलित हैं,

2. एक सार्वजनिक श्रेणीबद्ध सहायता का कार्यक्रम (ए प्रोग्राम आफ कैटेगोरिकल असिस्टेन्स) जिसको चलाने के लिए केन्द्र की ओर से तीन समूहों के लिए अनुदान दिये जाते हैं। इस कार्यक्रम में वृद्धावस्था सहायता, अभावग्रस्त नेत्रहीन सहायता एवं आश्रित बाल सहायता सम्मिलित है। 1950 में इसमें एक चैथी श्रेणी स्थाई एवं पूर्ण रूप से अंगहीनों की सहायता (एड टू दी पर्मानेन्टली ऐन्ड टोटली डिसेबिल्ड) भी सम्मिलित कर दी गई।

3. एक स्वास्थ्य एवं कल्याण सम्बन्धी सेवओं का कार्यक्रम (ए प्रोग्राम आफ हेल्थ ऐन्ड वेलफेयर सर्विसेज) इस कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रसूति तथा शिशु स्वास्थ्य सेवाएं, विकलांग बाल सेवाएं, शिशु कल्याण सेवाएं, व्यावसायिक पुनर्वास, एवं सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाएं सम्मिलित हैं।

सोशल सिक्योरिटी ऐक्ट ने इन कार्यक्रमों का संचालन एक नवीन संस्था सोशल सिक्योरिटी बोर्ड को सौंप दिया।

1939 के पहले परिषद् अमेरिका के राष्ट्रपति के अधीन एक स्वतंत्र संस्था थी। परन्तु 1939 में इसे एक नवीन संस्था फेडरल सिक्योरिटी एजेन्सी का पुनर्गठन हुआ जिसके सोशल सिक्योरिटी बोर्ड तोड़ दिया गया और उसके स्थान पर सोशल सिक्योरिटी एडमिनिस्ट्रेशन की स्थापना हुई।

1953 में प्रेसीडेन्स आइजन होवर ने स्वास्थ्य, शिक्षा एवं कल्याण विभाग की स्थापना की जिसका सचिव मंत्री परिषद (कैबिनेट) का सदस्य होता था, तभी से सोशल सिक्योरिटी एडमिनिस्ट्रेशन इस विभाग की एक प्रमुख शाखा बना दी गई है। इस विभाग की अन्य शाखाएं सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाएं, शिक्षा कार्यालय और व्यावसायिक पुनर्वास कार्यालय है। तत्पश्चात् सोशल सिक्योरिटी ऐक्ट में जो सशोधन हुए उनके आधार पर अधिक लोगों को वृद्धावस्था एवं बेरोजगारी सहायता की सुविधाएं उपलब्ध की गई और इससे इस बात का प्रमाण मिलता है कि समाज के कल्याण का उत्तरदायित्व अधिक से अधिक स्वीकृत करता जा रहा है।

अमेरिका में 1929 से आर्थिक मन्दी आ जाने से वहां की समाज कल्याण प्रणालियों में पूर्ण रूप से परिवर्तन आ गया। अभी तक के निर्धन सहायता कार्यों का संचालन राजनैतिक स्तर पर नियुक्त किए गए ओवरसियर्स (Overseers) एवं सुपरवाईजर्स (Supervisors) द्वारा किया जाता था। ये अधिकारी निर्धनता की पहचान का आधार दुर्गुण एवं निष्क्रियता की मानते थे और सहायता को भूख के न्यूनतम स्तर पर बांटते थे। केवल 40 बड़े नगरों में ही सामाजिक संस्थाओं में प्रशिक्षण प्राप्त कार्यकर्ता काम करते थे। गैर सरकारी परिवार कल्याण संस्थाएं 500 बड़े नगरों में कार्य करती थी। आर्थिक मन्दी के कारण बहुत अधिक संख्या में बेरोजगार व्यक्ति निजी कल्याण संस्थाओं से सहायता की आशा करने लगे। स्थानीय प्राइवेट चैरिटीज ने इनकी सहायता का प्रयास किया। आर्थिक संकट की समस्याओं को सुलझाने के लिए जितने धन की आवश्यकता थी वह निजी संस्थाओं के बस में न था। अतः आर्थिक सहायता का कार्य प्रमुख रूप से सरकारी संस्थाओं ने ले लिया। निजी संस्थाएं केवल उन्हीं लोगों को आर्थिक सहायता देती है जो सार्वजनिक सहायता नही पा सकते हैं, या जिनके लिए वैयक्तिक सेवा कार्य या परामर्श सम्बन्धी सेवाओं को क्षमताशाली बनाने के लिए आर्थिक सहायता अनिवार्य हो। अर्थात् वे ऐसे व्यक्तियों को आर्थिक सहायता देती हैं जिन्हें सार्वजनिक सहायता नहीं मिल सकती। परन्तु समस्या का आकार इतना बड़ा था कि इन संस्थाओं के धन के सभी स्रोत समाप्त हो गए और वह बेरोजगारों की सहायता करने में असमर्थ हो गयीं। इसके कारण बीमारी, आत्महत्या और बच्चों के कुपोषण आदि की समस्याएं उत्पन्न हो गयीं। ऐसी परिस्थितियों में अमेरिका की कांग्रेस ने 1932 में Emergency Relief and Construction Act पारित किया जिसके अन्तर्गत Reconstruction Finance and Corporation Act (RFC) द्वारा सरकारों को सहायता कार्यों के लिए थोड़ी अवधिबद्ध ऋण दिए गए। इससे सुधार न होने पर 1933 में एक और अधिनियम Federal Emergency Relief Act पारित किया गया। इस अधिनियम द्वारा थोड़ी अवधिबद्ध ऋण की पद्धति को समाप्त कर दिया गया और इसके स्थान पर मानव कल्याण के केन्द्रीय उत्तरदायित्व (Federal Responsibility) की एक नई अवधारणा को मान्यता मिली। राज्य सरकार को केन्द्रीय अनुदान ;ळतंदजेद्ध लम्बी अवधि के लिए मिलने लगे और नए अधिनियम के प्रशासन के लिए Federal Emergency Relief Administration (FERA) स्थापित किया गया। इस प्रशासन (FERA) के दो मुख्य उद्देश्य थे- 1. बेरोजगारी में सहायता के लिए राज्य सरकारों को दिये जाने वाले अनुदान का प्रशासन, और 2. बेरोजगारों के हितों में एक संतोषजनक सहायता का स्तर स्थापित करना और केन्द्रीय अनुदान के उचित प्रयोग पर नियंत्रण करना। FERA के संगठन को पांच डिवीजनों में विभाजित किया गया-

1. Fedderal Work Division जिसका कार्य राज्य या समुदायों द्वारा संचालित सहायता कार्य परियोजना के लिए राज्यो को अनुदान देना था,

2. Division of Relations with states जो क्षेत्रीय प्रतिनिधियों के माध्यम से राज्य सरकारों के सहायता कार्यक्रमों का पर्यवेक्षण करती थी,

3. Division of Special Programs जिसका कार्य उन प्रवासी श्रमिकों, (Migratory workers) जिनका उस राज्य में कोई निवास स्थान न हो, की विशेष आवश्यकताओं की देखभाल करना था,

4. Division of Research, Statistics and Finance जिसका कार्य जांच पड़ताल एवं सर्वेक्षण करना, निर्धनों के बारे में सही सूचनाएं इकट्ठी करना, और राज्यों के अनुदान कार्यक्रम के उचित प्रशासन के लिए आवश्यक सूचनाएं देने के लिए नियमित रूप से सहायता सांख्यकीय आंकड़े जारी करना था, और

5. The rural Rehabilitation Division जिसका कार्य कृषकों, खेतिहर, मजदूरों और आसामी काश्तकारों को सहायता प्रदान करना, पशुधन, बीज, कृषि के साज-सामान, मरम्मत और ऋण के समायोजन के लिए सहायता देना, उन कृषकों का, जिन्हें अवसीमानत;Submarginalद्ध भूमि से हटा दिया गया हो, पुनः स्थापन और खेतिहर मजदूरों एवं आसामी काश्तकारों के लिए निवास स्थान उपलब्ध कराना था।

FERA ने सबसे पहले यह नियम लागू किया कि सभी केन्द्रीय अनुदान केवल सरकारी संस्थाओं द्वारा ही दिय जायेंगे। यह नियम अभी तक चली आ रही पद्धति से अलग थे। सभी राज्य सरकारों की योजनाओं की सावधानी से समीक्षा की जाती थी और FERA प्रशिक्षण प्राप्त एवं योग्यता प्राप्त व्यक्तियों की नियुक्ति पर बल देता था जिससे पूरे कार्यक्रम पर कुशलतापूर्वक नियंत्रण रखा गया।

7.9 समाज कार्य का विकास

इस काल में समाज कार्य के विकास में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए। इस समय के केवल मुख्य कार्यों का ही विवरण दिया जाता है।

अ. The Works Projects Administration: क्योंकि FERA की स्थापना अस्थाई रूप से की गई थी, 1935 में इसका परिसमापन कर दिया गया और इसका प्रतिस्थापन ;replacementद्ध एक अन्य संगठन Workls Progress Administration से कर दिया। 1939 में इसका नाम बदलकर Works Projects Administration (WPA) कर दिया गया। इसका उद्देश्य सहायता पाने वाले को नौकरी देना था। इस संगठन का कार्य नीतियां निर्धारित करना, कार्यक्रमों का संचालन और स्थानीय एवं राज्य सरकारों द्वारा प्रस्तुत की गई परियोजनाओं का अनुमोदन करना, और परियोजनाओं पर कार्य करने वाले श्रमिकों के प्रमापीकरण की समीक्षा, यह जानने के लिए करना कि कहां तक उन्हें नौकरी की आवश्कयता है और कहां तक वे नौकरी के योग्य हैं। 1942 में इस संगठन को भी समाप्त कर दिया गया जब सभी उपलब्ध श्रमिकों को विभिन्न उद्योगों में नियोजित ;absorbedद्ध कर दिया गया।

ब. Work Programs for Unemployed Youths : बेरोजगारों के लिए उपरोक्त कार्यक्रम के अतिरिक्त युवकों को संतोषजनक रोजगार की तैयारी और उनमें बाधिक निष्क्रियता (Forced Idleness) एवं दुखद मनोवृत्तियों को रोकने के लिए सहायतार्थ दो नए कार्यक्रम चलाए गए 1. - Civil Conservation Corps and 2. National Youth Administration.

Civil Conservation Corps (CCC) के लिए 1933 में कानून पारित किया गया। इस कानून के अन्तर्गत 17 और 25 वर्ष की आयु वाले युवकों को जिन्हें नौकरी की आवश्यकता हो और जो स्कून न जा रहे हों, और जो शारीरिक एवं मानसिक रूप से कठिन कार्य करने के योग्य हों (CCC) शिविरों में भर्ती होने की सुविधा दी जाने लगी। इसके अतिरिक्त भूतपूर्व अवकाश प्राप्त सैनिक एवं अमेरिका निवासी इन्डियन्स ;Red Indiansद्ध इन

शिविरों में भर्ती हो सकते थे। इन शिविरवासियों को मासिक वेतन दिया जाता था जिसका कुछ अंश उनके परिवारों को भेज दिया जाता था। 1942 में इस कार्यक्रम को भी समाप्त कर दिया गया।

छंजपवदंस ल्वनजी ।कउपदपेजतंजपवद का दूसरा कार्यक्रम 1935 में दो उद्देश्यों को सामने रखकर चलाया गया:

1. अपनी शिक्षा को चालू रखने के लिए, आर्थिक सहायता देकर, अंशकालिक नौकरी देकर, सहायतार्थी स्कूल, कालेज एवं पूर्व स्नातक विद्यार्थियों की सहायता,

2. 18 से 25 वर्ष की आयु के बेरोजगार युवकों को प्रशिक्षण एवं अनुभव देने के लिए परियोजनाओं के कार्यों पर अंशकालिक नौकरी देकर सहायता। 1939 में यह कार्य Federal Security Agency को सौंप दिये गये और 1943 में समाप्त कर दिए गए।

स. **Program for Rural Rehabilitation**: आर्थिक मन्दी का प्रभाव ग्रामीण क्षेत्रो के छोटे कृषकों पर भी पड़ा। थ्म्त्। ने इसकी सहायता का कार्य किया परन्तु इसका परिसमापन के बाद 1935 में स्थापित Resettlement Administration ने FERA । द्वारा चलाये गये कार्यक्रमो को जारी रखा। 1937 में इसे फिर एक नए संगठन ने दो कार्यक्रम चलाये-पुनर्वास एवं सामाजिक सेवाएं। पहले कार्यक्रम मे कृषकों, आसामी काश्तकारों और बटाईदारों को, कृषि साज-सामान, बीज, कृषि प्रबन्ध, टकनीक, कृषि सहकारी समितियों के लिए ऋण देना रखा गया और दूसरे कार्यक्रम में गैर सरकारी पूर्वदत्त ;Perpaidद्ध चिकित्सा एवं दैत्य रक्षा आदि के लिए एवं बीमारी या दुर्घटना जैसी आपात स्थितियों में नगद सहायता प्रदान करना रखा गया।

1946 में इस संगठन का स्थान U.S. Department of Agriculture में Farmers Home Administration ने ले लिया। यह नई संस्था तीन प्रकार का ऋण कृषकों को देने लगीः

1. Farm Ownership Loan जिसकी अवधि 40 वर्ष रखी गई। इससे कृषक परिवार के आकार का नया फर्म/खेत खरीद सकते थे, या पुराने फार्म में सुधार या उसकी मरम्मत कर सकते थे,

2. Insured Mortgages जिसके द्वारा गैर सरकारी साहूकारों द्वारा ऋण के लिए 40 वर्ष की गारन्टी दी जाती थी जिससे कृषक अपने लिए कृषि फार्म/खेत खरीद सकें या उसकी मरम्मत कर सकें,

3. Production and Subsistance Loans जिससे कृषक उचित दरों व शर्तों पर बीज, पशुधन, चारा, खाद और कृषि साज-सामान खरीद सकें और ऋणों को वापस कर सकें और आपात कालीन स्थितियों में पारिवारिक निर्वाह कर सकें।

7.10 आधुनिक सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम

FERA के तत्वावधान में सहायता कार्य करने में जो अनुभव हुए उनसे यह धारणा जोर पकड़ती गई कि निर्धन सहायता के अस्थाई आपातकालीन कार्यक्रम के स्थान पर कोई स्थाई कार्यक्रम ही इस समस्या का समाधान कर सकता है। 1934 में प्रेजीडेन्ट रोजवेल्ट ;President Rooseveltद्ध ने आर्थिक सुरक्षा पर एक समिति ;Community on Social Security Actद्ध पारित किया गया। इस अधिनिमय के तीन प्रमुख कार्यक्रम थे:

1. सामाजिक बीमा कार्यक्रम;Social insurance Programmeद्ध इस कार्यक्रम के अन्तर्गत केन्द्रीय सरकार द्वारा वृद्धावस्था बीमा पद्धति एंव केन्द्रीय बेरोजगार मुआवजा/प्रतिपूर्ति पद्धति का संचालन रखा गया।

2. सुनिश्चित जन सहायता पद्धति ;Public Categorical Assistance Programmeद्ध: यह कार्यक्रम केन्द्रीय सरकार द्वारा अनुदान पद्धति पर आधारित था और तीन समूहों के व्यक्तियों के लिए उपलब्ध था: अ. वृद्धावस्था सहायता ;Old age Assistanceद्ध, ब. सहायतार्थी नेत्रहीनों को सहायता;Aid to the Needy Blindद्ध, स. आश्रित बच्चों को सहायता ;Aid to the Dependent Childrenद्ध इसमें एक और चैथा समूह 1950 में जोड़ दियाः द. स्थाई रूप से पूर्ण अपंग व्यक्तियों को सहायता । ;Aid to permanently and Totally Disabledद्ध

3. स्वास्थ्य एवं कल्याण सेवाओं का कार्यक्रम;Programme of Health and Welfare Servicesद्ध : इस कार्यक्रम के अन्तर्गत मातृ-शिशु स्वास्थ्य सेवाएं, अपंग बालकों के लिए सेवायें, बाल कल्याण सेवायें, व्यवसायिक पुनर्वास ;Vocational Rehabilitation Act, 1944 ds vuqlkj½A

इन तीनों कार्यक्रमों की देख रेख का कार्य नई संस्था, Social Security Board (1935) को सौंप दिया गया जिसके तीन सदस्य थे। इनकी नियुक्ति अमेरिका के राष्ट्रपति द्वारा की गई। इस Social Security Board को 1939 में एक नये संगठन के अधीन कर दिया। 1946 में Social Security Agency इस बोर्ड को समाप्त करके एक नया विभाग Social Security Administration संगठित किया गया।

7.11 सारांश

सारांश के रूप में इस अध्याय में सन् 1900 से 1950 के मध्य अमेरिका में समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास के अन्तर्गत समाज कल्याण सेवाएं तथा सामाजिक सुरक्षा से सम्बन्धित उपायों की शुरूआत की गयी। जिसका मुख्य उद्देश्य आवश्यकताग्रस्त लोगों की सहायता करना रहा है। इस काल में औद्योगीकरण का भी अत्यधिक प्रभाव पड़ा। जिसके द्वारा समाज कार्य की विकास को अत्यधिक बल प्राप्त हुआ।

7.12 अभ्यासार्थ प्रश्न

(1) सन् 1900 से 1950 के मध्य अमेरिका में समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास की रूपरेखा को स्पष्ट कीजिए।

(2) समाज कल्याण के क्षेत्र में राज्य की भूमिका का बताइये।

(3) 1900 से 1950 के मध्य समाज कल्याण के क्षेत्र में कौन-कौन सी सेवाएं प्रदान की गयी।

(4) निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

(अ) बाल कल्याण सेवाएं

(ब) प्रत्यक्ष सहायता

(स) आर्थिक सहायता

(द) सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम

(य) समाज कल्याण संस्थाएं

(5) समाज कार्य विकास पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

7.14 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. Friedlander, W. A. Indtrodution of Social Welfare, Prentice Hall, INC. New York, 1995.

2. Thomas P.T.: Profession Traning in Social Work, in Sugata Das Gupta (ed) "Towards in Pilosophy of Social Work in India Popular Books Services, New Delhi, 1967.
3. Ahamad, Mirza Raffiuddin, Samaj Kayra: Darshan evam Pranaliyan, Repid Books Services, Lucknow, 1969.
4. Mishra, P.D. Social Work Profession in India, New Royal Book Co., Lucknow, 2004.
5. Sudan K.S., Samaj Karya: Siddhant evam Abhyas, N.S. Publications Lucknow, 2011.
6. Mishra, P.D., Samaj Karya: Itihas, Darshan evam Pranaliyan, New Royal Book Co. Lucknow, 2004.
7. Singh, D.K., and Bhartiya, A.K., Social Work: Philosophy and Methods, New Royal Book Co. Lucknow, 2009.
8. Shastri R.R., Social Work Tradition in India, Welfare Forum and Research Organization, Varanasi, 1986.
9. Dinitto, D.M. and Mcneece, C.A. Social Work Issues and Opportunities: In a Challenging Profession, LYCEUM Books INC, Chicago, 2008.
10. O.Hare, Thomas, Essential Skills of Social Work Practics: Assesment Intervetion Evaluation LYCEUM Books INC, Chicago, 2009.
11. Adams, R.; Dominelli, L. and Payne, M.; Social Work: Themes, Issues and Critical Debates, Second edition (ed), Palgrave, New York, 1998.
12. Clark, S. Social Work as Community Development: A Management Model for Social Change, Second Eddition (ed), Ashgate Publishing Ltd., England, 2000.
13. Colby, Ira and Dziegielewski, S., Introdution to Social Work: The People's Profession, Second Eddition (ed), LYCEUM Books INC, Chicago, 2004.
14. Srivastava S.P. "Addressing the future of Social Work in India" Social Work Education in India (ed) by S.Signh and S. Swaminathan New Royal Books Co. 2003.
15. Singh, Surendra, : Future Chellanges before Social Work Proffesion in India and Reuired Response, Contemporary Social Work Volume 12 October 1995.

संयुक्त राज्य अमेरिका में समाज कार्य का ऐतिहासिक विकास (1950 से अब तक)

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 भूमिका

8.3 निर्धनता उन्मूलन कार्यक्रम

8.4 स्वास्थ्य कार्यक्रम

8.5 सारांश

8.6 अभ्यास प्रश्न

8.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

8.0 उद्देश्य

प्रस्तुत अध्याय के अध्ययन के पश्चात आप –

1.अमेरिका में समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास के अन्तर्गत निर्धनता उन्मूलन कार्यक्रम के द्वारा निर्धनता को समाप्त करने का प्रयास किस प्रकार किया गया, इस तथ्य से अवगत हो जायेंगे |

2. स्वास्थ्य कार्यक्रमों के माध्यम से लोगों को स्वास्थ्य सेवाये प्रदान किये जाने के विषय में जान सकेंगे ।

8.1 प्रस्तावना

अमेरिका के संविधान में समाज कल्याण का कोई स्थान नहीं था परन्तु महान मन्दी के पश्चात् बड़ी संख्या में बेरोजगारों की संख्या में वृद्धि होने के कारण राज्य के द्वारा लोगों की सहायता करने का प्रयास किया गया। इसी क्रम मे सन् 1950 के पश्चात् समाज कार्य के क्षेत्र में उल्लेखनीय वृद्धि हुई।

8.2 भूमिका

अमेरिका में 1950 के पश्चात् राज्य का उत्तरदायित्व अत्यधिक बढ़ गया लोगों की सहायता करने का अधिकार राज्य ने स्वतः ले लिया। इस काल में अमेरिका में मुख्य रूप से कल्याणकारी सेवाओं के द्वारा लोगों की सहायता की जाने लगी। जिसका उद्देश्य लोगों के उत्थान से था। द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान अधिकतर समाज कार्यकर्ता युद्ध सम्बन्धित कार्यों के साथ युद्ध से प्रभावित लोगों के साथ कार्य कर रहे थे। समाज कार्य में एक व्यावसायिक रूप व्यावसायिक अभ्यासों तथा उद्देश्यों तथा परास्नातक स्तर पर समाज कार्य के पाठ्यक्रम एवं संस्था द्वारा किये जाने वाले अभ्यासों के फलस्वरूप अस्तित्व में आया।

8.3 निर्धनता उन्मूलन कार्यक्रम

इस आन्दोलन के द्वारा समाज कार्य शिक्षा से अंगभूतों तथा मानकों स्थापित करने के उद्देश्य से सन् 1952 में काउंसिल आॅफ सोशल वर्क एजुकेशन परिषद तथा सन् 1955 में नेशनल एसोसिएशन आफ सोशल वर्कर्स की स्थापना की गयी। इसी समय 1953 में स्वास्थ्य विभाग, शिक्षा तथा कल्याण विभाग की स्थापना की गयी इस प्रकार केन्द्रीय ;Federalद्ध सरकार ने जनकल्याण के क्षेत्र में केवल थोड़ा उत्तरदायित्व ही ग्रहण किया। अमेरिका के Social Security Act ने समाज कल्याण के सभी क्षेत्रों में एक व्यापक पद्धति का निर्माण न करके समाज कल्याण के क्षेत्र में कुछ चुने हुए विशेष प्रकार के सहायता कार्यों में केन्द्रीय अनुदान का कार्यक्रम ही चलाया। तथा निर्धन लोगों के लिए आयोजित किये जाने वाले कार्यक्रमों को परिवर्तित करके मध्यम वर्गीय श्वेत श्रमिकों के लिए भी किया जाने लगा। इस आधार पर समाज कल्याण कार्यक्रमों का आयोजन किया जाने लगा।

सन् 1960 के दशक के प्रारम्भिक चरण में अमेरिकी लोगों ने निर्धनता को समाजिक कारण माना तथा यह पाया कि लगभग 40 मिलियन लोग जिसमें एक तिहाई बच्चे थे, आधुनिक आर्थिक तथा सामाजिक प्रगति के संसाधनों से वंचित थे।

1961 के बाद प्रारंभ होने वाले इस काल की प्रमुख विषेषता निर्धनता उन्मूलन कार्यक्रम है। अमरीका में समाज वैज्ञानिकों के द्वारा इस बात को उजागर किये जाने के कारण कि अमरीकी समाज में भी निर्धनता हैं, इस समस्या की ओर सरकार का ध्यान आकर्षित हुआ और 1960 के पश्चात् संघीय सरकार निर्धनता उन्मूलन कार्यक्रमों को चलाने के क्षेत्र में आगे आयी। निर्धनता को दूर करने की दृष्टि से समय-समय पर कानून बनाये गये। 1961 में क्षेत्र विकास अधिनियम, 1962 में जनशक्ति विकास एवं प्रषिक्षण अधिनियम तथा 1964 में आर्थिक अवसर अधिनियम पारित किये गये। आर्थिक अवसर अधिनियम निर्धनता उन्मूलन की दृष्टि से सर्वाधिक महत्वपूर्ण है और इसके अधीन युवा कार्यक्रम, ग्रामीण क्षेत्रों में निर्धनता उन्मूलन के विषिष्ट कार्यक्रम, सेवायोजन एवं निवेशों के लिए प्रलोभन कार्यक्रम तथा कार्य अनुभव संबंधी कार्यक्रम चलाये गये।

निर्धनता उन्मूलन के विभिन्न कार्यक्रमों के साथ-साथ कालीर प्रजाति के लोगों को भी विषेष संरक्षण प्रदान किया जा रहा है। धनात्मक समर्थन का कार्यक्रम चलाते हुए काली प्रजाती के लोगों को कुछ निर्धारित नियमों के अनुसार सेवायोजन में प्राथमिकता प्रदान की जाती है।

8.4 स्वास्थ्य कार्यक्रम

सन् 1964 अमेरिकी राष्ट्रपति द्वारा Unconditional War on Poverty की घोषणा की गयी। सन् 1965 में स्वास्थ्य कार्यक्रम चिकित्सीय देखभाल कार्यक्रम को कांग्रेस द्वारा पारित किया गया, आवासीय एवं नगरीय विकास विभाग की स्थापना की गयी, ओल्डर अमेरिकन एक्ट को निर्मित करके वृद्धों को सेवाएं प्रदान की गयी तथा खाद्य कार्यक्रम का शुभारम्भ कृषि विभाग के द्वारा किया गया। सन् 1966 में माडल सिटिज एक्ट के द्वारा निश्चित नगरीय क्षेत्रों में गहन सेवाएं प्रदान की गयी तथा सामुदायिक नियंत्रण की विचार धारा पर बल दिया गया। सामज कार्यकर्ताओं ने निर्धनता उन्मूलन कार्यक्रमों तथा सामुदायिक क्रिया कार्यक्रमों में मुख्य भूमिका निभायी और नये स्वैच्छिक कर्ताओं को प्रशिक्षित किया।

सन् 1970 के दशक में यथा सन् 1972 व 1973 में कांग्रेस द्वारा स्टेट एण्ड लोकल फिसकल असिसटेंस एम्पलायमेंट एण्ड ट्रेनिंग एक्ट ;CETAद्ध को पारित किया गया। जिसका मुख्य उद्देश्य राजस्व के द्वारा सीधे

स्थानीय समुदायों की सहायता के लिए समाज कल्याण कार्यक्रमों के लिए अनुदान देना था। सन् 1972 में सामाजिक नीति के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कदम उठाते हुए विकलांग तथा निम्न आय वर्ग के वृद्धों को सहायता पहुंचाने हेतु तथा स्फीति के कारण होनी वाली हानि के प्रभाव को कम करने के लिए जीवन निर्वाह लागत में वृद्धि के मानकों को निर्धारित किया गया। जनवरी 1975 में सामाजिक सुरक्षा अधिनियम को लागू करते हुए यह विचार विकसित किया गया राजस्व की सहायता से राज्यों सामाजिक सेवाएं प्रदान की जाए। सन् 1999 में नेशनल एसोसिएशन आॅफ सोशल वर्कर्स द्वारा आचार-संहिता को अपनाया गया।

इस काल की विशेषता Anti Proverty Programme का चलाया जाना है। बहुत से अर्थशास्त्रियों, समाजशास्त्रियों और राजनैतिक विचारकों ने अमेरिका के समाज में एक और सुसम्पन्न/ससुमृद्ध समाज की और दूसरी ओर इसी सुसमृद्धिता के बीच निर्धनता की भी अधिक चर्चा करना शुरू कर दिया।

इस प्रकार अमेरिका में समाज कार्य के इतिहास में लगातार नये-नये कार्यक्रमों का सामने आना देखा जा सकता है। नये-नये समाज कल्याण के कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं। कभी-कभी समाज कल्याण बजट में कमी करने से कुछ कल्याण कार्यक्रम पर रोक भी लगा दी जाती है। इसी प्रकार समाज कार्य की शिक्षा के क्षेत्र में भी परिवर्तन देखे जा सकते हैं।

8.5 सारांश

सारांश के रूप में इस अध्याय में समाज कार्य शिक्षा के विकास, निर्धनता उन्मूलन एवं विकास, स्वास्थ्य एवं सामाजिक सुरक्षा से सम्बन्धित प्रावधानों अथवा अधिनियमों से प्राप्त होने वाले लाभों के विषय में जानकारी प्राप्त की गयी है।

8.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

(1) सन् 1950 के पश्चात् अमेरिका में समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास की रूपरेखा को स्पष्ट कीजिए।

(2) निर्धनता उन्मूलन के कार्यक्रम को बताइए।

(3) स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्यक्रमों को स्पष्ट कीजिए।

(4) समाज कार्य शिक्षा के विकास पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. Friedlander, W. A. Indtrodution of Social Welfare, Prentice Hall, INC. New York, 1995.
2. Thomas P.T.: Profession Traning in Social Work, in Sugata Das Gupta (ed) "Towards in Pilosophy of Social Work in India Popular Books Services, New Delhi, 1967.
3. Ahamad, Mirza Raffiuddin, Samaj Kayra: Darshan evam Pranaliyan, Repid Books Services, Lucknow, 1969.
4. Mishra, P.D. Social Work Profession in India, New Royal Book Co., Lucknow, 2004.
5. Sudan K.S., Samaj Karya: Siddhant evam Abhyas, N.S. Publications Lucknow, 2011.
6. Mishra, P.D., Samaj Karya: Itihas, Darshan evam Pranaliyan, New Royal Book Co. Lucknow, 2004.

7. Singh, D.K., and Bhartiya, A.K., Social Work: Philosophy and Methods, New Royal Book Co. Lucknow, 2009.
8. Shastri R.R., Social Work Tradition in India, Welfare Forum and Research Organization, Varanasi, 1986.
9. Dinitto, D.M. and Mcneece, C.A. Social Work Issues and Opportunities: In a Challenging Profession, LYCEUM Books INC, Chicago, 2008.
10. O.Hare, Thomas, Essential Skills of Social Work Practics: Assesment Intervetion Evaluation LYCEUM Books INC, Chicago, 2009.
11. Adams, R.; Dominelli, L. and Payne, M.; Social Work: Themes, Issues and Critical Debates, Second edition (ed), Palgrave, New York, 1998.
12. Clark, S. Social Work as Community Development: A Management Model for Social Change, Second Eddition (ed), Ashgate Publishing Ltd., England, 2000.
13. Colby, Ira and Dziegielewski, S., Introdution to Social Work: The People's Profession, Second Eddition (ed), LYCEUM Books INC, Chicago, 2004.
14. Srivastava S.P. "Addressing the future of Social Work in India" Social Work Education in India (ed) by S.Signh and S. Swaminathan New Royal Books Co. 2003.
15. Singh, Surendra, : Future Chellanges before Social Work Proffesion in India and Reuired Response, Contemporary Social Work Volume 12 October 1995.

इकाई -9

भारत में समाज कार्य का ऐतिहासिक विकास

(1800 से पूर्व)

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य

9.1 प्रस्तावना

9.2 भूमिका

9.3 सामुदायिक जीवन काल

9.4 धर्म सुधार का काल

9.5 1800 से पूर्व समाज सुधार का काल

9.6 सारांश

9.7 अभ्यास प्रश्न

9.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

9.0 उद्देश्य

प्रस्तुत अध्याय के अध्ययन के पश्चात आप –

1. भारत में समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास को समझ जायेंगे |
2. भारत में समाज कार्य का प्रारम्भ के साथ-साथ सामुदायिक जीवन काल तथा धार्मिक एवं समाज सुधार काल के विषय में जान जायेंगे ।

9.1 प्रस्तावना

समाज कार्य का मूलतः और औद्योगीकरण एवं नगरीयकरण के दुष्प्रभावों के परिणामस्वरूप एक विद्या विशेष के रूप में उच्च शिक्षा के क्षितिज पर अवतरित हुआ। परन्तु इसका प्रमुख आधार भारत में दान, परोपकार तथा धर्मार्थ की भावना रहा है।

9.2 भूमिका

मानव समाज के इतिहास में प्रत्येक समाज और प्रत्येक युग में दुर्बल, निर्धन, निराश्रयी व्यक्ति रहे हैं। प्रत्येक समाज अपने कमजोर सदस्यों वृद्ध, रोगी, अपंग, अनाथ सदस्यों की किसी न किसी रूप में सहायता करता आया है। सभी सभ्यताओं में ऐसे चिन्ह मिलते हैं जिनसे पता चलता है कि उस समय के निवासी, उन निवासियों

के प्रति, जो बीमार, वृद्ध, अपंग, निर्धन एवं निराश्रित थे, दया की भावना रखते थे। धर्म और धार्मिक संस्थाओं के प्रारम्भ होते ही धार्मिक गुरूओं ने हर समाज में ऐसे सभी व्यक्तियों को सुरक्षा प्रदान करने में नेतृत्व प्रदान किया।

9.3 सामुदायिक जीवन काल

भारत का समाज सदा से ही एक परम्परात्मक समाज रहा है। परन्तु परम्परायें समय के परिवर्तन के साथ परिवर्तित भी होती रही है। सिंधु घाटी के सभ्यता के मोहनजोदड़ों तथा हड़प्पा से प्राप्त अवशेषों से यह पता चलता है कि इस अवधि में नगरीकरण उच्चतम सीमा पर था किन्तु दास प्रथा किसी न किसी रूप में विद्यमान थी और इन दासों की आवश्यकताओं की पूर्ति और उनके कल्याण के लिए भी व्यवस्था की जाती थी।

वैदिक काल में तीन प्रकार के सामाजिक कार्य स्पष्ट रूप से सम्पादित किये जाते थे। ये कार्य शासन, सुरक्षा तथा व्यापार से सम्बन्धित थे। इन कार्यो को सम्पादित करने वाले तीन वर्ग विद्यमान थे। इस युग में यज्ञ, हवन एवं दान का प्रचलन था। समाज के सभी सदस्य उत्पादन सम्बन्धी कार्यो में भाग लेते थे और उनके सामूहिक श्रम के फलों को सभी सदस्यों में वितरित किया जाता था। यज्ञ जीवन तथा उत्पत्ति को बनाये रखने के लिए समुदाय की क्रियाओं का संकलन था। हवन सामूहिक प्रयासों के परिणामस्वरूप दिन-प्रतिदिन होने वाले लाभों का व्यक्तिगत सदस्यों में वितरण था। दान प्रसन्नता के अवसरों पर समुदाय के सदस्यों में युद्ध से प्राप्त वस्तुओं का वितरण था। इस व्यवस्था में समुदाय के प्रत्येक व्यक्ति की आवश्यकताओं की पूर्ति करने का उत्तरदायित्व अन्य प्रत्येक व्यक्ति पर था।

वैदिक काल में विशेष प्रकार की सहायता की आवश्यकता रखने वाले व्यक्तियों का उत्तरदायित्व शासकों, धनी व्यक्तियों तथा सामान्य समुदाय के साधारण सदस्यों द्वारा आपस में बांट लिया जाता था। सभी लोग अपने साधनों के अनुसार अपने कार्य का पालन करने में एक दूसरे से आगे बढ़ने का प्रयास करते थे। ये कार्य मंदिरों एवं आश्रमों की स्थापना, उन्हें सुचारू रूप से चलाने के लिए किये गये सम्पत्ति के समपर्ण, सन्तों एवं महात्माओं के लिए मठों के निर्माण, घुमक्कड़ योगियों तथा मंदिरों एवं आश्रमों में रहने वालों के लिए भोजन, इत्यादि की आपूर्ति के रूप में किया जाता था।

बौद्ध काल में भी लोगों के कल्याण के लिए भगवान बुद्ध ने सड़के बनवाई, ऊबड़-खाबड़ मार्गो को बराबर करवाया, बांध बनवाये, पुलों का निर्माण करवाया तथा तालाब खुदवायें और समाज में पायी जाने वाली परम्परावादी अनेक प्रकार की कुरीतियों का विरोध किया।

यदि हम भारतीय इतिहास के अतिप्राचीन काल को देखें तो ज्ञात होगा कि उस समय का समाज एक प्रकार का साम्यवादी समाज था। यह उस समय की बात है जब निजी सम्पत्ति का जन्म हुआ तो वर्ग एवं राज्य का भी जन्म हुआ और यज्ञ केवल एक क्रिया-पद्धति होकर रह गया और युद्ध में प्राप्त सम्पत्ति समुदाय की सम्पत्ति न समझी जाकर राजा एवं राज्य करने वाले वर्ग की सम्पत्ति समझी जाने लगी। उस समय प्रतिदिन के सामूहिक परिश्रम से जो वस्तुएं प्राप्त होती थीं उन्हें जब वितरित किया जाता था और जब उनका उपभोग होता था तो उसे हवन कहते थे। इसके अतिरिक्त जब युद्ध में प्राप्त वस्तुओं अथवा अन्य स्थाई वस्तुओं का वितरण होता था तो उसे दान कहते थे। ऋग्वेद में दान शब्द का अर्थ है विभाजन''। इसका अर्थ भिक्षा या दान न था।

दान का अब अर्थ न रहा जो पहले था। अब दान एक ऐच्छिक गुण समझा जाने लगा और अब यह राजाओं या धनवानों पर निर्भर करता था वह दान किसे दें और किसे न दें क्योंकि दान देना अब अनिवार्य न था। अब अच्छे और बुरे दान में अन्तर समझा जाने लगा और दान के नैतिक मानदण्ड दिये गये। इस प्रकार दान की

संस्था जो प्राचीन युग में सामाजिक बीमे का एक रूप थी अब राज्य करने वाले वर्ग का एक अधिकार बन गई। पंचनहा यज्ञ का अर्थ था प्राकृतिक एवं मनुष्य के प्रति किये हुए पापों का प्रायश्चित। देवऋण एवं मनुष्य ऋण से मुक्त होने के लिए इष्टापूर्ति अनिवार्य था। इष्ट वैयक्तिक गुणों को अपूर्त अर्थात् सामाजिक गुणों के साथ मिलकर पूरा करना पड़ता था। इसमें सामाजिक सेवा अर्थात् कुएं खुदवाना, तालाब बनवाना आदि कार्य सम्मिलित थे। इस प्रकार धार्मिक प्रेरणा के आधार पर सामाजिक सेवा का आरम्भ हुआ और इष्टापूर्त के सम्बन्ध मे नहर बनवाने, पेंड़ लगवाने, मन्दिर बनवाने, आश्रम बनवाने, विद्यालय, चिकित्सालय आदि स्थापित करने और अन्य सार्वजनिक कल्याण का कार्य होने लगा। परन्तु इन सब कार्यों और अन्य सार्वजनिक कल्याण का कार्य होने लगा। परन्तु इस सब कार्यों का प्रमुख उद्देश्य आवागमन से मुक्ति प्राप्त करना एवं सामाजिक अनुमोदन प्राप्त करना था।

यह सब कार्य वैयक्तिक रूप से भी किये जाते रहे और इसके अतिरिक्त अनेक धार्मिक संस्थायें भी इन कार्यों की पूर्ति के लिए स्थापित हो गयी। अनेक धनवान व्यक्तियों ने अपनी सम्पत्ति इस उद्देश्य के लिए त्याग दी। सामाजिक सेवा का यह धार्मिक आधार अब भी बाकी है और अभी भी हमारे देश की ऐच्छिक सामाजिक सेवा पद्धति बहुत कुछ धर्म द्वारा ही प्रेरित हैं।

9.4 धर्म सुधार का काल

भारत में जब मुसलमानों का आगमन हुआ तो उन्होंने भी अपने धर्म के आदेशानुसार दान पुण्य पर अधिक धन व्यय किया। इस्लाम में जकात एक महत्वपूर्ण तत्व है जिसके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को प्रति वर्ष अपनी सम्पत्ति, विशेष प्रकार से धन या स्वर्ण, का ढाई प्रतिशत भाग जकात के रूप में व्यय करना आवश्यक है। जकात की रकम निर्धन एवं अभावग्रस्त व्यक्तियों पर व्यय की जाती है। इसके अतिरिक्त इस्लाम में एक संस्था खैरात की भी है जिसके अनुसार अभावग्रस्त व्यक्तियों की आर्थिक सहायता व्यक्तिगत रूप से की जाती है। इसके लिए कोई दर निश्चित नहीं है और यह इच्छानुसार दी जाती है। इस्लाम में धन के प्रति घृणा का प्रचार किया गया है और अधिक से अधिक धन को अभावग्रस्त व्यक्तियों में वितरित करने पर बल दिया गया है।

अकबर के शासनकाल में अनेक प्रकार के समाज सुधार किये गये। अकबर ने दीन इलाही चलाया। उसने अपने राज्य को एक धर्म निरपेक्ष राज्य घोषित किया। दास प्रथा को समाप्त किया और यात्री कर तथा जजिया कर लगाया ताकि कल्याण सम्बंधी कार्य सम्पादित किय जा सकें। अकबर ने सती प्रथा के सम्बन्ध में यह आदेष किया कि यदि कोई विधवा सती न होना चाहे तो उसे करने के लिए बाध्य नही किया जायेगा। उसने द्विपत्नी विवाह पर रोक लगवायी तथा विवाह के आयु की सीमा को बढ़ाया।

दिल्ली के सुल्तानों ने अपने धर्म के सिद्धान्तों के अनुसार, जो दान पर अधिक बल देता है, निर्धनों एवं अभावग्रस्त व्यक्तियों पर अधिक धन व्यय किया। जकात द्वारा प्राप्त धन के अतिरिक्त, जो वैधानिक रूप से दान सम्बन्धी कार्यों के लिए निर्दिष्ट होता था, अन्य साधनों से प्राप्त बड़ी-बड़ी धनराशियां निर्धनों पर व्यय की जाती थीं। इस सम्बन्ध में शेरशाह का एक विश्वसनीय शिष्ट मनुष्य खवास खां बहुत प्रसिद्ध है। हजारों नर-नारी उसके बनवाए हुए घरों और खेमों में रहते थे और वह स्वयं उनके लिए भोजन परसता था। हिन्दुओं को कच्चा भोजन मिलता था- महमूद गवान जो एक राज्य का मालिक था अपना सारा धन निर्धनों पर व्यय कर देता था और स्वयं कृषकों वाला साधारण भोजन लेता था और चटाई बिछाकर जमीन पर सोता था। खानकाहे भी निर्धन सहायता का केन्द्र था क्योंकि वहां भोजन निःशुल्क मिलता था और अभावग्रस्तों एवं यात्रियों को ठहरने का स्थान मिलता था। राज्य की ओर से या निजी व्यक्तियों की ओर से जो धन उन्हें मिलता था उसका एक बड़ा भाग शिक्षा, समाज सेवा, एवं निर्धन सहायता पर व्यय होता था। यह दान पुण्य इतना विस्तृत था कि इसके कारण व्यावसायिक भिक्षुकों का एक

वर्ग उत्पन्न हो गया। इब्ने बूतता ने एक विभाग के विषय में लिखा है जिसमें अभावग्रस्त पुरूषों एवं स्त्रियों की सूची रखी जाती थी और उन्हें अनाज दिया जाता था। विद्धानों को निरीक्षक नियुक्त किया जाता था ताकि तटस्थ रूप से कार्य हो सके। फीरोज शाह ने अपने कोतवाल को आदेश दे रखा था कि वह वृत्तिहीनों को उसके सामने प्रस्तुत करे। वे उसके सामने प्रस्तुत किये जाते थे और वह उनके लिए रोजगार उपलब्ध करता था। इस बात में वह सुल्तान गयासुद्दीन तुगलक का अनुसरण करता था जिसके अनुसार अपराध अभाव का परिणाम था। अतः वह निर्धनों के लिए कोई कार्य या व्यवसाय उपलब्ध करता था। वह उन्हें धन या भूमि अनुदान के रूप में देता था जिससे वह कृषि कर सकें। उसने इस बात का प्रयास किया कि भिक्षावृत्ति उसके राज्य से समाप्त हो जाये और इसके लिए वह भिक्षुओं को किसी लाभदायक व्यवसाय ग्रहण करने के लिए तैयार करता था।

''भैष्जिक सहायता की भी उपेक्षा न की जाती थी-मुहम्मद बिन तुगलक के काल में दिल्ली नगर में सत्तर चिकित्सालय थे।

भारत में एक अधिक समय से पारसी लोग भी रहते हैं। पारसियों के धर्म में भी दान का बड़ा महत्व दिया गया है। पारसियों ने यहां धर्मशालाएं, तालाब, कुएं, विद्यालय आदि बनवाए। उन्होंने बहुत से प्रन्यास स्थापित किये जिनमें से एक प्रसिद्ध प्रन्यास बाम्बे पारसी पंचायत ट्रस्ट फन्ड्स है। इस प्रन्यास के उद्देश्य में पारसी विधवाओं की सहायता, पारसी बालिकाओं की विवाह सम्बन्धी सहायता नेत्रहीनों पारसियों की सहायता, निर्धन पारसियों की सहायता, और धार्मिक शिक्षा सम्बन्धी सहायता सम्मिलित है।

सभी धर्म, दान, परोपकारिता एवं परस्पर सहायता पर बल देते आये हैं। भिक्षा देना, निराश्रित व्यक्तियों की देखभाल एवं भोजन कराना धार्मिक पुण्य के कार्य समझे जाते थे। मन्दिरों में बेघर व्यक्तियों को शरण दी जाती थी। सामाजिक संस्थाएं भी समुदाय के वृद्ध, बीमार एवं अन्य असहाय वर्गों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए कुछ न कुछ प्राविधान करती थी। संयुक्त परिवार वृद्ध सदस्यों, शारीरिक अपंग व्यक्तियों, दीर्घकालीन बीमारों एवं मन्द बुद्धि वाले व्यक्तियों की देखभाल करते थे। सहायतार्थी व्यक्तियों का उत्तरदायित्व जातीय एवं सामुदायिक परिषद का समझा जाता था। आर्थिक पद्धति स्वयं सामाजिक प्रथाओं द्वारा नियंत्रित होती थी और सामंती नियोजक अपने कर्मचारियों की पालक/पैतृक दृष्टि से देखभाल करते थे।

9.5 1800 से पूर्व समाज सुधार का काल

समाज कार्य के इतिहास के इस प्रथम चरण मे समाज सुधार पर बल दिया गया। इस काल मे जब अंग्रेज, व्यापारी बनकर भारत आये और शासक बन गये। भारत में अंग्रेजों के क्रिस्चन मिशनों ने अपने धर्म के प्रचार के सम्बन्ध में विभिन्न प्रकार के समाज कल्याण सम्बन्धी कार्य किये। अंग्रेज भारतीयों की अपेक्षा अपने ही देशवासियों के कल्याण में रूचि रखते थे जो कानून उन्होने बनाये वो भी अपने देशवासियों के लिए थे। हिन्दुओं और मुसलमानों के अपने निजी कानून ही सख्ती से लागू किये गये । इन कारणों से समाज सुधार में कम प्रगति हो सकी। इस चरण में जो समाज सुधार का कार्य हुआ उसके तीन मुख्य कारण थे: 1. प्रारम्भिक ईसाई प्रचारकों का प्रभाव, 2. इन ईसाई प्रचारकों ने हिन्दुओं के धर्म परिवर्तन के लिए उनके जटिल हिन्दू धर्म और सामाजिक बुराइयों एवं रीति रिवाजों का विरोध किया और, 3. पाश्चात्य शिक्षा का प्रभाव जिसने भारतीय चिंतन को प्रभावित किया। भारतीय सुधारक पाश्चात्य विचारों से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सके और इस प्रकार प्रभावित होकर सामाजिक परिवर्तन के लिए कार्य करने लगे। ईसाई प्रचारकों ने सिद्ध कर दिया कि हिन्दू सामाजिक संरचना में सामाजिक सुधार आवश्यक है। मुख्य रूप से बाल विवाह, बहुविवाह प्रथा, बालिका हत्या, सती प्रथा और विधवा पुनः विवाह सम्बन्धी सुधारों पर बल दिया गया।

1780 में बंगाल में सिरामपुर मिशन स्थापित हुआ इस मिशन ने हिन्दू सामाजिक ढांचे में सुधार लाने का प्रयास किया। उदाहरण स्वरूप इसने बाल-विवाह, बहु -विवाह, बालिका हत्या, सती एवं विधवा विवाह पर निषेध के विरूद्ध आवाज उठाई। इसके अतिरिक्त इस मिशन ने जाति प्रथा के विरूद्ध भी प्रचार किया। अपने इन विचारों को क्रियाशील रूप प्रदान करने हेतु इस मिशन ने अनेक समाज कल्याण संस्थाएं स्थापित की। जिनके द्वारा अभावग्रस्त एवं पीड़ित लोगों की सहायता की जाती थी। उस समय अधिकतर कल्याणकारी संस्थाएं क्रिस्चन मिशनों द्वारा स्थापित की गई थी। कुछ समय पश्चात् ही लोकहितैषी व्यक्तियों, अन्य धार्मिक संस्थाओं, एवं राज्य ने इस क्षेत्र में कार्य करना आरम्भ किया। अट्ठारहवीं शताब्दी के अन्त में क्रिस्चन मिशनों का प्रचार भारत के विचारशील लोगों के लिए एक चुनौती का रूप रखता था। अतः इस चुनौती का सामना करने के लिए अनेक लोग तैयार हुए। भारत में अट्ठारहवीं शताब्दी में समाज सेवा का सर्वप्रथम क्षेत्र शिशु कल्याण रहा है। अट्ठारहवीं शताब्दी से ही यहां अनाथालय एवं निःशुल्क विद्यालय स्थापित किये गये। उन्नीसवीं शताब्दी में धर्मार्थ चिकित्सालय विद्यालय स्थापित किये गये। उन्नीसवीं शताब्दी में धर्मार्थ चिकित्सालय ऐच्छिक क्षेत्र में स्थापित किये गये। इस समय अधिकतर पृथक-पृथक सम्प्रदायों के लिए धर्मार्थ संस्थाओं की स्थापना हुई और बीसवीं शताब्दी के आरंभ तक इसी प्रकार होता रहा परन्तु बीसवीं शताब्दी के दूसरे और तीसरे दस वर्षों में स्त्रियों के कल्याण के लिए सामान्य संस्थाएं स्थापित हुई।

9.6 सारांश

सारांश के रूप में भारत में समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास के प्रारम्भिक चरणों के विषय में बताया गया है। भारत में समाज कार्य के विकास के सम्बन्ध में यह माना जाता है कि समाज कार्य की उत्पत्ति सामुदायिक काल से प्रारम्भ हुई। तत्पश्चात् यह कार्य धर्म सुधार तथा समाज सुधार के द्वारा किया जाने लगा।

9.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

(1) भारत में समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास के प्रारम्भिक चरणों का उल्लेख कीजिए।

(2) सामुदायिक काल में समाज कार्य की भूमिका का उल्लेख कीजिए।

(3) मुस्लिमों का धर्म सुधार पर क्या प्रभाव पड़ा।

(4) निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

(अ) समाज सुधार

(ब) वैदिक काल

(स) सामुदायिक काल

(द) धर्म सुधार काल

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. Friedlander, W. A. Indtrodution of Social Welfare, Prentice Hall, INC. New York, 1995.
2. Thomas P.T.: Profession Traning in Social Work, in Sugata Das Gupta (ed) "Towards in Pilosophy of Social Work in India Popular Books Services, New Delhi, 1967.

3. Ahamad, Mirza Raffiuddin, Samaj Kayra: Darshan evam Pranaliyan, Repid Books Services, Lucknow, 1969.
4. Mishra, P.D. Social Work Profession in India, New Royal Book Co., Lucknow, 2004.
5. Sudan K.S., Samaj Karya: Siddhant evam Abhyas, N.S. Publications Lucknow, 2011.
6. Mishra, P.D., Samaj Karya: Itihas, Darshan evam Pranaliyan, New Royal Book Co. Lucknow, 2004.
7. Singh, D.K., and Bhartiya, A.K., Social Work: Philosophy and Methods, New Royal Book Co. Lucknow, 2009.
8. Shastri R.R., Social Work Tradition in India, Welfare Forum and Research Organization, Varanasi, 1986.
9. Dinitto, D.M. and Mcneece, C.A. Social Work Issues and Opportunities: In a Challenging Profession, LYCEUM Books INC, Chicago, 2008.
10. O.Hare, Thomas, Essential Skills of Social Work Practics: Assesment Intervetion Evaluation LYCEUM Books INC, Chicago, 2009.
11. Adams, R.; Dominelli, L. and Payne, M.; Social Work: Themes, Issues and Critical Debates, Second edition (ed), Palgrave, New York, 1998.
12. Clark, S. Social Work as Community Development: A Management Model for Social Change, Second Eddition (ed), Ashgate Publishing Ltd., England, 2000.
13. Colby, Ira and Dziegielewski, S., Introdution to Social Work: The People's Profession, Second Eddition (ed), LYCEUM Books INC, Chicago, 2004.
14. Srivastava S.P. "Addressing the future of Social Work in India" Social Work Education in India (ed) by S.Signh and S. Swaminathan New Royal Books Co. 2003.
15. Singh, Surendra, : Future Chellanges before Social Work Proffesion in India and Reuired Response, Contemporary Social Work Volume 12 October 1995.

इकाई -10

भारत में समाज कार्य का ऐतिहासिक विकास

(1800 से 1900)

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य

10.1 प्रस्तावना

10.2 भूमिका

10.3 1800 के पश्चात् समाज सुधार का काल

10.4 भारत में समाज सेवा

10.5 इसाई मिशनरियों

10.6 भारतीय समाज सुधारक

10.7 सारांश

10.8 अभ्यास प्रश्न

10.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

10.0 उद्देश्य

प्रस्तुत अध्याय के अध्ययन के पश्चात आप –

1.भारत में समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास के क्रम में भारत में धार्मिक सुधार कार्यक्रम तथा इसाई मिशनरियों के द्वारा किये गये समाज कार्यों से अवगत हो जायेंगे |

2. भारतीय समाज सुधारकों द्वारा किये गये कार्यों तथा समाज सेवा के माध्यम से लोगों की सहायता करने का प्रयासों को समझ सकेंगे |

10.1 प्रस्तावना

जीवन का उद्देश्य सर्वतोमुखी विकास करना है परन्तु विकास का मार्ग अत्यन्त जटिलताओं से होकर गुजरता है। जीवन की जटिलताओं के द्वारा ही नये मार्गों की खोज होती है। जिसके द्वारा मार्ग निर्धारित उद्देश्यों की पूर्ति होती है। समाज कार्य का उद्देश्य भी समस्याओं तथा जटिलताओं का समाधान करके लोगों को सहायता पहुंचाना है जिससे कि एक सामंजस्यपूर्ण जीवन व्यतीत कर सके।

10.2 भूमिका

समाज कार्य के द्वारा व्यक्ति, समूह अथवा समुदाय की सहायता करने का प्रयास किया जाता है। जिसके द्वारा वे अपनी आवश्यकताओं को पूर्ण करते हैं। समाज में विभिन्न प्रकार की समस्यायें विद्यमान रहती हैं। जिसके कई कारण होते हैं। आज यह माना जाता है कि किसी भी व्यक्ति की समस्या का समाधान समन्वित सेवाओं के द्वारा ही संभव है। समाज कार्य भी विविध प्रकार की उपलब्ध सेवाओं का उपयोग करते हुए व्यक्ति, समूह अथवा समुदाय का समाधान करता है।

10.3 1800 के पश्चात् समाज सुधार का काल

The Charter Act of 1813 1813 द्वारा पाश्चात्य शिक्षा के विकास के लिए प्राविधान किया गया और नये ज्ञान के विकास के साथ भारतीय विचारकों में अपने सामाजिक मूल्यों और रीति-रिवाजों के प्रति नया उत्साह, उत्पन्न हुआ। राजाराम मोहन राय पहले भारतीय थे जिन्होंने समाज में ऐसी शक्तियों को गतिमान किया जिससे कई सामाजिक बुराइयों को दूर करने का प्रयास किया गया। एक धार्मिक प्रचारक, शिक्षा शास्त्री एवं सामाजिक कार्यकर्ता के प्रतीक होने के नाते राजा राम मोहन राय ने भारतीय व्यवस्था को बहुत प्रभावित किया। राजा राम मोहन राय ने जातीय विभेदों एवं सती प्रथा को दूर करने की सलाह दी। उनके प्रयासों के फलस्वरूप 1829 में नियम द्वारा बंगाल में सती प्रथा को अवैध करार दिया गया। इस प्रकार के नियम बम्बई और मद्रास में भी लागू कर दिये गये। 1815 में उन्होंने आत्मीय समाज स्थापित किया जो 1828 में ब्रह्मो समाज के रूप में विकसित होने लगा। उन्होंने विशेष प्रकार से जाति प्रथा और सती प्रथा का विरोध किया और अनेक शैक्षिक संस्थाओं की स्थापना की। उन्होंने ब्रह्मसमाज की स्थापना की जिसका एक उद्देश्य हिन्दुओं की क्रिस्चन धर्म स्वीकृत करने से सुरक्षित रखना था। ब्रह्मसमाज ने अकाल सहायता, बालिका शिक्षा, स्त्रियों के उत्थान और मद्यनिषेध एवं दान प्रोत्साहन के कार्य किये। ज्योतिबा फूले ने जाति प्रथा के सुधार का प्रयास किया और अनेक संस्थाएं उदाहरण स्वरूप अनाथालय एवं बालिका विद्यालय आदि स्थापित किये। राजा राम मोहन राय के उत्तराधिकारियों द्वारकानाथ टैगोर, देवेन्द्रनाथ टैगोर और केशव चन्द्र सेन ने ब्रह्मो समाज के क्रिया कलापों को सफलता से आगे बढ़ाया। जातीय सुधार लाने के लिए इस प्रकार के कई अन्य संगठन बम्बई और महाराष्ट्र में संगठित किये गये।

1894 में हिन्दू बालिकाओं के लिए प्रथम शिक्षा संस्था आरम्भ की गई। 1863 में केशव चन्द्र सेन ने महिलाओं की शिक्षा के कार्यों को और आगे बढाया। ईश्वर चन्द्र विद्यासागर के प्रयासों द्वारा **Hindu Remarriage Act, 1856** में पारित किया गया। जस्टिस रानाडे ने विधवा पुनः विवाह के लिए और अधिक प्रयास किये और 1861 में **Widow Marriage Association** की स्थापना की। ससीपद बैनर्जी ने न केवल महिला शिक्षा एवं विधवा पुनः विवाह के लिए प्रयास किये बल्कि दलित वर्ग के उत्थान के लिए भी कार्य किया।

10.4 भारत में समाज सेवा

अट्ठारहवीं और उन्नीसवीं शताब्दी में भारत में समाज सेवा पद्धति के मुख्य उद्देश्य दो थे- 1. भारत के सामाजिक एवं धार्मिक ढांचे को पुनः जीवित करना और उसे विदेशी धर्म एवं संस्कृति से सुरक्षित रखना और 2. समाज सेवी संस्थाएं करना जिनमें भारत के निवासियों को क्रिस्चन मिशनों द्वारा स्थापित सामाजिक सेवाओं के प्रयोग की आवश्यकता न रह जाये। इस प्रकार यहां की समाज सेवा पद्धति को क्रिस्चन मिशनों द्वारा स्थापित सामाजिक सेवाओं द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से प्रोत्साहन मिला। इस प्रकार धार्मिक एवं समाज सुधार के कार्य देश के अन्य भागों में भी किये जाने लगे।

1885 में **Indian National Congress** की स्थापना की गई और रानाडे इसे समाज सुधार के लिए अन्य संगठन **Indian Social Conference** की स्थापना जस्टिस रानाडे ने की। **Indian Social Conference** ने कई सामाजिक समस्याओं की ओर जनता का ध्यान दिलाया और इनके समाधान के कार्य किये। यह समस्यायें थीं: बाल-विवाह, दहेज प्रथा विरोध, विधवाओं की स्थिति, बालिकाओं की शिक्षा, मद्य निषेध, अन्रतजातीय विवाह, दलित वर्ग की दशाओं में सुधार, दान और हिन्दू मुस्लिम एकता। रानाडे की मृत्यु के बाद चन्द्रावरकार ने इसका नेतृत्व सम्हाला। उसने **Indian Social Conference** के क्षेत्र को और अधिक व्यापक कर दिया। कई जातियों के लोगों को इसमें सम्मिलित किया जो विभिन्न समाज सेवी संगठनों में कार्य करते आ रहे थे। 1882 में पाण्डिय रमाबाई जो भारत की एक ईसाई मिशनरी थी, ने महिलाओं की स्थिति में सुधार लाने के लिए आर्य महिला समाज की स्थापना की।

एक ओर समाज सुधार आन्दोलन 1877 में स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा बम्बई में आर्य समाज नाम से आरम्भ किया गया। परन्तु यह आन्दोलन पंजाब में ही अपनी स्थिरता बना सका। स्वामी दयानन्द सरस्वती जाति, बाल विवाह, विधवाओं के ब्रह्मचर्य जीवन, धर्म परिवर्तित व्यक्तियों की पुनः वापसी न होने देना आदि विचारधाराओं के विरूद्ध थे। वे राष्ट्रीय स्तर के शिक्षा के कार्यक्रम में विश्वास रखते थे। इन शिक्षा संस्थाओं में कम शुल्क एवं नैतिक शिक्षा पर बल दिया जाता था। इन शिक्षा संस्थाओं में केवल भारतीय शिक्षक ही रखे जाते थे और सरकार से कोई अनुदान नहीं लिया जाता था। लाला लाजपतराय ने कई प्रकार की सामाजिक सेवाओं का गठन किया और स्वामी श्रद्धानन्द ने दलित वर्गो के उत्थान हेतु कई कार्य किये।

स्वामी विवेकानन्द (1862-1902) ने 1887 में रामाकृष्ण मिशन की स्थापना की। 1891 में कन्याकुमारी स्थान पर उन्होनें अपने आपको भारत एवं इसकी अत्याचारों से पीड़ित जनता की सेवा में समर्पित किया। रामाकृष्ण मिशन जो 1897 में गठित किया गया, ने शिक्षा, सामाजिक एवं चिकित्सा सहायता कार्य करना आरम्भ कर दिया। इसके पहले 1890 में मद्रास में **Indian Social Reform** की स्थापना हुई।

1881 में मैडम ब्लावात्स्की तथा कर्नल आल्कट ने मद्रास में एक संगठन **Theosophical Society** की स्थापना की गई। यह संस्था 1893 तक समाज सुधार एवं समाज सेवा में क्षेत्र में तब तक कोई विषेष कार्य नही कर सकी। 1893 में जब **Mrs. Annie Besant** भारत आयीं तो उन्होनें बुद्धिजीवी वर्ग को देवविद्या **(Theosophy)** की ओर आकर्षित किया। परन्तु आरम्भ में समाज सुधार पर बहुत कम ध्यान दिया। 1913 में **Mrs. Annie Besant** ने समाज सुधारकों को अपना समर्थन प्रदान किया। जब तक श्रीमती ऐनी बेंसेण्ट ने सक्रिय रूप से हिन्दू धर्म सिद्धान्तों को उजागर करना तथा अनुष्ठानों एवं सरकारों के पक्ष में तर्क प्रस्तुत करना नही प्रारंभ किया। श्रीमती ऐनी बेसेट ने बनारस में एक सेन्ट्रल हिन्दू कालेज की स्थापना भी की।

बीसवीं शताब्दी में भारत में ऐच्छिक समाजसेवी संस्थाओं की संख्या में वृद्धि हुई। अनाथालयों और शिशु सदनों के अतिरिक्त बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में नेत्रहीनों के लिए विशेष विद्यालय स्थापित हुए। परन्तु इस प्रकार का सर्वप्रथम विद्यालय 1887 में ही अमृतसर में स्थापित हो चुका था। यह विद्यालय केवल नेत्रहीन बालिकाओं के लिए ही है और अब यह देहरादून में है। उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में पालमकोट अन्ध विद्यालय और कलकत्ता अन्ध विद्यालय की स्थापना हुई। बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में दादर अन्धविद्यालय और विक्टोरिया मेमोरियल अन्धविद्यालय बम्बई में स्थापित हुए। इस समय भारत में नेत्रहीनों के लिए 50 संस्थाएं हैं जिनमें लगभग 1500 अन्धे बालक और प्रौढ़ व्यक्ति शिक्षा एवं व्यावसायिक प्रशिक्षण पा रहे हैं। इन संस्थाओं में से अधिकतर ऐच्छिक संस्थाएं हैं। राज्य सरकारें इनकी सहायता करती है। और इनमें से अधिकतर को राज्य

सरकारों से अनुदान मिलता है। हाल ही में केन्द्रीय समाज कल्याण परिषद की ओर से भी अनेक अन्ध विद्यालयों को अनुदान दिया गया है।

1875 में सर सैयद अहमद खां ने जिनका अंग्रेजी शिक्षा में गहरा विश्वास था, अलीगढ़ में ऐग्लों मोहम्मडन कालेज की स्थापना की जो अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के रूप में आज भी विद्यमान है। उन्होंने अपने विचारों को जनता तक पहुँचाने के लिए मोहम्मडन सोशल रिफार्मर नाम का एक पत्र भी निकाला। उन्होंने 1888 में मुस्लिम शिक्षा सम्मेलन का प्रारंभ किया।

10.5 इसाई मिशनरियों

यद्यपि अट्ठारहवीं शताब्दी के अन्त से लेकर उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त तक समाज सुधार आन्दोलन पूरे भारत में फैल चुका था और शिक्षा संस्थाओं की स्थापना (मुख्य रूप से बालिकाओं के लिए) पर भी बल दिया गया, समाज सेवी संस्थाओं की स्थापना के लिए कुछ प्रयास नहीं किये गये।

ईसाई मिशनरियों के कार्यों के फलस्वरूप भारतीय विचारकों ने रक्षा का पक्ष लेकर अपने विचार प्रकट किए। फिर भी उनकी तर्कसंगत विचारधारा भारतीय बुद्धिजीवी वर्ग को प्रभावित किये बिना न रह सकी। इसके साथ-साथ भारतीय अर्थव्यस्था में भी परिवर्तन होने के कारण आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था संकट में पड़ गई और बहुत संख्या में ग्रामीण नगरों में बने औद्योगिक केन्द्रों की ओर प्रवासी श्रमिकों **(migratory workers)** के रूप में बसने शुरू हो गए। जमींदारी प्रथा के समाप्त होने, हस्तकला के लुप्त हो जाने, नगरों में कारखानों के बढ़ने, बढ़ती हुई जनसंख्या आदि के कारण नागरिकों की कठिनाइयां बढ़ गई। निराश्रिता, नशा (मद्य) महिलायें एवं बच्चों का शोषण और गन्दी बस्तियों आदि की समस्यायें उत्पन्न हो गयी।

ईसाई मिशनरियों ने निर्धनता की स्थिति का लाभ उठाकर निर्धनों के कल्याण के लिए संस्थायें खोली जिनका प्रमुख उद्देश्य सहायता प्रदान करना न होकर धर्म परिवर्तन करना था। बम्बई में 1830 के बाद ही एल्फिस्टन इन्स्टीट्यूट के अध्यापकों ने ऐच्छिक प्रयासों के माध्यम से षिक्षा का प्रसार करने का कार्य प्रारंभ कर दिया था। बाल गंगाधर शास्त्री जन्मेकर जो एल्फिस्टन इन्स्टीट्यूट से निकलने वाले पहले विद्यार्थी थे, के नेतृत्व में महिलाओं के लिए कक्षायें प्रारंभ की गई। कट्टर हिन्दुओं को इस बात के लिए प्रेरित करना प्रारंभ किया गया कि वे धर्म परिवर्तन किये हुए हिन्दूओं को हिन्दू धर्म में पुनः वापस लें तथा विवाह से सम्बन्धित अनुष्ठानों एवं सरकारों को सरल बनायें।

ईसाई प्रचारकों ने इस सामाजिक परिस्थिति का लाभ उठाया और निर्धनों के लिए कुछ समाज कल्याण संस्थाओं की स्थापना की जिसका उद्देश्य उनका धर्म परिवर्तन था। देश के बहुत से समाज सुधारकों ने इसके विरूद्ध कार्य किया परन्तु जैसे-जैसे भारत और इंग्लैण्ड में संचार के बढने और आने-जाने से सम्पर्क बढ़ा वहां की समाज कल्याण संस्थाओं के प्रतिरूप यहां भी समाज कल्याण संस्थाओं की स्थापना आरम्भ हो गयी।

10.6 भारतीय समाज सुधारक

1867 में प्रार्थना सभी की स्थापना हुई। मार्के भण्डारकर, चिन्तामणि चन्द्रावर्कर, नरेन्द्र नाथ सेन, इत्यादि व्यक्तियों ने समाज सुधार के क्षेत्र में सक्रिय रूप से कार्य करना प्रारंभ किया। 1880 में ऐलेन आॅक्टवियन हयूम ने सम्पूर्ण सेवियों द्वारा अनुभव की जा रही विभिन्न प्रकार की समस्याओं के विष्लेषण के लिए एक अखिल भारतीय संगठन का निर्माण करने की आवष्यकता का अुनभव किया किन्तु लार्ड डफरिन के सुझाव पर ह्यूम इस संगठन की गतिविधियों में राजनीति को सम्मिलित करने के लिए भी तैयार हो गये और परिणामतः एक सामाजिक राजनीतिक

संगठन के रूप में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना हुई। किन्तु राजनीतिक मुद्दों के सर्वोपरि हो जाने के कारण सामाजिक मुद्दों की अवहेलना होने लगी और इसीलिए न्यायमूर्ति ने एम0 जी रानाडे ने इण्डियन सोशल की स्थापना की जो देश में प्रबुद्धजनों को तैयारी करने में सफल रही।

1882 में **Pandita Ramabai,** जो हिन्दू थीं परन्तु समाज से त्यागे जाने पर अपने पति की मृत्यु के बाद ईसाई बन गयी, ने पुणे में आर्य महिला समाज की स्थापना की। इसी प्रकार जोतिबा फूले **(Jyotiba Phule)** ने जाति सुधार का आन्दोलन चलाया और बहुत सी समाज कार्य संस्थाओं, अनाथालयों और बालिकाओं की शिक्षा संस्थाओं की स्थापना की। बंगल में ससीपद बैनर्जी ने 1887 में हिन्दू विधवाओं के लिए एक गृह(**Home for Hindu Widow)** की स्थापना की जिसको देखकर बम्बई और मद्रास आदि नगरों में भी ऐसे ही गृह स्थापित किये गये। प्रोफेसर डी.के. कारवे ने पुणे में 1896 में एक विधवा गृह स्थापित किया। मद्रास में भी 1898 में एक ऐसा ही विधवा गृह स्थापित किया गया। 1897 में शंकरन नायर ने कांग्रेस अध्यक्ष से एक विशुद्ध धर्म निरपेक्ष सरकार की माँग की।

10.7 सारांश

सारांश के रूप में इस अध्याय में सन् 1800 से 1900 के मध्य भारत में समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास से सम्बन्धित विभिन्न प्रकार के किये गये प्रयासों का उल्लेख किया गया है। इसके अन्तर्गत समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास की यथार्थता को जानने का प्रयास किया गया है। यह अध्याय स्पष्ट करता है कि किस प्रकार से भारत में समाज कार्य को एक व्यवसाय का रूप प्राप्त करने में विभिन्न चरणों से गुजरना पड़ा है।

10.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

(1) सन् 1800 से 1900 के मध्य भारत में समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास की रूपरेखा को स्पष्ट कीजिए।

(2) इसाई मिशनरियों द्वारा किये गये कार्यों का उल्लेख कीजिए।

(3) भारतीय समाज सुधारकों द्वारा किये गये कार्यों का उल्लेख कीजिए।

(4) भारत समाज सेवा पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

(5) धार्मिक सुधारों तथा समाज सुधार आन्दोलन के प्रभाव को स्पष्ट कीजिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. Friedlander, W. A. Indtrodution of Social Welfare, Prentice Hall, INC. New York, 1995.
2. Thomas P.T.: Profession Traning in Social Work, in Sugata Das Gupta (ed) "Towards in Pilosophy of Social Work in India Popular Books Services, New Delhi, 1967.
3. Ahamad, Mirza Raffiuddin, Samaj Kayra: Darshan evam Pranaliyan, Repid Books Services, Lucknow, 1969.
4. Mishra, P.D. Social Work Profession in India, New Royal Book Co., Lucknow, 2004.
5. Sudan K.S., Samaj Karya: Siddhant evam Abhyas, N.S. Publications Lucknow, 2011.
6. Mishra, P.D., Samaj Karya: Itihas, Darshan evam Pranaliyan, New Royal Book Co. Lucknow, 2004.

7. Singh, D.K., and Bhartiya, A.K., Social Work: Philosophy and Methods, New Royal Book Co. Lucknow, 2009.
8. Shastri R.R., Social Work Tradition in India, Welfare Forum and Research Organization, Varanasi, 1986.
9. Dinitto, D.M. and Mcneece, C.A. Social Work Issues and Opportunities: In a Challenging Profession, LYCEUM Books INC, Chicago, 2008.
10. O.Hare, Thomas, Essential Skills of Social Work Practics: Assesment Intervetion Evaluation LYCEUM Books INC, Chicago, 2009.
11. Adams, R.; Dominelli, L. and Payne, M.; Social Work: Themes, Issues and Critical Debates, Second edition (ed), Palgrave, New York, 1998.
12. Clark, S. Social Work as Community Development: A Management Model for Social Change, Second Eddition (ed), Ashgate Publishing Ltd., England, 2000.
13. Colby, Ira and Dziegielewski, S., Introdution to Social Work: The People's Profession, Second Eddition (ed), LYCEUM Books INC, Chicago, 2004.
14. Srivastava S.P. "Addressing the future of Social Work in India" Social Work Education in India (ed) by S.Signh and S. Swaminathan New Royal Books Co. 2003.
15. Singh, Surendra, : Future Chellanges before Social Work Proffesion in India and Reuired Response, Contemporary Social Work Volume 12 October 1995.

इकाई -11

भारत में समाज कार्य का ऐतिहासिक विकास

(1900 से 1950)

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 भूमिका

11.3 बीसवीं शताब्दी में समाज कार्य का

11.4 कल्याणकारी कार्यक्रम

11.5 महत्वपूर्ण सामाजिक विधान

11.6 विस्थापित व्यक्तियों का पनुर्वास

11.7 श्रम कल्याण

11.8 सारांश

11.9 अभ्यास प्रश्न

11.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

11.0 उद्देश्य

प्रस्तुत अध्याय के अध्ययन के पश्चात आप –

1. भारत में बीसवीं शताब्दी में समाज कार्य के व्यावसायिक स्वरूप तथा कल्याणकारी राज्य एवं समाज कल्याण कार्यक्रमों, श्रम कल्याण इत्यादि के विषय में अवगत हो जायेंगें।
2. इस काल में पारित किये गये विभिन्न सामाजिक विधानों को जान जायेंगे।

11.1 प्रस्तावना

समाज कार्य का क्षेत्र अत्यधिक व्यापक है जिसमें विभिन्न लोगों की समस्याओं का समाधान करने का प्रयास किया जाता है। विभिन्न समस्याओं के समाधान हेतु वैधानिक स्वरूप प्रदान करने के लिए विविध प्रकार के सामाजिक विधानों को पारित किया गया। जिसका मुख्य उद्देश्य लोगों की समस्याओं का रोकथाम करना है ताकि उनका जीवन सुखी व्यतीत हो सके।

11.2 भूमिका

समाज कार्य का मुख्य उद्देश्य व्यक्ति की मनोसामाजिक समस्याओं का समाधान करना है। के द्वारा व्यक्ति, समूह अथवा समुदाय की सहायता करने का प्रयास किया जाता है। जिसके द्वारा वे अपनी आवश्यकताओं को पूर्ण करते हैं। समाज में विभिन्न प्रकार की समस्यायें विद्यमान रहती हैं। जिसके कई कारण होते हैं। आज यह माना जाता है कि किसी भी व्यक्ति की समस्या का समाधान समन्वित सेवाओं के द्वारा ही संभव है। समाज कार्य भी विविध प्रकार की उपलब्ध सेवाओं का उपयोग करते हुए व्यक्ति, समूह अथवा समुदाय का समाधान करता है।

11.3 बीसवीं शताब्दी में समाज कार्य का विकास

बीसवीं शताब्दी में भारत में समाज कार्य के विकास ने एक नया मोड़ लिया। 1904 में बम्बई के समाज सुधारकों के कीने पर एक महिला अधिवेशन हुआ जो बीस साल के बाद **All India Woman Conference** की स्थापना का कारण बना। 1906 में मद्रास में भी इसी प्रकार का संगठन बनाया गया और देश के कई भागों में कई प्रकार की समाजसेवी एवं समाज सुधार संस्थाएं स्थापित की गयी। गोपाल कृष्ण गोखले ने, जो समाज सेवी कार्यों में बहुत अधिक रूचि रखते थे, 1905 में **Servants of India Sociaety** की स्थापना की। इस समिति ने बहुमुखी विकास से संबंधित क्रियाकलापों पर बल दिया, मुख्य रूप से दलित वर्गों के लिए। यद्यपिइ स समिति का संगठन राजनैतिक दृष्टि से किया गया था परन्तु इसने सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक एवं दलित वर्गों के लिए कार्यों पर बल दिया और समाज का नेतृत्व किया। अंग्रेजों के भारत में आने से यहां प्रज्ञावाद, प्रजातंत्र एवं उदारता की विचारधाराओं का प्रवेश हुआ। इन विचारधाराओं ने भारत के विचारशील व्यक्तियों को प्रभावित किया। बीसवीं शताब्दी के समाज सुधारकों में गोपाल कृष्ण गोखले और बाल गंगाधर तिलक का नाम मुख्य रूप से प्रसिद्ध है। यह दोनों ही व्यक्ति प्रज्ञावादी थे परन्तु तिलक का उद्देश्य समाज सुधार के साथ-साथ देश के लिए स्वतंत्रता प्राप्त करना भी था। यह भारत में समाजसेवा के क्षेत्र की सर्वप्रथम असाम्प्रदायिक संस्था थी।

डा. एनी बेसेण्ट तथा श्रीमती मार्गेरेट कजन्स ने महिला संगठनों की स्थापना के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। उनके प्रयासों से ही 1917 में वीमेन्स इण्डियन एसोषियेषन की स्थापना हुई। इसके 8 साल बाद 1925 में महिलाओं का एक राष्ट्रीय संगठन नेषनल काउंसिल आफ वीमेन के नाम से सामने आया। इसके 2 साल बाद 1927 में आॅल इण्डिया वीमन्स कान्फेन्स का सत्र पूना में हुआ।

1920 में भारतीय समाज सेवा क्षितिज पर महात्मा गाँधी का अभ्युदय हुआ और देश की राजनैतिक बागडोर अपने हाथ में ले ली। गाँधी जी प्रत्येक व्यक्ति का सुधार चाहते थे और इसीलिए उन्होंने सर्वोदय (सबका कल्याण) की आवधारणा प्रस्तुत की। उन्होंने अधिक से अधिक लोगों की अधिक से अधिक भलाई के स्थान पर 'सभी लोगों की अधिकतम भालाई' का विचार सामने रखा। उन्होंने देश में रामराज्य की स्थापना की कल्पना की और एक ऐसे समाज की कल्पना की जिसमें व्यक्ति के सम्पूर्ण विकास के लिए उचित दशाएं उपलब्ध हों। उन्होंने राजनैतिक विद्रोह एवं समाजसुधार के बीच का एक मार्ग बनाया। उन्होंने भारत की स्वतंत्रता के लिए संग्राम के साथ-साथ यहां के सामाजिक एवं आर्थिक उत्थान के लिए भी प्रयास किया। उन्होंने हरिजन सेवक संघ की स्थापना की। जिसका उद्देश्य हरिजनों की सामाजिक एवं आर्थिक दशाओ में सुधार करना था। उन्होंने स्वयं हरिजनों के सामाजिक उत्थान के लिए अथक प्रयास किया। यह पहला धर्म निरपेक्ष संगठन था जो समाज सेवा को समर्पित किया गया था। देवधर जोशी, पंडित कुंजरू आदि ने इस संस्था के कार्यों में अधिक रूचि ली। महात्मा गांधी ने एक रचनात्मक कार्यक्रम प्रस्तुत किया जिसके प्रमुख अंगभूत थेः- साम्प्रदायिक एकता, अपृस्श्यता निवारण, मद्य निषेध, खादी, ग्रामोद्योग, नई तालीम (बेसिक शिक्षा), प्रौढ़ शिक्षा, ग्राम्य स्वच्छता, पिछड़ी जातियों की सेवा, नारी

उद्धार स्वास्थ्य एवं सफाई की शिक्षा, राष्ट्र भाषा का प्रसार, प्राकृतिक शिक्षा, आर्थिक समानता से सम्बन्धित कार्य, किसानों, मजदूरों एवं युवकों के संगठनों की स्थापना, निरन्तर आत्मिक उत्थान, सर्वधर्म समभाव तथा शारीरिक श्रम सम्मिलित थे।

1908 में बम्बई में सेवा सदन की स्थापना की गई और इसकी शाखाएं अहमदाबाद और सूरत में खोली गयीं। 1911 में **Social Service League** की स्थापना हुई जिसने बम्बई नगर में सामाजिक दशाओं के सुधार के लिए कार्य किया, निःशुल्क चलते-फिरते पुस्तकालय संगठित किये, मिल श्रमिकों के लिए रात्रि कक्षायें खोली गयी, सफाई एवं स्वास्थ्य, रक्षा के लिए कक्षायें चलायी गयी और बम्बई के पैरल श्रमिक क्षेत्र में एक केन्द्र खोला गया। **Social Service League** के तत्वावधान में 1922 में **All India Industrial Welfare Conference** आयोजित की गई जिसमें देश के विभिन्न औद्योगिक केन्द्रों से आये प्रतिनिधियों ने श्रम कल्याण की समस्याओं पर विचार किया और एक **All India Industrial Worker's Organization** बनाने का सुझाव रखा।

प्रोफेसर वाडिया ने ठीक ही कहा है- क्योंकि समाज कार्य के व्यवसाय में समर्पण की भावना नीति है, गांधी ने एक सच्चे समाज कार्यकर्ता थे। उनके कथन के अनुसार ;**1924 Congress Presidential Adress**द्ध वह प्रत्येक कार्य जो स्वराज के लिए अनिवार्य है समाज कार्य से भी ऊँचा है और कांग्रेस को आवश्यक रूप से उसे करना चाहिए। उन्होंने राष्ट्रीय स्तर पर कुछ विशेष समस्याओं का समाधान करने के लिए संगठन बनाये जैसे, हरिजन सेवक संघ , ;**Harijan Sewak Sangh**द्ध **All India Village Industrial Association, Nai Talim Sangh** आदि।

11.4 कल्याणकारी कार्यक्रम

भारत में विकलांग बच्चों के लिए कल्याणाकार्य बहुत देर से आरम्भ हुआ। पहली बार 1947 में एक ऐच्छिक संस्था स्थापित हुई। इस संस्था के कार्यों से प्रभावित होकर भारत के अनेक चिकित्सालयों के विकलांग चिकित्सा विभाग स्थापित हुए।

महिला कल्याण कार्य भारत में बीसवीं शताब्दी के पहले आरम्भ न हो सका। भारत की स्त्रियों की गिरी हुई दशा को सुधारने के लिए अनेक आन्दोलन चलाए गए और अनेक संस्थाएं स्थापित हुई। 1925 में नेशनल काउन्सिल आफ विमेन स्थापित हुई और 1927 में आल इन्डिया विमेन्स कान्फ्रेन्स का पहला सम्मेलन पूना में हुआ। इस संस्था की अब पूरे देश में लगभग 250 शाखाएं हैं। इसका प्रमुख उद्देश्य महिलाओं की अनेक समस्याओं की ओर सार्वजनिक रूचि निर्देशित करना है। यह संस्था महिलाओं की शिक्षा एवं कल्याण के लिए अनेक संस्थाओं का संचालन करती है। इसके अतिरिक्त दो अन्य संस्थाएं यंग विमिंस क्रिस्चन असोसिएशन एवं फेडरेशन आफ यूनिवर्सिटी वीमने प्रसिद्ध है। वाई.डब्लू.सी.ए. द्वारा कर्मचारी महिलाओं के लिए छात्रावास की व्यवस्था की गई है और वाणिज्य सम्बन्धी विद्यालय स्थापित किए गए है। फेडरेशन आफ यूनिवर्सिटी वीमेन द्वारा अन्य देशों में छात्राओं के आदान-प्रदान का प्रयास किया जाता है एवं महिलाओं के शास्त्रीय हितों की रक्षा की जाती है। 1930 के उपरान्त विशेष प्रकार से गांधी जी के नेतृत्व में हरिजन कल्याण कार्य आरम्भ किया। इसके अतिरिक्त प्रौढ़ शिक्षा का भी कार्य आरम्भ हुआ।

कुछ समय पूर्व एक संस्था असोसिएशन फार मौरल एन्ड सोशल हाइजीन की स्थापना हुई। इसका उद्देश्य वेश्याओं के पुनर्वास द्वारा वेश्यावृत्ति का उन्मूलन करना है।

भारत में इस समय ऐच्छिक समाज कल्याण संस्थाओं की एक बड़ी संस्था पाई जाती है। इन संस्थाओं के कार्यों में सहयोग एवं समन्वय स्थापित करने के लिए एक संस्था इन्डियन कान्फ्रेन्स आफ सोशल वर्क के नाम से स्थापित हुई। यह संस्था का वार्षिक सम्मेलन करती है जिसमें देश के सभी स्थानों से संस्थाओं के प्रतिनिधि भाग लेते हैं। परन्तु यह संस्था समन्वय और संगठन लाने में अभी तक असफल रही है। हाल ही में इस संस्था का नाम इन्डियन कौन्सिल आफ सोशल वेल्फेयर हो गया है।

इन सब प्रयासों से नये संस्थानों के खुलने के साथ-साथ पुरानी संस्थाओं को भी लाभ हुआ। 1906 और 1912 के बीच देश के कई भागों में बहुत से **Hindu Widow Homes** स्थापित किए गए।

बीसवीं शताब्दी के पहले दो दशकों में समाज कार्य का विकास सुधारक पक्ष रखता है। निर्धनों की सहायता, विधवाओं एवं अनाथ बच्चों के लिए संस्थाएं, अन्धों, मूक बधिक बालकों/बालिकाओं की देख-रेख पुण्यार्थ औषधालयों की स्थापना आदि कार्य किये गये। 1920 के बाद ही समाज कार्य के विकास में निरोधात्मक कार्यों पर बल दिया गया। बाल कल्याण के क्षेत्र में भी **Lady Cowasji Jehangir, Sir Mangal Das Mehta, Sri Rustam** एवं **Masani** के प्रयासों के फलस्वरूप कई राज्यों में **Children's Act** पारित किए गए।

1923 में गठित **Swaraj Party** ने कांग्रेस के रचनात्मक कार्यक्रमों को पूरा करने के लिए स्वदेशी खद्दर, मद्य निषेध, अन्तर सामुदायिक एकता, और राष्ट्रीय स्तर की शिक्षा आदि क्षेत्रों में कार्य किया। पंडित मदन मोहन मालवीय और सेठ जमना लाला बजाज के नेतृत्व में आन्दोलन से सभी मन्दिरों के द्वार सभी जातियों के लिए खोल दिए गए। 1929 में **The Children Marriage Rastraint Act (Sharda Act)** पारित करके बालिकाओं के लिए 14 वर्ष एवं बालकों के लिए 18 वर्ष की आयु शादी के लिए निर्धारित कर दी गई।

11.5 महत्वपूर्ण सामाजिक विधान

बीसवीं शताब्दी के तीसरे दशक में बहुत से सामाजिक विधानों का निर्माण हुआ जैसे-केन्द्र एवं कई राज्यों द्वारा **Children's Act** का पारित किया जाना, **(Madras, 1920; Bengal 1922: Bombay, 1924), The Hindu Inheritance (Removal of Disabilities) Act, 1929, 1923 esa IPC** में संशोधन, **The Children Marriage Restraint Act, 1929 (Sharda Act), The Hindu Gains of Learning Act, 1930 (Vetoed by Governor), The Factories Act and Mines Act** (1922 और 1923 और इसके बाद कई बार संशोधित किये गये),), **The Workmen's Compensation Act, 1923 The Indian Trade Union Act, 1922, The Trade Disputes Act, 1929, The Coalmines Labour Welfare Fund Act, 1944, The Mica-Mines Welfare Fund Act, 1946, 1954 The Hindu Marriage Act, 1955, The Employee State Insurance Act, 1948, Coalmies Provident Fund and Bonus Act, 1948, The Employee Provident Fund Act, 1952. The Minimum Wages Act, 1948 The Factories Act, 1948, (1949, 1950** और **1954** में संशोधित), **The Plantation Labour Act, 1951, The Indian Mines Act, 1952, The Industrian Dispute (Amendment) Act, 1953, The Suppression of Immoral Traffic in women and Girls Act, oThe U(ntochability Offences Act, 1955, Te Children Act, 1960,** 1960(1978 में संशोधित), **The Juvenile Justice Act, 1986** 1986ए बन्धित श्रम पद्धति (उत्पादन) अधिनियम 1976 **(The Prohibition of Dowry Act, 1961,** (1976 में संशोधित) आदि। इन विधानों में समय-समय पर कई संशोधन किए गए हैं।

राज्य ने सर्वप्रथम स्वास्थ्य एवं शिक्षा के क्षेत्र में समाज सेवा प्रदान करना आरम्भ किया। परन्तु यह सेवाएं बहुत ही सीमित रूप में प्रदान की जाती रही। अतः समस्त नागरिक इन सेवाओं से लाभान्वित नहीं हो सके। राज्य की ओर से अनेक स्थानो पर चिकित्सालय एवं विद्यालय स्थापित किए गए परन्तु जनसंख्या को देखते हुए इन चिकित्सालयों एवं विद्यालय की संख्या बहुत ही कम है।

प्रसूति तथा शिशु कल्याण की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए बीसवीं शताब्दी मे लेडी डफरीन फन्ड स्थापित किया गया। आरम्भ में इन्डियन रेड क्रास एवं विशिष्ट प्रसूति तथा शिशु कल्याण समितियों ने इस क्षेत्र में कार्य करना प्रारम्भ किया। शनैः-शनैः राज्य सरकार और नगर पालिकाओं ने इन सेवाओं का उत्तरदायित्व स्वीकृत कर लिया। देश के महान नगरों के प्रत्येक वार्ड्स में प्रसूति तथा शिशु रक्षा केन्द्र स्थापित कर दिये गये हैं। इन केन्द्रों में स्वास्थ्य निरीक्षक और दाइयां कार्य करती है। भारत के शिक्षा मंत्रिमंडलों ने शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किये हैं। इनकी क्रियाएं विशेष प्रकार से तीन क्षेत्रों में महत्वपूर्ण रही है:-

1. नेत्रहीनों की रक्षा
2. सामाजिक सेवकों का प्रशिक्षण

शिक्षा मंत्रिमंडलों एवं विभागों ने शारीरिक एवं सामाजिक रूप से असमर्थ व्यक्तियों की सेवा के लिए बनाई हुई संस्थाओं की सहायता और निरीक्षक का उत्तरदायित्व स्वीकृत कर लिया है। यह संस्थाएं असमर्थ व्यक्तियों की शारीरिक रक्षा के अतिरिक्त उनकी शिक्षा एवं पुनर्वास का भी प्रबन्ध करती है।

देहरादून में शिक्षा मंत्रिमंडल की ओर से दो संस्थाएं स्थापित की गई हैं जो नेत्रहीनों की रक्षा और पुनर्वास का कार्य करती है। मूक एवं बधिर व्यक्तियों की सहायता के लिए अति न्यून मात्रा में कार्य किये गये हैं। अधिकतर ऐच्छिक संस्थाएं ही इस क्षेत्र में सक्रिय है। राज्य सरकारों तथा केन्द्रीय सरकार द्वारा इन संस्थाओं को सहायता मिलती है।

सामाजिक शिक्षा प्रौढ़ शिक्षा का एक विस्तृत रूप है। इस प्रक्रिया में पूरे समुदाय की शिक्षा प्रदान की जाती है।

1937 के उपरान्त सामाजिक शिक्षा को राष्ट्रीय विकास के कार्यक्रम का एक अंग समझ लिया गया है। प्रत्येक सामुदायिक विकास योजना में सामाजिक शिक्षा अधिकारी कार्य करते है। यह कर्मचारी शिक्षा का प्रसार और सामुदायिक संगठन करते हैं।

11.6 विस्थापित व्यक्तियों का पनुर्वास

राज्य द्वारा व्यक्तियों का आर्थिक पुनर्वास किया गया। 1947 के देश विभाजन के उपरान्त विस्थापित व्यक्तियों की बड़ी संख्या उत्पन्न हो गई थी। इनकी विभिन्न समस्याओं को सुलझाने के लिए राज्य की ओर से भूमि, व्यवसाय, गृह एवं शिक्षा प्रदान करने का प्रबन्ध किया गया। 1955 तक इस मद में 200 करोड़ रूपया व्यय हो चुका था। भारत के विभिन्न राज्यों में समाज कल्याण विभाग स्थापित किये गये हैं जिनके द्वारा राज्य सरकारें समाज कल्याण योजनाएं चलाती हैं। उत्तर प्रदेश में भी एक समाज कल्याण विभाग है जिसके द्वारा सार्वजनिक समाज कल्याण की व्यवस्था की जाती है। समाज कल्याण अधिकारी राज्य की ओर से नियुक्त किये गये हैं जो समाज कल्याण कार्यक्रमों को चलाते हैं और उन संस्थाओं का निरीक्षण करते हैं। जिन्हें अनुदान मिलते हैं।

11.7 श्रम कल्याण

भारतवर्ष के केन्द्रीय तथा राजकीय श्रम मंत्रालय निर्माणशालाओं एवं औद्योगिक श्रमिकों से सम्बन्धित विधानों का संचालन करते हैं।

उन्नीसवीं शताब्दी मे असंगठित औद्योगिक श्रमिकों का उद्योग स्वामियां के अवदोहन से संरक्षण करने के लिए श्रम के क्षेत्र में अनेक विधान बनाये गये। सबसे पहला फैक्टरी ऐक्ट 1881 में बना। इसके द्वारा पुरूषों, स्त्रियों

तथा बच्चों के कार्य करने के समय को सीमित किया गया, बच्चों के निर्माणशालाओं में कार्य करने की आयु बढ़ा दी गई और कुछ उद्योगों में, जहां अधिक परिश्रम करना पड़ता था, स्त्रियों की नियुक्ति निषिद्ध कर दी गई। फैक्टर ऐक्ट अनेक बार संशोधित हुआ यहां तक कि 1948 में नया फैक्टरी ऐक्ट पास हुआ।

1923 में वर्कमेंस कम्पनसेशन ऐक्ट बना। इस विधान के अनुसार श्रमिकों की कार्य करते समय चोट लग जाने पर मुआवजे की व्यवस्था हुई।

1948 में फैक्टरीज ऐक्ट द्वारा श्रमिकों के लिए कल्याणकारी सुविधाओं की उपलब्धि मिल मालिकों के लिए अनिवार्य कर दी गई। इसके अतिरिक्त निर्माणशाओं में प्रशिक्षण प्राप्त श्रम कल्याण अधिकारियों की नियुक्ति अनिवार्य कर दी गई।

1948 में इम्पलाईज स्टेट इंश्योरेंस ऐक्ट पास हुआ जिसके अनुसार इम्पलाईज स्टेट इंश्योरेंस कारपोरेशन की स्थापना हुई। इस विधान के अनुसार नियोक्ता, कर्मचारी एवं राज्य एक कोष के अंशदान देते रहते हैं। जब कभी किसी कर्मचारी को रोग या विपत्ति के कारण आर्थिक आवश्यकता होती है जो उसे इस कोष से सहायता मिलती है। इस विधानानुसार श्रमिकों को पांच प्रकार के लाभ प्राप्त हैं।

1. रोग सम्बन्धी सहायता जो श्रमिकों को रोगग्रस्त हो जाने पर औषधियों के रूप में मिलती है।
2. भैष्जिक सहायता जिसके अन्तर्गत रोगग्रस्त होने पर अवकाश मिलता है।
3. प्रसूति सहायता जिसके अन्तर्गत गर्भवती श्रमिक स्त्रियों को अवकाश मिलता है।
4. असमर्थता लाभ जो श्रमिकों को कार्य करते समय चोट लग जाने पर मिलता है।
5. आश्रित लाभ जो श्रमिकों के चोट लगकर मर जाने पर उसके आश्रितों को मिलता है।

इसके अतिरिक्त बीसवीं शताब्दी में अनेक अन्य विधान श्रमिकों के हित के लिए और औद्योगिक समस्याओं के समाधान हेतु पास हुए।

11.8 सारांश

सारांश के रूप में इस अध्याय में सन् 1900 से 1950 में भारत में समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास के अन्तर्गत समाज कल्याण सेवाएं, सामाजिक विधान से सम्बन्धित उपायों की शुरूआत की गयी। जिसका मुख्य उद्देश्य आवश्यकताग्रस्त लोगों की सहायता करना रहा है। इस काल में औद्योगीकरण का भी अत्यधिक प्रभाव पड़ा। जिसके द्वारा समाज कार्य की विकास को अत्यधिक बल प्राप्त हुआ।

11.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

(1) सन् 1900 से 1950 के मध्य भारत में समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास की रूपरेखा को स्पष्ट कीजिए।

(2) समाज कल्याण कार्यक्रमों का उल्लेख कीजिए।

(3) सामाजिक विधानों को बताइये।

(4) निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

(अ) श्रम कल्याण

(ब) बाल कल्याण

(स) महिला कल्याण

(5) भारत में समाज कार्य के विकास पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. Friedlander, W. A. Indtrodution of Social Welfare, Prentice Hall, INC. New York, 1995.
2. Thomas P.T.: Profession Traning in Social Work, in Sugata Das Gupta (ed) "Towards in Pilosophy of Social Work in India Popular Books Services, New Delhi, 1967.
3. Ahamad, Mirza Raffiuddin, Samaj Kayra: Darshan evam Pranaliyan, Repid Books Services, Lucknow, 1969.
4. Mishra, P.D. Social Work Profession in India, New Royal Book Co., Lucknow, 2004.
5. Sudan K.S., Samaj Karya: Siddhant evam Abhyas, N.S. Publications Lucknow, 2011.
6. Mishra, P.D., Samaj Karya: Itihas, Darshan evam Pranaliyan, New Royal Book Co. Lucknow, 2004.
7. Singh, D.K., and Bhartiya, A.K., Social Work: Philosophy and Methods, New Royal Book Co. Lucknow, 2009.
8. Shastri R.R., Social Work Tradition in India, Welfare Forum and Research Organization, Varanasi, 1986.
9. Dinitto, D.M. and Mcneece, C.A. Social Work Issues and Opportunities: In a Challenging Profession, LYCEUM Books INC, Chicago, 2008.
10. O.Hare, Thomas, Essential Skills of Social Work Practics: Assesment Intervetion Evaluation LYCEUM Books INC, Chicago, 2009.
11. Adams, R.; Dominelli, L. and Payne, M.; Social Work: Themes, Issues and Critical Debates, Second edition (ed), Palgrave, New York, 1998.
12. Clark, S. Social Work as Community Development: A Management Model for Social Change, Second Eddition (ed), Ashgate Publishing Ltd., England, 2000.
13. Colby, Ira and Dziegielewski, S., Introdution to Social Work: The People's Profession, Second Eddition (ed), LYCEUM Books INC, Chicago, 2004.
14. Srivastava S.P. "Addressing the future of Social Work in India" Social Work Education in India (ed) by S.Signh and S. Swaminathan New Royal Books Co. 2003.
15. Singh, Surendra, : Future Chellanges before Social Work Proffesion in India and Reuired Response, Contemporary Social Work Volume 12 October 1995.

इकाई-12

भारत में समाज कार्य का ऐतिहासिक विकास (1950 से अब तक)

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य

12.1 प्रस्तावना

12.2 भूमिका

12.3 कल्याणकारी राज्य का विकास

12.4 समाज कल्याण

12.5 व्यावसायिक समाज कार्य

12.6 व्यवसायिक प्रशिक्षण

12.7 समाज कार्य शिक्षण में व्यावहारिक ज्ञान

12.8 समाज कार्य शिक्षकों एवं अभ्यासकर्ताओं की महत्वपूर्ण भूमिका

12.9 केन्द्रीय समाज कल्याण परिषद

12.10 सारांश

12.11 अभ्यास प्रश्न

12.12 सन्दर्भ ग्रन्थ

12.0 उद्देश्य

प्रस्तुत अध्याय के अध्ययन के पश्चात आप –

1. समाज कार्य शिक्षण एवं प्रशिक्षण तथा उसके व्यावहारिक ज्ञान से परिचित हो जायेंगे |
2. केन्द्रीय समाज कल्याण परिषद तथा एक कल्याणकारी राज्य के उत्तरदायित्व को जान जायेंगे |

12.1 प्रस्तावना

समाज कार्य एक व्यावसायिक सेवा है। सन् 1936 के पश्चात् समाज कार्य ने एक लम्बा सफर तय किया है। समाज कार्य को एक व्यावसायिक रूप प्राप्त करने में कल्याणकारी राज्य की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। क्योंकि कल्याणकारी राज्य का यह उत्तरदायित्व होता है कि वह राष्ट्र के सभी नागरिकों की आवश्यकताओं को पूरा करने का प्रयास करे। दूसरी ओर समाज कार्य का यह उद्देश्यहै कि लोगों की आवश्यकताओं को पूरा करने में वह एक मध्यस्थ की भूमिका तय करे।

12.2 भूमिका

समाज कार्य भारत में व्यवसाय के रूप में मान्यता प्राप्त कर चुका है। वर्तमान समय में लगभग तीन सौ से अधिक शिक्षण संस्थाओं के माध्यम से समाज कार्य की औपचारिक शिक्षा प्रदान की जा रही है। समाज कल्याण के बहुत से क्षेत्रों में समाज कार्यकर्ताओं के लिए समाज कार्य की व्यावसायिक शिक्षा एवं प्रशिक्षण अब अनिवार्य समझा जाने लगा है। विभिन्न क्षेत्रों की सामाजिक समस्याओं का अध्ययन करने के लिए समाज कार्य के प्रशिक्षण का महत्व बढ़ गया है।

12.3 कल्याणकारी राज्य का विकास

स्वतंत्रता के बाद भारत को एक कल्याणकारी राज्य घोषित किया गया। भारतीय संविधान में जो 1950 में स्वीकार किया गया, स्पष्ट शब्दों में कहा गया कि राज्य देशवासियों के कल्याण को बढ़ावा देगा, अस्पृश्यता को समाप्त करेगा, धर्म, जाति, लिंग और जन्म स्थान के आधार पर सभी प्रकार के विभेद को समाप्त करेगा और बच्चों, अल्पसंख्यकों, अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों और अन्य कमजोर वर्गों की विशेष सुरक्षा की गारन्टी प्रदान करेगा। इस प्रकार भारतवर्ष में समाज कल्याण का उत्तरदायित्व राज्य ने स्वीकार करके एक ऐतिहासिक भूमिका को ग्रहण किया। 1951 में योजनाबद्ध विकास का युग प्रारंभ हुआ जिसके परिणाम स्वरूप समाज कल्याण के क्षेत्र में अनेक प्रकार के कार्यो का सृजन हुआ। 1953 में भारत सरकार द्वारा समाज कल्याण के क्षेत्र में स्वयंसेवी संगठनों के प्रयासों को प्रोत्साहित करने एवं सुदृढ़ बनाने की दृष्टि से केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड की स्थापना हुई। जिसके द्वारा स्वैच्छिक समाज कल्याण संस्थाओं को समाज कल्याण के क्षेत्र में विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमों को आयोजिक करने के लिए वित्तीय सहायता प्रदान की जाने लगी। परिणामतः समाज कल्याण के क्षेत्र में विभिन्न प्रकार के उत्तरदायित्व को ग्रहण करने के लिए प्रशिक्षित जनशक्ति तैयार करने की आवश्यकता और अधिक घनीभूत हुई औी इसकी पूर्ति के लिए समाज कार्य का व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान करने वाली संस्थाओं की संख्या में भी वृद्धि समाज कल्याण कार्यों के लिए केन्द्रीय एवं राज्य सरकारों के स्तर पर समाज कल्याण विभाग (उत्तर प्रदेश पहली सरकार थी जिसने समाज कल्याण मन्त्रालय स्थापित किया) सामुदायिक विकास एवं सहयोग मन्त्रालय केन्द्रीय समाज कल्याण मण्डल, पुनर्वास मन्त्रालय आदि की स्थापना की गई।

पंचवर्षीय योजना 1951 में **Planning Commission** ने सम्पूर्ण समुदाय के लिए राज्य द्वारा दी जाने वाली सामाजिक सेवाओं और सहायतार्थी व्यक्तियों एवं समूहों की विशेष आवश्कयताओं के लिए समाज कल्याण सेवाओं के भेद को स्पष्ट किया। समाज कल्याण सेवाओं के प्रदान करने का उत्तरदायित्व मुख्य रूप से निजी कल्याणकारी संस्थाओं का समझा गया। सरकार द्वारा इन निजी संस्थाओं को अपने कार्यों के लिए अनुदान की व्यवस्था की गई और जिन क्षेत्रों में इन संस्थाओं का अभाव था, वहां सरकार ने अपनी संस्थाओं की स्थापना की ।इन कार्यों को पूरा करने का काम केन्द्रीय स्तर पर मन्त्रालयों को दिया गया और एक स्वायत्त संगठन केन्द्रीय समाज कल्याण मण्डल **;Central Social Welfare Boardद्ध** की स्थापना शिक्षा मंत्रालय के अधीन 1953 में की गई। इस मण्डल द्वारा राज्यों में **State Social Welfare Advisory Committee** की स्थापना की गई।

12.4 समाज कल्याण

समाज कल्याण के कार्यों की समीक्षा करने के लिए **Committee of Plans Projects** ने 1959 में एक समूह **Study Team of Social Welfare** गठित किया। इनकी सिफारिशों पर शिक्षा मंत्रालय में **Division of Social Welfare** संगठित की गई और 1964 में समाज कल्याण के कार्यों को बढ़ावा देने के लिए एक स्वतंत्र विभाग **Department of Social Security** गठित किया गया। सामान्य समाज कल्याण, पिछड़े वर्गों का कल्याण, आदि इस नये विभाग को सौंप दिये गये। 1966 में श्रम कल्याण के कार्यों को **Ministry of Labour and Employment** को दिया गया और **Department of Social Security** को **Department of Social Welfare** के नाम से पुनः संगठित किया गया। महिलाओं, बच्चों, विकलांगों और कमजोर वर्गों के कल्याण के कार्यों को इस नए विभाग को सौंप दिया गया। शिक्षा एवं समाज कल्याण के मन्त्रालय (**Ministry of Education and Social Welfare**)के इस नये समाज कल्याण विभाग का कार्य बाल कल्याण, महिला कल्याण, सामाजिक रक्षा (**Social Defence**), विस्थापितों का पुनर्वास, अनुसूचित जातियों एवं पिछड़ी जातियों का कल्याण आदि रखे गये हैं। इस विभाग को अब **Ministry of Social Welfare** में परिवर्तित कर दिया गया है। इस समाज कल्याण मन्त्रालय के अतिरिक्त अन्य केन्द्रीय मन्त्रालय भी समाज कल्याण के क्षेत्रों में जो उनके अधीन आते हैं कार्य करते हैं, जैसे - **Ministry of Education and Youth Welfare** बच्चों की शिक्षा, युवा कल्याण , समाजिक शिक्षा, प्रौढ़ एवं सतत् शिक्षा आदि के कार्य संचालित करती है। इस मंत्रालय का नाम अब मानव संसाधन विकास मंत्रालय, (शिक्षा विभाग) (**Ministry of Human Resources Development**) कर दिया गया है। **Ministry of Health and Urban Development** मातृत्व एवं बाल स्वास्थ्य (मातृ प्रसूति तथा शिशु कल्याण), परिवार नियोजन एवं नगरीय सामुदायिक विकास के कार्य को संचालित करती हैं। **Ministry of Rehanilitation,** पूर्वी पश्चिमी पाकिस्तानी (**Now Pakistan and Banladesh**), वर्मा, श्रीलंका,, अफ्रीका आदि देशों से आए विस्थापितों के पुनःस्थापन का कार्य करती है। ग्रामीण क्षेत्रों में सामुदायिक विकास कार्य (**Ministry of Community Development**) का है।

भारतीय संविधान की एक विशिष्ट धारा के अनुसार एक कमिश्नर फार शिडूल्ड कास्ट ऐण्ड ट्राइब्स की नियुक्ति की गई है जिसका कार्य इस बात की व्यवस्था करना है कि एक निश्चित समय के भीतर यह जातियां राज्य के प्रजातंत्रवादी जीवन में अन्य व्यक्तियों के साथ बराबर का भाग ले सकें। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत उन्हें शिक्षा और आर्थिक उत्थान की सुविधाएं उपलब्ध की जाती हैं।

1955 में भारत सरकार ने काका साहब कलेलकर की अध्यक्षता में बैकबर्ड क्लासेज कमीशन नियुक्त किया जिसने पिछड़े वर्गों की सामाजिक एवं आर्थिक दशाओं के सुधार के लिए सुझाव दिए और पिछड़ेपन के कारणों को स्पष्ट किया।

1955 में ही अनटचेबिलिटी औफेन्सेज ऐक्ट पास हुआ जिसके अनुसार अस्पृश्यता को वैधानिक रूप में अपराध समझा गया और इसके लिए दंड निर्धारित कर दिया गया।

अनेक राज्य सरकारों के गृह मंत्रालय प्रौढ़ अपराधियों और बाल अपराधियों के सुधार और सामाजिक और नैतिक रूप से शोषित बच्चों के संरक्षण मे पर्याप्त भाग लेते हैं। इसके अतिरिक्त शिक्षा मंत्रालय बच्चों के विशिष्ट संरक्षण और पुनर्वास का कार्य करते है।

बन्दीगृहों में सुधार किया जा रहा है। उत्तर प्रदेश में एक परीक्षण किया जा रहा है जिसके अनुसार बन्दियों को खुले हुए बन्दीगृहों में रखा जाता है और उनके परिश्रम का वेतन दिया जाता है। उन्हें इस बात की भी अनुमति

होती है कि वे अपने परिवार से भेंट कर सकें। अभी तक यह परीक्षण सफल रहा है इससे बन्दियों के सामाजिक समायोजन में उन्नति हुई है।

भारत की स्वतंत्रता के उपरान्त कम्यूनिटी प्रोजेक्ट ऐडमिनिटे"शन नाम की एक नवीन संस्था स्थापित हुई। इसकी स्थापना में प्लानिंग कमीशन का प्रमुख था। इस प्रशासन ने ग्रामीण जिलों को प्रोजेक्ट एरिया एवं ब्लाक्स का रूप दिया और इनमें विस्तृत रूप से आर्थिक एवं सामाजिक जीवन के विकास का प्रयत्न किया। इसका नाम कुछ समय उपरान्त कम्युनिटी डेवलेपमेन्ट प्रोजेक्ट हो गया। इस योजना के अन्तर्गत उच्चतर कृषि प्रणालियों, सिंचाई की योजनाओं और सहकारी समितियों के प्रोत्साहन द्वारा आर्थिक विकास का प्रयास किया गया। सामाजिक विकास के लिए व्यक्ति को स्वास्थ्य सम्बन्धी शिक्षा एवं सामाजिक शिक्षा की उच्चतर सुविधाएं उपलब्ध की गई। इस योजना का उद्देश्य यह था कि ग्रामीण विकास की समस्त योजनाओं का एकीकरण करके ग्रामों का सर्वांगीण विकास किया जाये। इस योजना ने ग्रामों की दशा में सराहनीय सुधार किया फिर भी सफलता उतनी न मिल सकी जितनी मिलनी चाहिए थी क्योंकि जनता का सहयोग पूर्ण रूप से प्राप्त करने की चेष्टा न की गई और प्रशिक्षण प्राप्त समाज कार्यकर्ताओं की नियुक्ति इस योजना को चलाने के लिए न की गई।

राज्यों के स्तरों पर भी समाज कल्याण के लिए विभाग खोले गए हैं। उत्तर प्रदेश प्रथम राज्य है जिसने 1954 में **Department of Social Welfare** की स्थापना की। इसके अतिरिक्त राज्य में **Department of Harijan Welfare** समाज कल्याण विभाग के साथ हैं। समय-समय पर समाज कल्याण के विभाग के साथ हैं। समय-समय पर समाज कल्याण के विभाग को पुनः गठित करके नये विभाग खोले गये हैं जो किसी न किसी विशेष क्षेत्रों में सेवा प्रदान करते हैं। समाज कल्याण नीतियों को समय की विचारधारा के अनुसार बदला जाने लगा हैं।

12.5 व्यावसायिक समाज कार्य

भारत में प्राचीन काल से ही समाज सेवा प्रदान करने के लिए प्रशिक्षण दिया जाता रहा हैं परन्तु यह प्रशिक्षण एक नैतिक वातावरण में और अनौपचारिक रूप से दिया जाता था। औपचारिक रूप से व्याख्यान एवं व्यवहारिक शिक्षा का प्रबन्ध प्राचीन समय में न था। समाज कार्य का क्षेत्र स्वतंत्रता के बाद अधिक विकसित हुआ। भारतीय संविधान में देश को कल्याणकारी राज्य घोषित करने से समाज कल्याण कार्यक्रमों में वृद्धि हुई। समाज कल्याण क्रियाकलापों के क्षेत्र में वृद्धि के कारण समाज कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण का प्रथम प्रयास बम्बई स्थित **Social Service League** द्वारा किया गया जब इस संस्था ने एक औपचारिक अभिविन्यस्त पाठ्यक्रम (व्तपमदजंजपवद ब्वनतेम) आरम्भ किया। वर्ष 1936 एक अत्याधिक महत्वपूर्ण वर्ष है क्योंकि 1936 में समाज कल्याण के विभिन्न क्षेत्रों में विविध प्रकार के पारितोषिकपूर्ण कार्यों को करने के लिए आपेक्षित ज्ञान एवं निपुणताओं से उपयुक्त रूप से सुसज्जित करने हेतु प्रषिक्षण कार्यकर्ताओं को तैयार करने के इरादे से सर दोराब जी टाटा ट्रस्ट के ट्रस्टियों ने अमरीका मराठा मिषन के डॉ0 किलफर्ड मैन्सहर्ट की सलाह पर अमरीका के समाज कार्य के षिक्षा संस्थाओं के प्रतिमान पर सर दोराब जी टाटा ग्रेजुएट स्कूल ऑफ सोशल वर्क की स्थापना की। तत्पश्चात् इस विद्यालय का नाम टाटा इन्स्टीट्यूट आफ् सोशल साइन्स हो गया और अब भी इसी से प्रसिद्ध है। 1947 तक भारतवर्ष में यही एक संस्था थी जो समाज कार्य की शिक्षा संस्था के रूप में समाज कार्य की शिक्षा एवं व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान करती आ रही थी। स्वतंत्रता के उपरान्त 1947 में काशी विद्यापीठ, वाराणसी , जिसे एक नया नाम महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ दे दिया गया है, कालेज आफ सोशल सर्विस **College of Social Service) Gujrat Vidhyapeth, Ahemdabad,** 1948 में **Delhi School of Social Workp, 1949** 1949 में **J.K.**

Institute लखनऊ विश्वविद्यालय में जहां बाद में **Department of Social Work, University of Lucknow** की स्थापना हुई।

1947 में नियोजित विकास के आरम्भ होने से समाज कल्याण के क्षेत्र में बहुत बड़ी संख्या में प्रशिक्षण प्राप्त कार्यकर्ताओं की आवश्यकताओं को देखकर कई अन्य स्थानों पर समाज कार्य की शिक्षा संस्थाओं की स्थापना होने लगी। आगरा, नागपुर, उदयपुर, मद्रास, पटना, कलकत्ता, मदुराई, धारवार, बंग्लौर, अहमदाबाद, जामिया मिलिया देहली, कुरूक्षेत्र, पटियाला, यमनानगर आदि कई स्थानों पर समाज कार्य की शिक्षा संस्थाएं स्थापित हो गई। इन शिक्षा संस्थाओं में समाज कार्य की औपचारिक शिक्षा दी जाती है। कुछ स्थानों पर यह शिक्षा पूर्व स्नातक स्तर पर ही दी जाती है। कुछ स्थानों पर यह शिक्षा पूर्व स्नातक स्तर पर ही दी जाती है। अधिक विद्यालयों में स्नातकोत्तर की शिक्षा उपलब्ध है। 1949 में लखनऊ में लखनऊ विश्वविद्यालय के अन्तर्गत समाज कार्य प्रषिक्षण का इसी स्तर का कार्यक्रम संचालित किया गया। स्वर्गीय डॉ0 राधा कमल मुखर्जी के निर्देशन में स्थापित जे0 के इन्स्ट्रीयूट ऑफ सोषियोलाजी एण्ड ह्यूमन रिलेशन्स के अन्तर्गत संचालित इस कार्यक्रम में शुरू में उन्हीं की भर्ती की जाती थी जो कि अर्थषास्त्र अथवा समाज शास्त्र में एम0ए0 होते थे और इन्हें मात्र एक वर्ष के पाठ्यक्रम को सफलतापूर्वक पूरा करने पर प्रमाण पत्र (डिप्लोमा) दिया जाता था। लखनऊ विश्वविद्यालय में समाज कार्य की शिक्षा के पूर्व स्नातक स्तर के पाठ्यक्रम से लेकर डी.लिट. की सुविधा उपलब्ध है।

12.6 व्यवसायिक प्रशिक्षण

प्रशिक्षण संस्थाओं तथा व्यावसायिक समाज कार्यकर्ताओं की संख्या में वृद्धि के साथ साथ व्यावसायिक संगठनों का भी विकास हुआ है ताकि व्यावसायिक मानदण्डों को विकसित एवं कार्यान्वित किया जा सके और प्रशिक्षित समाज कार्यकर्ताओं की अभिरूचियों का संरक्षण किया जा सके। प्रशिक्षित समाज कार्यकर्ताओं का संगठन बनाने का विचार सर्वप्रथम 1951 में डॉ0 जे. एम. कुमारप्पा के मस्तिष्क में आया था जबकि जमषेदपुर में इण्डियन कांन्फ्रेस ऑफ सोशल का वार्षिक सत्र हो रहा था। जमशेदपुर में इण्डियनल एसोषिएसन ऑफ अल्युम्नाई ऑफ द स्कूल ऑफ सोशल वर्क की स्थापना हुई। इसकी वार्षिक बैठके इण्डियन कांन्फ्रेस ऑफ सोशल वर्क की वार्षिक बैठकों के समय ही अलग से हो जाती थी। यह सुसंगठित नही था तथा अनौपचारिक संगठन होने के कारण इसके सदस्यों के सम्बद्ध भी सुपरिभाषित नही थे। 1959-1960 में इस संगठन को पुनः गतिषील बनाया गया। 1961 में इसके संविधान का संषोधन किया गया तथा 1962 में इसका पंजीकरण कराते हुए इसकी शाखायें देष के विभिन्न भागों में खोली गई तथा इण्टरनेषनल फेडरेशन ऑफ सोशल वकर्स से सम्बन्धित भी कराया गया। 1964 में इसका नाम बदलकर इण्डियन एसोसियेषन ऑफ ट्रेण्ड सोशल वर्कर्स कर दिया गया जिसका उद्देष्य समाज कार्य के व्यावसायिक मानदण्डों की स्थापना करना तथा प्रषिक्षित समाज कार्यकर्ताओं की व्यवासायिक अभिरूचियों का संरक्षण करना था। दुर्भाग्य से प्रबन्ध मण्डल की निष्क्रियता के कारण यह संगठन मृतप्राय हो गया। 1960 में समाज कार्य षिक्षा के क्षेत्र में गैर सरकारी संगठन के रूप में कार्य करने के लिए एसोसियेषन ऑफ स्कूल्स ऑफ सोशल वर्क इन इण्डिया की स्थापना की गयी।

इन संगठनों के अतिरिक्त विभिन्न समाज कार्य षिक्षा संस्थाओं के स्तर पर भी स्थानीय संगठनों का निर्माण किया गया है।

1952 में स्नातक उपाधि वाले व्यक्ति द्विवर्षीय पाठ्यक्रम कमे लिए भर्ती किये जाने लगे और इस पाठ्यक्रम को सफलतापूर्वक पूरा कर लेने पर उन्हें मास्टर आफ सोशल टेक्निक्स की उपाधि दी जाने लगी। यह उपाधि मात्र एक वर्ष ही दी गयी और इसके बाद इसका नाम बदल कर मास्टर ऑफ सोशल वर्क कर दिया गया

जो कि आज तक है। 1950 में बड़ौदा विश्वविद्यालय ने समाज कार्य का एक अलग संकाय खोलने का निष्चय किया। इसमें भर्ती की शर्ते पाठ्य कार्यक्रम तथा उपाधि का नाम लगभग उपर्युक्त सम ही था। दक्षिण भारत में खुलने वाला समाज कार्य सम्बन्धी पहला विद्यालय मद्रास स्कूल ऑफ सोशल वर्क था जिसकी स्थापना 1952 में अखिल भारतीय समाज कार्य सम्मेलन की मद्रास राज्य शाखा के तत्वाधान में की गयी थी। द्विवर्षीय प्रषिक्षण पाठ्यक्रम के उपरान्त यहां के स्नातकों को समाज विज्ञान प्रषासन में एक स्नातकोत्तर प्रमाण पत्र (डिप्लोमा) दिया जाता है। इन कतिपय प्रारम्भिक विद्यालयों या संस्थाओं के अतिरिक्त गांधी विद्या संस्थान, वाराणसी 'इण्डियन इन्टस्टीट्यूट आफ सोशल वेलफेयर एण्ड बिजनेश मैनेजमेण्ट (1942), कलकत्ता', 'बाम्बे लेबर इन्टस्टीट्यूट (1947), 'बम्बई', 'श्रम एवं समाज कल्याण विभाग (19480) पटना विश्वविद्यालय, पटना', 'सेन्टजेवियर लेबर रिलेशन्स इन्टस्टीट्यूट (1949) जमशेदपुर',- स्कूल ऑफ सोशल साइन्सेज, गुजरात यूनिवर्सिटी, अहमदाबाद', 'इन्टस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइन्सेज, आगरा विश्वविद्यालय (1955) आगरा', 'समाजशास्त्र एवं समाज कार्य विभाग (19570) आन्ध्र विश्वविद्यालय, वाल्टेयर, 'सेन्टजेवियर इन्टस्टीट्यूट ऑफ सोशल सर्विस रांची', 'उदयपुर स्कूल ऑफ सोशल वर्क (1959) उदयपुर', 'श्रम एवं समाज कल्याण विभाग, विश्वविद्यालय , भागलपुर', ' नेशनल इन्टस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइन्सेस, (1960) बंगलौर', द 'स्कूल ऑफ सोशल वर्क (1960) मंगलौर', 'इन्दौर स्कूल आफ सोशल वर्क, (1960) इन्दौर', समाज कार्य विभाग (1961) यस0एच0 कालेज एरणाकूलम', 'पी0यू0जी0 स्कूल ऑफ सोशल वर्क (1962) कोयटम्बूर', 'समाज कार्य विभाग (1962) यस0एम0 कालेज, मद्रास', 'सामाजिक नेतृत्व शास्त्र और समाज कल्याण विभाग (1962) कर्नाटक विश्वविद्यालय, धारवार', 'समाज कार्य विभाग (1957, 1963) लोयोला कालेज, मद्रास', 'स्कूल आफ सोशल वर्क (मात्र महिलाओं के लिए 1955) निर्मला निकेतन, बम्बई', 'केन्द्रीय जन सहकार, शोध एवं प्रषिक्षण संस्थान नयी दिल्ली' इत्यादि भी उल्लेखनीय है। इनके अतिरिक्त गोरखपुर व इलाहाबाद तथा अन्नामलायी विश्वविद्यालय, इत्यादि में भी समाजकार्य सम्बन्धी षिक्षण प्रषिक्षण का कार्य होता है। आज देष में समाज कार्य से सम्बन्धित लगभग तीन दर्जन संस्थाए विद्यालय एवं विभाग इत्यादि हैं जिनमें कि कहीं तो समाज कार्य की प्रक्रियाओं समेत उसके विभिन्न क्षेत्रों की पाठ्यक्रमों सम्मिलित किया गया है और कहीं क्षेत्रों पर ही मुख्य रूप से जोर दिया गया है। कहीं तो ये विद्यालय किसी विश्वविद्यालय के संकाय या विभाग के रूप में कार्यरत है और कहीं ये स्वतंत्र सत्ता के संस्थान के रूप में कार्यरत हैं। कहीं समाज कार्य का कार्यक्रम स्नातक स्तर का भी है, स्नातक स्तर का भी है, स्नातकोत्तर स्तर पर भी है और शोध (डाक्रोरल) स्तर पर भी। कहीं कहीं यह मात्र स्नातकोत्तर स्तर पर ही है। इसके अलावा अनेक संस्थाओं में इनके विभिन्न स्तरों के प्रषिक्षणात्मक कार्यक्रम संचालित होते हैं।

जिन विद्यालयों में समाज कार्य का अध्ययन, अध्यापन स्नताक स्तर पर होता है वहां यह एक वैकल्पिक विषय के रूप में रखा जाता है। जहां पर स्नातकोत्तर स्तर पर यह विषय है उसके लिए प्रायः हर विद्यालय या विभाग भर्ती हेतु ऐसे ही अभ्यर्थियों पर विचार करता है जो कि कम से कम स्नातक हों। यद्यपि आम प्रयत्न यह है कि ये स्नातक किन्हीं भी विषयों को पढ़े हुए हो सकते हैं किन्तु कहीं कहीं प्राकृतिक और जीव विज्ञान के स्नातकों का प्रवेष निषिद्ध है। चाहे किसी भी विषय का स्नातक भर्ती किया जाय, कोषिष यह कि जाती है कि वरीयता उन्हें मिले जो कि समाज विज्ञान के विषयों के साथ स्नातक परीक्षोतीर्ण हों। यद्यपि अधिकतर विद्यालयों में यह मनाही नहीं है कि स्नातक परीक्षा में विद्यार्थी ने कौन सी श्रेणी पायी है किन्तु चुनाव करते समय पूर्व उपलब्धियों व योग्यता क्रम का ध्यान रखा जाता है। समाज कार्य विभाग स्नातकोत्तर स्तर पर दाखिले के लिए उन्हीं अभ्यर्थियों की अर्जियों पर ध्यान देता है जो कि स्नातक परीक्षाओं में कम से कम पैतालीस प्रतिषत पूर्णांक प्राप्त किये हुए होते हैं। दिल्ली विश्वविद्यालय में उन अभ्यर्थियों को अर्जियों पर भी ध्यान दिया जाता है जिन्होने कि कम से कम किसी एक विषय में पचास प्रतिषत अंक स्नातक स्तर पर प्राप्त किये हों। आम तौर पर इन पाठ्य कार्यक्रमों में दाखिले के

लिए उन्हीं लोगों को चुना जाता है जो कि शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक स्तर पर सन्तोषप्रद स्वास्थ्ययुक्त होते हैं और जिनकी वय कम से कम अट्ठारह वर्ष होती है। कहीं-कहीं यह वय सीमा उन्नीस, बीस, या इक्कीस वर्ष आदि भी है। अधिकतम वय सीमा पर कोई अधिक बल नहीं दिया जाता। भारत में संचालित समाज कार्य के इन पाठ्य कार्यक्रमों में भर्ती के अनेक तरीके अपनाये जाते हैं। कहीं तो केवल पूर्व उपलब्धियों के आधार पर न्यूनतम योग्यताओं की परख करके योग्यतानुसार ही चुनाव कर लिया जाता है और कहीं कुछ चुने हुए उम्मीदवारों से साक्षात्कार करने के उपरान्त उनकी उपलब्धि और साक्षात्कार से स्पष्ट योग्यता का समन्वय करके। इसके अतिरिक्त अनेक उन्नत विद्यालय अन्य उन्नत ऐसी प्रविधियों का भी सहारा इस निमित्तद लेते हैं जो कि बहुत कुछ उन्नत विदेषों की प्रविधियों से साम्य रखती है। इन प्रविधियों में सामूहिक परिचर्या, बुद्धिलब्धि, अभिरूचि या मानसिक परीक्षण तथा लिखित परीक्षाएं आदि उल्लेखनीय है। बहुत से विद्यालय अभ्यर्थी की आर्थिक, सामाजिक तथा पारिवारिक स्थितियों का भी इस निमित्त पूर्व अध्ययन करते हैं। जब चयनकर्ता उपर्युक्त स्थापित मानकों के अनुरूप अभ्यर्थी को पाते हैं तो कुल निष्चित संख्या को दृष्टि में रखते हुए योग्यता क्रम से उसका चुनाव करते हैं।

समाज कार्य के स्नातकोत्तर पाठ्य कार्यक्रम में प्रति सप्ताह लगभग पन्द्रह से अठारह घण्टों तक कक्षा में अध्यापन होता है तथा लगभग इतना ही समय व्यावहारिक कार्य हेतु निष्चित किया जाता है। कक्षा में जो कुछ पढ़ाया जाता है, उसमें एक तो ऐसी आधाभूत पाठ्य वस्तु होती है जो कुछ सामाजिकद व व्यवहारगत विज्ञानों का परिचय कराती है तथा वृत्तिकर्ता के हेतु जिनकी जानकारी आवष्यक है तथा दूसरे वे पाठ्य वस्तुएं हैं जिन्हें कि समाज कार्य में पद्धति के रूप में जाना जाता है। पद्धतियों में वैयक्तिक कार्य, सामूहिक कार्य, सामुदायिक संगठन, समाज कल्याण प्रषासन, सामाजिक शोध तथा सामाजिक शोध तथा सामाजिक क्रिया सम्मिलित हैं। तीसरी पाठ्य वस्तु समाज कार्य के क्षेत्र हैं। इन क्षेत्रों में बाल एवं परिवार कल्याण, श्रम कल्याण, चिकित्सक एवं मनष्चिकितकीय समाज कार्य सुधार प्रषासन, जनजातीय कल्याण, ग्रामीण कल्याण तथा संस्थागत सेवाएं इत्यादि प्रमुख हैं। आमतौर पर पहले वर्ष आधारभूत सामाजिक विज्ञानों के परिचयात्मक अध्यापन के साथ साथ प्रमुख पद्धतियों के अध्यापन की व्यवस्था की जाती है। दूसरे वर्ष प्रमुख या सहायक पद्धतियों के साथ ही क्षेत्र विशेष में विशेषीकरण की व्यवस्था रहती है। प्रायः समाज कार्य विद्यालयों में कक्षागत पठन-पाठन के अतिरिक्त दोनों ही वर्ष प्रत्येक छात्र को प्रक्रियात्मक पद्धतियों का व्यावहारिक ज्ञान कराया जाता है। आमतौर पर इनमें वैयक्तिक कार्य और सामूहिक कार्य पर अधिक बल दिया जाता है। जो छात्र जिन क्षेत्रों में विशेषीकरण करते हैं उन्हें प्रायः यह कोशिश की जाती है कि उन्हीं क्षेत्र विशेष के सामाजिक अभिकरण में व्यावहारिक कार्य का अवसर सुलभ हो। जो संस्थाएं श्रम या वैयक्तिक प्रबन्ध से सम्बन्धित कार्यक्रमों का संचालन करती है। उनके पाठ्यक्रमों और प्रशिक्षण के कार्यक्रमों का गठन समाज कार्य के विद्यालयों के पाठ्यक्रमों के गठन से भिन्न होता है। इन संस्थाओं में या तो पद्धतियों पर बिल्कुल ही ध्यान नहीं दिया जाता या मात्र उनका स्पर्श तक ही किया जाता है। यहां के व्यावहारिक कार्य भी भिन्न तरीके के होते हैं। यहां के छात्र सीधे-सीधे सम्बन्धित मानव के साथ कार्य करने का अनुभव नहीं प्राप्त करते और मात्र अवलोकन और अध्ययन पर ही अधिकांश निर्भर रहते हैं। समाज कार्य के विद्यालयों में व्यावहारिक कार्य का अनुभव प्रत्येक छात्र को एक तो कम से कम उस क्षेत्र के अभिकरण में करना ही पड़ता हैं जिसमें कि वह विशेषीकरण कर रहा है इसके अतिरिक्त उसे दूसरे क्षेत्र के अभिकरण में भी काम करना पड़ता है। कहीं-कहीं तो एक छात्र को दो वर्ष में तीन चार अभिकरणों में काम का अनुभव करना पड़ता है। व्यावहारिक ज्ञान को और अधिक पुष्ट करने की दृष्टि से कतिपय अग्रणी विद्यालय अपने छात्रों को सम्पूर्ण पाठ्यक्रम समाप्ति के तत्काल उपरान्त दो तीन माह के लिए किसी क्षेत्र विशेष के अभिकरण में अनुभव हेतु भेजते हैं। दो वर्ष के पाठ्यक्रम में ही किसी एक सामाजिक समस्या पर एक छोटा सा शोध करना होता है और इसका प्रतिवेदन प्रस्तुत करना होता है। शोध वैयक्तिक या सामूहिक दोनों स्तरों पर कराये जाते हैं और इसमें एक या एक से अधिक

वैयक्तिक या सामूहिक दोनों स्तरों पर कराये जाते है और इसमें एक या एक से अधिक अध्यापकों का निर्देशन और निरीक्षण होता है। प्रायः ऐसे शोध में प्रश्नावलियों के माध्ययम से तथ्य संकलन किया जाता है। सामाजिक शोध की बढ़ती हुई मांग और आवश्यकता को दृष्टि में रखते हुए यह जरूरी समझा जाता है कि प्रत्येक छात्र शोध के आधुनिकतम तरीकों का कम से कम परिचय मात्र तो अवश्य ही रखे। टाटा इन्स्ट्रीयूट आफ सोशल साइन्सेस ने तो शोध में विशेषीकरण का भी प्राविधान किया है और शीघ्र ही काशी विद्यापीठ का समाजकार्य विभाग भी ऐसा ही करने जा रहा है। अब तक के समाज कार्य सम्बन्धी लगभग आधे विभागों विद्यालयों ने चार-पांच क्षेत्रों में विशेषीकरण का प्राविधान किया है जब कि शेष मात्र इनका परिचयात्मक अध्ययन अध्यापन करते है। शोध में समस्याओं का चयन और छात्र विशेष को उसमें संयुक्त करते समय यह देखा जाता है कि छात्र अंग समाजकार्य शिक्षण हेतु समझे जाते हैं, वे हैं एक तो समाजशास्त्र तथा दूसरे मानव व्यवहार शास्त्र। इन्हीं को आधार मानकर पाठ्यक्रमों में एक मुख्य चर्चा व्यक्ति और समाज की तथा दूसरे व्यक्ति के मनोसामाजिक विकास की हुआ करती है। कोशिश यह की जाती है कि इन प्रश्न पत्रों को वे ही अध्यापक पढ़ाएं जिन्हें कि क्रमशः समाज शास्त्र एवं मनोविज्ञान की अच्छी जानकारी हो या वे इन विषयों में स्नातकोत्तर उपाधिधारी हों। इन दो बुनियादी पर्चो के अलावा सामाजिक सेवा, जन स्वास्थ्य, मनोविज्ञान तथा आर्थिक और राजनीतिक गत्यात्मकता सम्बन्धी पर्चे भी पाठ्यक्रमों में सम्मिलित किये जाते हैं। पद्धतियों को पढ़ाते समय भारतीय परिप्रेक्ष्य से उदाहरण लिये जाते हैं और अभिलेखों का सहारा लिया जाता है। बहुत से विद्यालयों ने ऐसे अभिलेख तैयार किये हैं और वे उनमें अपनी आवश्यकतानुरूप संशोधन और परिवर्धन भी करते रहते हैं। समाज कार्य के अनेक विद्यालयों में विशेषीकरण हेतु छात्रों की अधिकतम संख्या अलग-अलग निश्चित करती है। कक्षागत अध्ययन एवं अभिकरणगत व्यावहारिक अनुभव के अतिरिक्त प्रायः अनेक प्रमुख विद्यालय अपने विद्यार्थियों को देश के विभिन्न अंचलों में स्थिति और कार्यरत विभिन्न प्रकार के अभिकरणों को देखने समझने हेतु डेढ़ दो सप्ताह की अध्ययन यात्रा की व्यवस्था करते हैं। इनमें भी छात्रों के विशेषीकरण का ध्यान रखते हुए उन्हें सम्बन्धित अभिकरणों का अवलोकन कराया जाता हैं और वहां के कार्यकर्ताओं और अधिकारियों से मिलने जुलने और बातचीत का अवसर प्राप्त कराया जाता है। अध्ययन यात्रा के अतिरिक्त ग्रामीण या सुदूर स्थिति अंचलों में हफ्ते दो हफ्ते के शिविर भी लगाये जाते हैं जहां कि छात्र अनुशासित, सहयोगी और सहकारी जीवन-कला को सीखने और विकसित करने के साथ ही श्रमदान के माध्यम से कुछ छोटा-मोटा निर्माण और उत्थान का भी कार्य करते हैं। विद्यार्थियों की पुस्तकालयों की सुविधा प्राप्त है और वे वहां अनेक पुस्तकों तथा पत्रपत्रिकाओं इत्यादि का अध्ययन और मनन करते हैं। यद्यपि अभी विद्यालयों में इस बात पर कोई खास ध्यान नहीं दिया गया है कि छात्र नियमित रूप से वादविवाद और शिक्षणात्मक कक्षाओं की व्यवस्थाओं का लाभ उठा सकें किन्तु छिटपुट ऐअ प्रबन्ध भी होते रहते हैं। वर्तमान व्यवस्था के अन्तर्गत लगभग एक हजार घण्टा कक्षागत अध्यापन के लिए उपलब्ध है। यद्यपि विषय वार इसका कोई एक रूप बंटवारा नहीं है किन्तु अनेक विद्यालय, व्यक्ति और समाज तथा व्यक्ति का मनोसामाजिक विकास नामक पर्चों पर एक दसांश समय निर्धारित करते है और विशेषीकरण पर लगभग इन दोनों को मिलाने पर जितने घण्टे होते हैं उतना ही खर्च करते हैं। एक दसांश से कुछ कम क्षेत्र के सामान्य अध्ययन पर लगाया जाता है तथा लगभग इतना ही समाज कल्याण एवं नीति के पर्चे पर। शेष घण्टों में पद्धतियों एवं अन्य पर्चों का लगभग समान सा बंटवारा होता है। बहुत कुछ इसी अनुपात में विभिन्न प्रश्नपत्रों के अलग-अलग पूर्णांक भी निश्चित होते है। यद्यपि लगभग उतना ही समय या कुछ अधिक समय व्यावहारिक कार्य हेतु निश्चित किया जाता है किन्तु उसका पूर्णांक सम्पूर्ण के पचमांश के लगभग ही होता है। यद्यपि पुस्तालयों की व्यवस्थाएं है और उनमें विकास भी हो रहा है किन्तु ज्यादातर पुस्तकालयों में एक बहुत ही कम पुस्तकें या पत्र पत्रिकाएं सुलभ हैं दूसरे उनमें से अधिकांश बहुत पुरानी और अनुपयोगी सी है तथा मात्र विदेशी संदर्भों की है। विदेशी उदाहरणों से यहां की स्थिति में ज्ञान के उपयोग को

समझने और व्यवहार करने में कठिनाई होती है। समाज कार्य विद्यालयों के अनेक पुस्तकालयों में पुस्तकालय हेतु न तो कोई अलग से धनराशि निश्चित होती है और न तो इस निमित्त अलग से कर्मचारी ही है। किताबों को सुरक्षित तौर पर रखने के लिए आवश्यक स्थान और उपकरणों की भी कमी है। साधारण तौर पर रखने के छात्र के लिए यह और भी जरूरी है कि उसे अध्ययन की अधिकतम सामग्री पुस्तकालयों से मिले।

12.7 समाज कार्य शिक्षकों एवं अभ्यासकर्ताओं की महत्वपूर्ण

समाज कार्य शिक्षण प्रशिक्षण में व्यावहारिक कार्य का अत्यधिक महत्व है। किसी व्यक्ति को कुशल वृत्तिक कार्यकर्ता बनाने के लिए व्यावहारिक अनुभव की नितान्त आवश्यकता हुआ करती है। चूंकि समाज कार्य एक व्यावहारिक विज्ञान और वृत्ति है इसलिए इसका शिक्षण प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले व्यक्ति के लिए यह आवश्यक समझा जाता है कि वह जो कुछ अध्ययन करे उसका व्यावहारिक प्रयोग भी क्षेत्रगत संदर्भों में जाने समझे। इसी दृष्टि से अर्थात् कार्यात्मक अनुभव हेतु समाज कार्य के विद्यालय या विभाग अपने पाठ्यक्रम के लक्ष्य और ध्येय के अनुरूप समाज कार्य के विभिन्न क्षेत्रों में कक्षागत अध्ययन के साथ साथ अपने छात्रों को नियमित रूप से भेजते हैं। व्यावहारिक कार्य में बहुत से विद्यालय इस बात पर बल देते हैं कि विद्यार्थियों को प्रक्रियात्मक विषयों या पद्धतियों को विभिन्न सामाजिक अभिकरणगत परिस्थितियों में वयवहत करने का अनुभव प्राप्त हो और वे प्रशिक्षणोपरान्त एक कुशल प्रक्रिया विशेषज्ञ सामाजिक कार्यकर्ता बन सकें। अन्य अनेक विद्यालय इस बात पर बल देते हैं कि विद्यार्थियों को व्यावहारिक अनुभव मिले जो कि उनके विशेषीकरण के क्षेत्र में कार्य सामथ्र्य को बढ़ावा देता हो। चाहे इन दोनों में से किसी भी लक्ष्य से व्यावहारिक कार्य का कार्यक्रम निर्धारण या नियोजन किया जाय यह सदा ध्यान रखा जाता है कि छात्र को सम्बन्धित जिन तत्वों का अध्ययन कक्षा में कराया गया है उनका उपयोग और समन्वय वे व्यावहारिक कार्य के दौरान करें। कक्षागत ज्ञान और व्यवहारगत अनुभव दोनों एक दूसरे के परिपूरक और अन्योन्याश्रयी होते है। समाज कार्य के उन्नत अभिकरणों के अभाव में इसके विद्यार्थियों को समुचित व्यावहारिक अनुभव नहीं मिल पा रहा है। प्रक्रियाओं के समुचित प्रयोग के अवसर और साधन बहुत ही कम सुलभ है। जहां क्षेत्र सम्बन्धी ज्ञान का अनुभव का पक्ष उतना मजबूत नहीं हो सका है जितना होना चाहिए और कक्षागत या पुस्तकों इत्यादि के माध्यम से होने वाला अध्ययन अध्यापन इस पर जरूरत से कुछ ज्यादा ही हावी है। यह भी एक कारण है जिससे कि हमारे यहां से प्रशिक्षित सामाजिक कार्यकर्ता सच्चे अपेक्षित अर्थों में एक सामाजिक कार्यर्का नहीं बन पाते। यद्यपि काशी विद्यापीठ का समाज सेवा विद्यालय, टाटा इन्स्टीयूट आफ सोशल साइन्सेस, बम्बई, दिल्ली स्कूल आफ सोशल वर्क, दिल्ली तथा समाज कार्य का बड़ौदा स्थित विद्यालय आदि स्वयं ही ग्रामीण एवं नगरीय समाज कल्याण केन्द्र या अभिकरण संचालित करते हैं किन्तु इससे वे समस्त छात्र एवं छात्राएं नहीं लाभान्वित हो पाते जो कि यहां शिक्षण प्रशिक्षण प्राप्त करते हैं। इसके अतिरिक्त हमारे देश के अन्य अभिकरण जिनका कि इस हेतु प्रयोग होता है, अपेक्षित साधनों या कार्यक्रमों से प्रायः युक्त नहीं है और इनकी भी संख्या अपर्याप्त ही है। समाज कार्य के व्यावहारिक अनुभव को सफल और उपयोगी बनाने के लिए यह जरूरी है कि विद्यार्थियों का समुचित निरीक्षण और निर्देशन किया जाय। हमारे देश के सामाजिक अभिकरणों में प्रायः व्यक्ति नहीं है जिन्हें कि छात्रों के व्यवाहारिक कार्य के निर्देशन से व्यवाहारिक कार्य के निरीक्षक हैं। अनेक विद्यालयों में कक्षागत अध्यापन और व्यावहारिक कार्य के निरीक्षण दोनों ही कार्यों को प्रायः प्रत्येक अध्यापक करता है। कहीं-कहीं ऐसा भी है कि व्यावहारिक कार्य को कक्षागत अध्यापन से कम महत्व दिया जाता है और फलस्वरूप वरिष्ठ अध्यापकों को कक्षाओं में पढ़ाने का कार्य सौंपा जाता है और फलस्वरूप वरिष्ठ अध्यापकों को कक्षाओं में पड़ाने कार्य सौंपा जाता है तथा कम अनुभव प्राप्त या नये अध्यापकों को व्यावहारिक कार्य निरीक्षण का कार्य सौंपा जाता है। एक व्यक्ति को कुशल सामाजिक कार्यकर्ता बनाने के लिनए यह जरूरी है कि इन दोनों को ही समान महत्व

दिया जाय और प्रत्येक अध्यापक को दोनों ही काम सौंपे जायें, जिससे कि वे इन दोनों की परपूरकता का लाभ उठाने के साथ साथ इन दोनों को अधिकाधिक पुष्ट भी कर सकें। बहुत से विद्यालयों में किसी वरिष्ठ अध्यापक को व्यावहारिक कार्य सम्बन्धी अवसरों, सुविधाओं, साधनों एवं कार्यक्रमों का नियोजन एवं संचालन करने के साथ-साथ व्यावहारिक कार्य का निरीक्षण करने वाले अध्यापकों और छात्रों से विचार विमर्श कर उनकी मदद का काम भी करता है। व्यावहारिक कार्य का अच्छा अनुभव प्राप्त करने के लिए यह जरूरी समझा जाता है कि छात्रों का प्रति सप्ताह निरीक्षण और निर्देशन किया जाय और बीच-बीच में उनका उन आधारों पर मूल्यांकन किया जाता रहे जिनका कि उन्हें पूर्व परिचय एवं ज्ञान हो। छात्रों से उनके कार्यों का नियमित प्रतिवेदन लिखवाया जाता है, उसे जांचा जाता है और उनका छात्रों द्वारा स्वयं ही और एक छात्र का दूसरे छात्र के द्वारा बीच-बीच में मूल्यांकन कराया जाता है। इन सबसे उन्हें अपनी खामियों को जानने, परखने और सुधारने का अच्छा मौका मिलता है। सत्र के अन्त में प्रगति और उपलब्धि का मूल्यांकन कर परीक्षा की दृष्टि से छात्र की स्थिति निश्चित की जाती है।

समाज कार्य का शिक्षण प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले छात्रों का मूल्यांकन करने का तरीका भिन्न-भिन्न विद्यालयों में भिन्न-भिन्न हैं। कहीं तो वर्ष में दो बार और दो वर्ष में कुल मिलाकर चार बार परीक्षाएं होती हैं और कहीं वर्ष के अन्त में एक बार और दो वर्षों में कुल दो बार ही परीक्षाएं ली जाती है। कहीं-कहीं वर्ष में दो और दो वर्ष में चार या कुछ इसी प्रकार कक्षाओं में निर्दिष्ट कार्य या गृह निर्दिष्ट कार्य दे कर आंशिक परीक्षाएं ली जाती है और कहीं-कहीं ऐसी कोई भी व्यवस्था नहीं है। कक्षागत अध्यापन वाले विषयों की परीक्षाओं में ज्यादातर अन्य विद्यालय के अध्यापकों से भी प्रश्न पत्र और उत्तर पुस्तिका जंचवाने का प्रचलन है। बहुत से विद्यालय मात्र आन्तरिक परीक्षकों के द्वारा ही यह सम्पादित करते हैं। बहुत से विद्यालय मात्र आन्तरिक परीक्षकों के द्वारा ही यह कार्य सम्पादित करते हैं। प्रायः प्रत्येक विद्यालय में व्यावहारिक कार्य के मूल्यांकन और परीक्षा का कार्य निरीक्षक ही करते हैं। कहीं-कहीं मात्र मौखिक परीक्षा हेतु बाहरी परीक्षक बुलाये जाते हैं। अधिकतर मौखिक परीक्षा में अधिक बल उसी पक्ष पर दिया जाता है जिसमें कि अधिकतर मौखिक परीक्षा में अधिक बल उसी पक्ष पर दिया जाता है जिसमें कि छात्र विशेषीकृत हैं या जिसमें शोध प्रतिवेदन प्रस्तुत किया है। कहीं-कहीं मौखिक परीक्षा के माध्यम से छात्र के ज्ञान के सभी पक्षों को आंकने की चेष्टा की जाती है। बहुत से विद्यालय जो कि प्रायः विश्वविद्यालयों के विभाग हैं, सफलतापूर्वक उत्तीर्ण छात्रों को योग्यतानुसार श्रेणियां देते हैं। प्रायः कम से कम साठ प्रतिशत सम्पूर्णांक प्राप्त करने वाले छात्र को प्रथम श्रेणी, प्रायः कम से कम अड़तालिस प्रतिशत प्राप्त सम्पूर्णांक करने वाले छात्र को द्वितीय श्रेणी तथा इससे नीचे उत्तीर्णांक तक प्राप्त करने वालों को तृतीय श्रेणी दी जाती है। कई जगह मात्र प्रथम और द्वितीय श्रेणी ही दी जाती है, तृतीय श्रेणी का कोई विधान ही नहीं है, कई जगह अमरीकी पद्धति से मात्र अ, ब, स श्रेणियां दी जाती है।

शोधकार्य (डाक्टोरल उपाधि) हेतु वे ही व्यक्ति योग्य समझे जाते हैं जिन्हें कि पैंतालिस, अड़तालिस, पचास या इससके भी अधिक प्रतिशत सम्पूर्णांक एम0ए0 स्तर की परीक्षा में प्राप्त रहते हैं। कहीं-कहीं शिक्षकों को इसमें कुछ रियायत दी जाती है। कहीं-कहीं इस स्तर पर शोधकार्य हेतु नाम लिखवाने के लिए यह भी जरूरी है कि स्नातकोत्तर उपाधि उपरान्त लगभग दो वर्ष का कार्य का अनुभव हो। टाटा इन्स्टीयूट आफ सोशल साइन्सेस, बम्बई और काशी विद्यापीठ के समाज सेवा विभाग इत्यादि में इस स्तर के कार्यक्रम में पहले एक वर्ष तक शोध सम्बन्धी कक्षागत अध्ययन कराया जाता है और तदुपरान्त लगभग दो वर्ष में शोध प्रबन्ध प्रस्तुत करने का विधान है। आगरा के इन्स्टीयूट आफ सोशल साइन्सेस में शोध प्रबन्ध प्रस्तुत करने के पूर्व यह जरूरी है कि उसी के अन्तर्गत संचालित शोध पद्धति शास्त्र सम्बन्धी स्नातकोत्तरोत्तर प्रमाणपत्र (डिप्लोमा) प्राप्त किया जाय और किसी एक मातृभाषा के अतिरिक्त भाषा में परिचयात्मक योग्यता की प्रमाणपत्रीय परीक्षा उत्तीर्ण कर ली जाय। लखनऊ विश्वविद्यालय, समाज शास्त्र एवं समाज कार्य विभाग में ऐसा नियम है कि उपर्युक्त भाषा सम्बन्धी परीक्षा को उत्तीर्ण

तो किया ही जाय और कुल छः सत्रों में से कम से कम तीन सत्र तक इस विभाग में उपस्थित रहा जाय। उपस्थिति सम्बन्धी यह नियम इसी विभाग से एम0ए0 परीक्षा उत्तीर्ण छात्रों पर नहीं लागू है।

शोध प्रबन्ध से यदि परीक्षक और सम्बन्धित समिति सन्तुष्ट होती है तो प्रायः मौखिक परीक्षा भी ली जाती है। इसको उत्तीर्ण कर लेने पर विद्यार्थी को डाक्टरेट की उपाधि दी जाती है। लखनऊ विश्वविद्यालय में मौखिक परीक्षा आमतौर पर नहीं होती। यह परीक्षा यहां किन्हीं विशेष दशाओं में आवश्यक समझी जाने पर ही ली जाती है। कहीं तो डाक्टोरल उपाधि समाज कार्य विशेष में दी जाती है और कहीं समाज शास्त्र विषय में। यहां इस उपाधि को 'डाक्टर आफ फिलासोफी' कहते हैं। इसके उपरान्त अत्यन्त उच्चकोटि के शोध प्रबन्ध पर डी0लिट्0 की उपाधि की भी कहीं कहीं व्यवस्था है।

केन्द्रीय और अनेक प्रान्तीय सरकारों ने समाज कल्याण सम्बन्धी कई पदों पर नियुक्ति हेतु समाज कार्य सम्बन्धी उपर्युक्त उपाधियों को नियमतः अनिवार्य कर दिया है।

समाज कार्य सम्बन्धी विभिन्न विद्यालयों एवं विभागों ने अनेक सर्वेक्षण और प्रकाशन इत्यादि के कार्य किये हैं। अब तक के कुल सर्वेक्षणों की संख्या लगभग आठ दशक हैं। सर्वाधिक सर्वेक्षण का कार्य (लगभग दो दशक) टाटा इन्स्टीयूट आफ सोशल साइन्सेस ने किया है व इसके उपरान्त लखनऊ विश्वविद्यालय के समाज कार्य विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय के समाजकार्य, कलकत्ता विश्वविद्यालय के समाज कल्याण एवं व्यापारिक प्रबन्ध सम्बन्धी संस्थान, विद्यालयों या विभागों इत्यादि ने छिटपुट कार्य किये हैं। यहां उन संस्थाओं से तात्पर्य नहीं है जो कि प्रमुख रूप से मात्र शोध सम्बन्धी ही है। काशी के गांधी विद्या संस्थान और दिल्ली के केन्द्रीय जन सहकार सम्बन्धी शोध संस्थान ने भी अनेक उच्चकोटि के सर्वेक्षण कार्य किये हैं। समाज कल्याण सम्बन्धी विभिन्न संस्थाओं या विभागों ने अब तक लगभग पांच दशक महत्वपूर्ण प्रकाशन किये हैं। इनमें समाज कार्य सम्बन्धी विद्यालयों में दिल्ली विश्वविद्यालय का समाज कार्य विद्यालय, बड़ौदा विश्वविद्यालय का समाज कार्य संकाय और बम्बई का टाटा इन्स्टीयूट आफ सोशल साइन्सेस प्रमुख हैं। भारतीय विश्वविद्यालयों से समाज कार्य में डाक्टोरल स्तर की शोध उपाधि प्राप्त करने वाले व्यक्तियों की संख्या लगभग दो दशक है। इसमें सर्वाधिक व्यक्ति लखनऊ विश्वविद्यालय एवं आगरा विश्वविद्यालय के है।

12.8 समाज कार्य शिक्षकों की महत्वपूर्ण भूमिका

भारत में समाज कार्य शिक्षण प्रशिक्षण के विकास और संचालन में जिन लोगों का महत्वपूर्ण हाथ रहा है या है, उनमें स्वगीय डा0 राधा कमल मुखर्जी, स्वर्गीय के0यम0 कुमारम्मा, ए0आर0 वाडिया, डा0 यम0यस0 गोरे, प्रो0 डी0के0 सान्याल, श्री यस0यन0 रानाडे, डा0 जी0पी0 सिनहा, डा0 यस0 जफर हसन, डा0 राम नारायण सक्सेना, डा0 वी0यस0मीर, प्रो0 रमाशंकर पाण्डेय, प्रो0 जी0जी0 ददलानी, श्री के0 यन0 जार्ॅज, प्रो0 वी0आर0 सेनाय, कुमारी डोरोथी यम0 बेकर, डा0 यम0वी0 मूर्ति, प्रो0 वी0पी0 वर्मा, कुमारी ओ0 परइरा, श्री यस0 प्रसाद, श्री इन्स विदा, डा0 के0 ईश्वरन, डा0 डब्ल्यू0 टी0वी0 आदि शेसप्पा, श्री के0 पिलानी, श्री यफ0सेल्स, कुमारी यम0 बोवेल, श्री यम0 सी0 नानावती, श्री सुगत दास गुप्त, प्रो0 पी0टी0 थामस, स्व0 श्री जे0 वार्न, बास, प्रो0 पी0डी0 कुलकर्णी तथा गांगराडे आदि का नाम उल्लेखनीय है।

समाज कार्य की यह शिक्षा संस्थाएं श्रम कल्याण और औद्योगिक प्रतिष्ठानों के कार्मिक विभागों के लिए कार्यकर्ताओं की मांग ही पूरी करती आ रही है। समाज कार्य की शिक्षा और प्रशिक्षण का स्तर इच्छा होते हुए भी व्यावसायिक समाज कार्य का अभ्यास सही अर्थों में समाज कार्य का अभ्यास नहीं कहा जा सकता। औद्योगिक परिवेश में समाज कार्य की प्रणालियों के प्रयोग का अवसर कम ही मिलता है और कल्याणकारी कार्य भी नाम

मात्र के ही कहे जा सकते हैं। अन्य क्षेत्रों में भी समाज कार्यकर्ता के कार्यों का विश्लेषण करने से यही पता चलता है कि उनके कार्यों में व्यावसायिक कार्य का अंश कम होता है और प्रशासनिक कार्यों का अधिक। परम्परागत समाज कार्य भूमिका की उपेक्षा प्रशासनिक भूमिा अधिक मिलती हैं।

समाज कार्य की सभी शिक्षा संस्थाएं मान्यता प्राप्त नहीं हैं। इसलिए शिक्षा का एक निर्धारित स्तर नहीं बनाया जा सकता है। क्षेत्र कार्य (**Field Work**) के लिए अच्छी संस्थाओं का अभाव है। विभिन्न क्षेत्रों में व्यावसायिक समाज कार्यकर्ताओं की सही भूमिका स्पष्ट न होने के कारण, कार्य की दशाएं और वेतन की दरें अनुचित होने के कारण असंतोष की भावनाएं मिलती हैं।

समाज कार्य के व्यावसायिक संगठन सक्रिय नहीं हैं। **Indian Association of Trained Social Workers, (Formerly Association of Alumni of Schools of Social Work in India), I)ndian Society8 of Psychiatric Social Workers, Labour Welfare Officers Association, Prohibition Officers, Association** आदि कई संगठन हैं परन्तु इन संगठनों का व्यावसायिक सदस्यों पर कोई भी प्रभावी नियंत्रण नहीं हैं।

समाज कार्य की शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थाओं में वृद्धि होने से और व्यावसायिक कार्यकर्ताओं की संख्या में वृद्धि होने से बहुत सी समाज सेवी संस्थाओं में अधिक संख्या में इन कार्यकर्ताओं की नियुक्ति होने लगी है। इसी के साथ-साथ बहुत से व्यावसायिक संगठन भी बन गये है। उपरोक्त विवरण से सिद्ध होता है कि भारत में समाज कार्य एक व्यवसाय के रूप में धीरे-धीरे विकसित होता जा रहा है और समाज कल्याण संस्थाओं में और अन्य क्षेत्रों में मुख्य रूप से श्रम कल्याण के क्षेत्र में व्यावसायिक कार्यकर्ताओं की नियुक्तियां होती जा रही है।

1952 में एक नवीन संस्था इण्डियन कौन्सिल फार चाइल्ड वेलफेयर के नाम से स्थापित हुई। इसका उद्देश्य एक ओर तो शिशु कल्याण के क्षेत्र में कार्य करने वाली संस्थाओं के बीच समन्वय स्थपित करन है और दूसरी ओर ऐच्छिक संस्थाओं एवं राज्य के बीच सम्पर्क स्थापित करना है।

129 केन्द्रीय समाज कल्याण परिषद

यह एक स्वतंत्र परिषद है परन्तु शिक्षा मंत्रालय के प्रशासन का एक भाग है। इस परिषद का उद्देश्य नियोजित एवं सुनिदेशित आर्थिक सहायता द्वारा ऐच्छिक समाज सेवी समितियों का उचित विकास करना है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए इस परिषद ने एक विशेषज्ञ मंडल नियुक्त किया जिसका कार्य देश के अनेक क्षेत्रों में जाकर समाजसेवी समितियों का निरीक्षण करना और उनकी आवश्यकताओं एवं विकासनीय शक्तियों को ज्ञान करना था। मार्च 1955 तक 1700 ऐच्छिक समितियों को सहायता दी जा चुकी थी। 1962 में इस परिषद को एक वैधानिक सस्था का रूप दे दिया गया।

कुछ समय उपरान्त विभिन्न राज्यों में स्टेट सोशल वेलफेयर ऐडवाइजरी बोर्ड्स बना दिये जिनका कार्य सहायता की प्रार्थनाओं की जांच करना एवं सहायता की संस्तुति करना है।

केन्द्रीय परिषद ने उत्तर रक्षा एवं पुनर्वास की एक योजना बनाई और दो उप समितियां (जिनमें से एक उत्तर रक्षा सेवा और दूसरी नैतिक एवं सामाजिक स्वास्थ्य से सम्बन्धित है) स्थापित की जिनका कार्य यह बताना है कि यह योजनाएं किस प्रकार कार्यान्वित की जायें। इसी योजना के अधीन एक समिति असोसिएशन फार मौरल एण्ड सोशल हाइजीन स्थापित की गई है। इस समिति ने समाज कार्य के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किये हैं। पतित स्त्रियों के उद्धार एवं पुनर्वास में इस समिति का प्रमुख स्थान हैं।

सामाजिक सुरक्षा की सुविधाएं यद्यपि अभी केवल औद्योगिक क्षेत्र में ही उपलब्ध हैं परन्तु कहीं-कहीं अनौद्योगिक क्षेत्र में भी उपलब्ध है। उत्तर प्रदेश में 1957 में वृद्धावस्था पेन्शन की व्यवस्था है जिसके अनुसार 65 वर्ष या इससे अधिक आयु के वृद्धा निराश्रितों को 20 रूपय मासिक पेन्शन मिलती है।

इसके अतिरिक्त उत्तर प्रदेश और अन्य राज्यों में भी भिक्षुकों एवं वृद्ध व्यक्तियों के लिए आवास की व्यवस्था की गई है। राज्य की ओर से संरक्षण गृह (प्रोटेक्टिव होमस्) उत्तर प्रदेश के पांच नगरों लखनऊ, आगरा, वाराणसी, मेरठ एवं गोरखपुर में स्थापित है जहां पतित स्त्रियों के रहने और पुनर्वास की सुविधाएं उपलब्ध हैं।

यदि पूर्ण रूप से देखा जाये तो अभी तक राज्य की ओर से समाज कल्याण सम्बन्धी सेवाएं प्रदान की जा रही हैं, वह पर्याप्त नहीं है। विशेष प्रकार से सामाजिक सुरक्षा अभी बड़ा अपर्याप्त नहीं है। विशेष प्रकार से सामाजिक सुरक्षा अभी बड़ा अपर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है। यही परिस्थिति ऐच्छिक समाजसेवी समितियों की है परन्तु आशा की जाती है कि औद्योगिक विकास के साथ-साथ समाज कल्याण कार्य का क्षेत्र और कार्यक्षमता भी बढ़ती जायेगी।

समाज कार्य की शिक्षा संस्थाओं का विकास स्वतंत्रता के बाद हुआ। 1947 तक केवल एक संस्था थी, 1958 में समाज कार्य के छः विद्यालय थे, 1959 में तेरह, 1961 में बीस, 1978 में पैंतीस और अब लगभग 300 विद्यालयों से भी अधिक में समाज कार्य की शिक्षा दी जा रही है। स्नातकोत्तर स्तर पर विभिन्न क्षेत्रों में विशेषीकरण की सुविधाएं उपलब्ध हैं।

यद्यपि भारत में समाज कार्य सम्बन्धी शिक्षण प्रशिक्षण का मात्रात्मक और गुणात्मक विकास हो रहा है किन्तु इसे अपेक्षित परिपक्वता हेतु राजकीय और स्वैच्छिक सम्बल की अभी काफी आवश्यकता है। सरकार और हम सबको मिलकर इस आवश्यकता की पूर्ति में और अधिक लगन से जुटना है। समाज कार्य शिक्षण प्रशिक्षण को अपनी परिस्थितियों के अनुरूप गठित और विकसित करना है।

12.10 सारांश

सारांश के रूप में इस अध्याय में समाज कार्य के व्यावसायिक शिक्षण एवं प्रशिक्षण व्यहवहारिक ज्ञान का विश्लेषण किया गया है। कल्याणकारी राज्य का क्या उत्तरदायित्व है, को भी बताया गया है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् समाज कार्य ने महत्वपूर्ण विकास किया है। जिसमें समाज कार्य के शिक्षकों तथा अभ्यासकर्ताओं की महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

12.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

(1) कल्याणकारी राज्य के उद्देश्य को बताइए।

(2) समाज कार्य व्यवसाय के शिक्षण एवं प्रशिक्षण पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

(3) समाज कल्याण से सम्बन्धित निम्नलिखित क्षेत्रों पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

(अ) ग्रामीण विकास

(ब) अनुसूचित जाति एवं जनजाति कल्याण

(स) सुधारात्मक सेवाएं

(4) समाज कार्य शिक्षकों एवं अभ्यासकर्ताओं की भूमिका का उल्लेख कीजिए।

(5) केन्द्रीय समाज परिषद की भूमिका को समझाइये।

(6) योजना आयोग की भूमिका को समझाइये।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. Friedlander, W. A. Indtrodution of Social Welfare, Prentice Hall, INC. New York, 1995.
2. Thomas P.T.: Profession Traning in Social Work, in Sugata Das Gupta (ed) "Towards in Pilosophy of Social Work in India Popular Books Services, New Delhi, 1967.
3. Ahamad, Mirza Raffiuddin, Samaj Kayra: Darshan evam Pranaliyan, Repid Books Services, Lucknow, 1969.
4. Mishra, P.D. Social Work Profession in India, New Royal Book Co., Lucknow, 2004.
5. Sudan K.S., Samaj Karya: Siddhant evam Abhyas, N.S. Publications Lucknow, 2011.
6. Mishra, P.D., Samaj Karya: Itihas, Darshan evam Pranaliyan, New Royal Book Co. Lucknow, 2004.
7. Singh, D.K., and Bhartiya, A.K., Social Work: Philosophy and Methods, New Royal Book Co. Lucknow, 2009.
8. Shastri R.R., Social Work Tradition in India, Welfare Forum and Research Organization, Varanasi, 1986.
9. Dinitto, D.M. and Mcneece, C.A. Social Work Issues and Opportunities: In a Challenging Profession, LYCEUM Books INC, Chicago, 2008.
10. O.Hare, Thomas, Essential Skills of Social Work Practics: Assesment Intervetion Evaluation LYCEUM Books INC, Chicago, 2009.
11. Adams, R.; Dominelli, L. and Payne, M.; Social Work: Themes, Issues and Critical Debates, Second edition (ed), Palgrave, New York, 1998.
12. Clark, S. Social Work as Community Development: A Management Model for Social Change, Second Eddition (ed), Ashgate Publishing Ltd., England, 2000.
13. Colby, Ira and Dziegielewski, S., Introdution to Social Work: The People's Profession, Second Eddition (ed), LYCEUM Books INC, Chicago, 2004.

इकाई -13

व्यवसाय : अर्थ, गुण एवं मानदण्ड

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 भूमिका

13.3 व्यवसाय का अर्थ एवं परिभाषाएं

13.4 व्यवसाय के लक्षण एवं मानदण्ड

13.5 व्यापार एवं व्यवसाय में अन्तर

13.6 पेशा एवं व्यवसाय में अन्तर

13.7 सारांश

13.8 अभ्यास प्रश्न

13.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

13.0 उद्देश्य

प्रस्तुत अध्याय के अध्ययन के पश्चात आप –

1.व्यवसाय का अर्थ, परिभाषाएं, गुण एवं मानदण्ड आदि को जान सकेंगे।

2. व्यवसाय के विभिन्न आयामों तथा इससे सम्बन्धित विभिन्न विद्धानों द्वारा दिये गये विचारों से अवगत हो जायेंगे |

3. व्यवसाय अपने समानार्थी शब्दों यथा व्यापार, पेशा इत्यादि से किस प्रकार भिन्न है, इसको जान सकेंगे |

13.1 प्रस्तावना

हर व्यवसाय की अपनी कुछ विशेष विशेषताएं होती है जिसके कारण उसकी समाज में पहचान बनती है। प्रत्येक व्यवसाय का यह सामान्य गुण है कि वह व्यावसायिक को व्यावसायिक स्तर प्रदान करते हैं। जिससे कि जीविका के साधनों को अपनाया जा सके। व्यवसाय के लिए आवश्यक है कि उसे बौद्धिक एवं तार्किक प्रविधियों के द्वारा विशेष प्रशिक्षण के माध्यम से दैनिक जीवन को बेहतर बनाने के लिए उपयोग में लाया जा सके क्योंकि व्यवसाय में बौद्धिक प्रविधि के साथ-साथ प्रविधि का व्यावहारिक होना अत्यन्त आवश्यक है।

13.2 भूमिका

मानव सभ्यता एवं संस्कृति के प्रारम्भ से ही व्यवसाय का अस्तित्व जरूर रहा होगा क्योंकि बिना विशेष व्यावहारिक तकनीकी के समाज को उन्नत नहीं किया जा सकता। समाज की उन्नति के साथ-साथ सामाजिक

प्राणी अर्थात् मनुष्य भी व्यावहारिक तकनीक से प्रभावित हुआ होगा। वर्तमान समय में इसीलिए एक व्यवसाय को विशेष तकनीकी, ज्ञान एवं निपुणता के आधार पर अपनाया जाता है। इसके अतिरिक्त व्यवसाय के सम्बन्ध में लोगों में कुछ भ्रान्तियां भी विद्यमान है। जिसके कारण बहुत से व्यवसाय अपनी पहचान नहीं बना पा रहे हैं। एक व्यवसाय को अपनी पहचान बनाने के लिए कुछ न कुछ विशेषताओं अथवा मानदण्डों को पूरा करना पड़ता है। जिसका विश्लेषण आगे किया गया है।

13.3 व्यवसाय का अर्थ एवं परिभाषा

प्रोफेशन ;Profession) शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के प्रोफेटेरी से हुई है। जिसका अर्थ है ''सार्वजनिक रूप से घोषणा करना'' या ''प्रतिज्ञा'' करने से लगाया जाता है। तेरहवीं व चैदहवीं शताब्दी में इस शब्द का अर्थ क्रमशः ''धार्मिक परायणता'' तथा ''शूरवीरों की वीरता के आदर्श की ओर परायणता'', के अर्थों में लिया जाता था। वर्तमान समय में प्रोफेशन शब्द से तात्पर्य ''जीविका'' के अर्थों में लिया जाता है।

आधुनिक युग में व्यवसाय शब्द का अर्थ एक संगठित जीविका से लिया जाता है। जिसमे एक विशेष ज्ञान की आवश्यकता पड़ती है तथा कार्यकर्ताओं की निपुणता द्वारा मानवीय जीवन की कुछ अनुभवों का प्रयोग कला के रूप में किया जाता है अर्थात् यह विशेष ज्ञान वैज्ञानिक आधारशिला प्रस्तुत करता है और निपुणता, वैज्ञानिक ज्ञान को किस तरीके से उपयोग में लाया जाये, की ओर इंगित करती है। एक अन्य अर्थ में व्यवसाय से तात्पर्य वृत्ति भी माना जाता है। इसी कारण वैश्यावृत्ति व भिक्षावृत्ति को व्यवसाय की संज्ञा प्रदान की जाती है क्योंकि इसके द्वारा जीविका के साधन प्राप्त किये जाते हैं परन्तु वास्तविक रूप में उपरोक्त वृत्तियों को सामुदायिक मान्यता प्राप्त न होने के कारण व्यवसाय मानना उचित नहीं है।

व्यवसाय एक ऐसा कार्य है जिसका उद्देश्य जीविका उपलब्ध कराना है, जिसमें विशिष्ट ज्ञान एवं निपुणता होती है और उस व्यवहार को करने वाले का व्यवहार दूसरों से भिन्न होता है। जोन्स ब्राउन्स तथा ब्रैडशा के अनुसार व्यवसाय एक वृत्ति है जिसमें उच्चतर शैक्षिक योग्यता, एक डिग्री, डिप्लोमा या सार्टिफिकेट की आवश्यकता होती है। प्रोफेसर गोरे के अनुसार, व्यवसाय को ज्ञान और निपुणताओं, कार्य करने के क्षेत्र, एक आचार संहिता तथा कुछ सीमा तक व्यावसायिक सदस्यों के संगठन के रूप में समझा जा सकता है। कार सैन्डर्सन एवं विल्सन ने अपनी पुस्तक ''द प्रोफेशन'' में व्यवसाय के सम्बन्ध में अपने विचार स्पष्ट करते हुए बताया है कि यह एक बौद्धिक प्रविधि है जिसे विशेष शिक्षण एवं प्रशिक्षण के द्वारा अर्जित किया जा सकता है और जिसका प्रयोग दैनिक जीवन को बेहतर बनाने में किया जा सकता हो। विकेन्डेन ने व्यवसाय को एक विशेष विज्ञान तथा कला माना है, जो कि एक विशेष शैक्षिक प्रक्रिया पर आधारित होती है। जिसका मुख्य उद्देश्य लोगों के हितों में वृद्धि करना है। मौरिस ने व्यवसाय के सम्बन्ध में लिखा है कि यह एक ऐसा व्यापार है जो मनुष्य से मनुष्य के समान व्यवहार करता है और इस प्रकार ऐसे व्यापार से भिन्न है जो कि मनुष्य की बाहरी आवश्यकताओं एवं अवसरों का प्रबन्ध करता है। फ्रीडलैण्डर ने अपनी पुस्तक ''इन्ट्रोडक्शन टू सोशल वेलफेयर'' में व्यवसाय को परिभाषित करते हुए बताया है कि यह एक विशेष योग्यता होती है जिसे बौद्धिक प्रशिक्षण के द्वारा अर्जित किया जाता है और जिससे कर्ता में निपुणता विकसित होती है और इस आधार पर वह स्वतन्त्र एवं उत्तरादायी रूप से उसमें निर्णय करने की क्षमता का विकास होता है। जन एडम्स् ने व्यवसाय की ओर इंगित करते हुए यह बताया है कि एक व्यवसाय किसी न किसी समाजिक संस्था से सम्बन्धित होता है और मुख्य रूप से उन आवश्यक सेवाओं को प्रदान किया जाता है जिससे एक समाज बेहतर अवस्था में पहुंच सके। व्यवसाय व्यक्तिगत अथवा सामूहिक रूप से

विशेष ज्ञान, विशेष व्यवहार तथा विशेष निपुणता पर आधारित होता है। जो कि व्यावसायिक अभ्यास के लिए अति आवश्यक है।

13.4 व्यवसाय के लक्षण एवं मानदण्ड

हर व्यवसाय के अपने गुण होतें हैं। वह सामान्य गुण जो एक जीविका को एक व्यावसायिक स्तर प्रदान करते हैं उनका उल्लेख कई विद्धानों ने किया है। एक व्यवसाय है या नहीं, इस बात पर निर्भर करेगा कि वह ''व्यवसाय'' के मानदण्डों पर किस सीमा तक पूरा उतरता है।

कार सैण्डर्सन एवं विल्सन ने यह विचार प्रकट किया है कि व्यवसाय के लिए आवश्यक है कि उसमें एक बौद्धिक प्रविधि हो जो एक विशेष प्रशिक्षण द्वारा प्राप्त की जा सके तथा जिसका दैनिक जीवन के कुछ पहलुओं में प्रयोग किया जाता हो।

किसी भी स्थापित व्यवसाय में सामान्य पांच गुण पाये जाते हैं- ये पांच गुण निम्नवत् है-

1. विशेष ज्ञान
2. प्रवेश के मानक
3. आचार संहिता
4. व्यवसाय के प्रति सेवा उन्मुख
5. संगठन के द्वारा अनुमोदन

विभिन्न विद्धानों द्वारा व्यवसाय से सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन करने के पश्चात् तथा अपने अनुभवों के द्वारा व्यवसाय के विभिन्न गुणों एवं विशेषताओं को बताया है। इन विशेषताओं तथा गुणों को विस्तृत रूप मे निम्नवत् समझाया गया है:-

कार सैन्डर्सन एवं विल्सन ने व्यवसाय के निम्नलिखित दो गुणों को बताया है:-

1. एक विशेष बौद्धिक प्रविधि, और
2. विशेष प्रविधि का व्यावहारिक प्रयोग

विकेन्डेन के अनुसार व्यवसाय के गुण

विकैन्डेन ने एक व्यवसाय में निम्नलिखित गुणों का होना आवश्यक माना है:-

1. एक विशेष ज्ञान (या विज्ञान) या एक विशेष कला या निपुणता जिस पर व्यवसाय अपना विशेष अधिकार समझे और जिसे पूरे व्यवसाय के प्रयत्नों से प्रसारित किया जा सके,

2. एक शैक्षिक प्रक्रिया जो एक विशेष ज्ञान और कला पर आधारित हो और जिसको क्रमबद्ध करने के लिए उस व्यवसाय का व्यावसायिक समूह अपने को उत्तरदायी समझता हो,

3. इस व्यावसायिक समूह की सदस्यता ग्रहण करने के लिए व्यावसायिक योग्यताओं का एक स्तर हो जिसका आधार चरित्र, प्रशिक्षण एवं प्रमाणित योग्यता हो,

4. आचरण का एक आदर्श जो नम्रता, सम्मान और नैतिक उत्तरदायित्व पर आधारित हो और जो कार्यकर्ता का अपने सेवार्थियों, व्यवसाय के साथियों एवं जनता में सम्बन्ध स्थापित करने में मार्गदर्शन करे,

5. व्यावसायिक साथियों एवं राज्य की ओर से स्थिति की मान्यता,

6. व्यावसायिक समूह का संगठन जिसका उद्देश्य आर्थिक एकाधिकार की उन्नति हो।

ग्रीनवुड के अनुसार व्यवसाय के गुण

ग्रीनवुड ने एक व्यवसाय में निम्न पांच गुणों का होना आवश्यक माना है:-

1 क्रमानुसार सिद्धान्त:- व्यवसाय द्वारा सामान्य एवं विशिष्ट सिद्धान्तों और एक विशेष ज्ञान का विकसित किया जाना।

2 व्यावसायिक विद्धता:- व्यवसाय मे ऐसे विद्धान होने चाहियें जो व्यवसाय के विभिन्न पहलुओं के विषय में गहरा ज्ञान रखते हों, जिन्हें व्यवसाय में प्रभुत्व प्राप्त हो और जिन्हें उस व्यवसाय का विशेषज्ञ कहा जा सकता है।

.3 सामुदायिक अभिमति:- व्यवसाय को समुदाय एवं राज्य का अनुमोदन एवं मान्यता प्राप्त होनी चाहिए और उसे समाज के लिए हितकर समझा जाए।

4 आचार-संहिता:- ऐसे आदर्श एवं व्यवहार करने के नियम जिनका पालन करना व्यवसाय के सदस्यों के लिए अनिवार्य हो। कार्यकर्ता के व्यक्तित्व में एक विशेष स्वाभाव हो और जो उसकी कार्यरीति से पहचाना जा सके।

जॉनसन के अनुसार व्यवसाय के गुण

जॉनसन ने व्यवसाय में निम्न विशेषताओं का होना आवश्यक बताया है:-

1.एक विशेष क्षमता या योग्यता जो एक बौद्धिक प्रशिक्षण द्वारा अर्जित की गई हो, जो निपुणताओं को विकसित करती हो और जिसके लिए स्वतंत्र रूप से एवं उत्तरादायी रूप से निर्णय लेने की शक्ति की आवश्यकता हो,

2.सुस्पष्ट या विशेष प्रविधियां जो एक नियमित और विशिष्ट शैक्षिक पद्धति द्वारा दूसरों तक पहुंचाई जा सकती हों और जो शास्त्रीय शिक्षण के आधार पर ज्ञान एवं निपुणता का प्रयोग करती हों,

3.व्यावसायिक कार्यकर्ता जो सामान्य बन्धनों से सचेत हों और जो उच्च आदर्श और सामान्य हितों की उन्नति करने के लिए एक व्यावसायिक समिति की स्थापना करें,

.4.यह व्यावसायिक समिति सम्पूर्ण व्यवसाय के लिए सेवा के स्तर या मानदण्ड का विकास करे जैसा कि व्यवसाय, की आचार-संहिता द्वारा व्यक्त होता है। यह व्यवसाय समिति विशिष्ट शिक्षा का प्रबन्ध करें और विशिष्ट ज्ञान निपुणता का सार्वजनिक हित के लिए प्रयोग करें,

5.उस व्यवसाय का व्यक्ति जिस प्रकार की सेवा के मानदण्ड या स्तर अपने लिए निर्धारित करता है, उसके लिए व्यवसाय के अन्य सदस्यों के प्रति उत्तरदायित्व का भावना रखता हों।

फ्लेक्सनर के अनुसार व्यवसाय के गुण

अब्राहिम फ्लेक्सनर ने व्यवसाय के छः गुण बताएं हैं:-

1.वैयक्तिक उत्तरदायित्व के साथ ज्ञान और विज्ञान का समावेश,

2.व्यवसाय के सदस्यों को इस बात का पूरा ज्ञान हो कि व्यवसाय सम्बन्धी क्या नवीन ज्ञान सामने आ रहा है और इस नवीन ज्ञान को समझने के लिए निरन्तर सम्मेलन आयोजित किये जाने चाहिए,

3.व्यवसाय को केवल सैद्धान्तिक ही नहीं होना चाहिए, इसका व्यावहारिक रूप भी होना चाहिए,

4.व्यवसाय में एक प्राविधिक ज्ञान की श्रंखला हो और यह प्राविधिक ज्ञान व्यक्तियों को एक विशिष्ट शैक्षिक पद्धति से सिखाया जा सकता है,

5.व्यवसाय को समाज से मान्यता प्राप्त होना चाहिए। व्यवसाय से सम्बन्धित व्यक्तियों मेंे सामूहिक भावना का होना आवश्यक है। व्यावसायिक कार्यकर्ता को अपने कर्तव्यों एवं उत्तरदायित्व को कुशलता से निभाना चाहिए,

6.व्यवसाय का सम्बन्ध साधारण जनता से होना चाहिए, किसी विशेष व्यक्ति या समूह से नहीं। व्यवसाय को सामाजिक उद्देश्यों एवं लक्ष्यों की पूर्ति का साधन बनाने का प्रयास करना चाहिए।

मिलरसन के अनुसार व्यवसाय के गुण

मिलरसन ने व्यवसाय से सम्बन्धित 21 लेखों का अध्ययन करने के पश्चात् पाया कि एक व्यवसाय में निम्नलिखित विशेषताएं पायी जाती है:-

1.सैद्धान्तिक ज्ञान पर आधारित निपुणतायें,

2.प्रशिक्षण तथा वृत्ति का प्रावधान,

3.सदस्यों की सक्षमता का परीक्षण,

4.संगठन व्यवसायिक आचरण संहिता, तथा

5.परोपकारी सेवा।

जॉन एडम्स् के अनुसार व्यवसाय के गुण

जॉन एडम्स् (1987) ने परियोजना प्रबन्धन पर दक्षिण अस्ट्रेलिया में हुई राष्ट्रीय गोष्ठी में इन विशेष गुणों को बताया है -

1.विशेष ज्ञान:- व्यवसाय का पहला गुण, एक व्यवसाय अवधारणा एवं सिद्धान्तों पर आधारित होता है जोकि उसे अद्वितीय बनाता है। जिसे संकेतों तथा प्रलेखों के द्वारा औपचारिक शिक्षा के माध्यम से सीखा जाता है। अधिकतर व्यवसायों में विषेष ज्ञान को स्नातक स्तर से पढ़ाया जाता है। यथा विधि में विषेष ज्ञान को अर्जित करने के लिए आवष्यक है उसकी शिक्षा विधि विद्यालय द्वारा ग्रहण की गई हो। किसी के लिए डिग्री को ग्रहण करना ही मात्र उद्देश्य नहीं होता है बल्कि इससे यह भी संकेत मिलता है कि उसने व्यवसाय जो कि विशेष सिद्धान्तों पर आधारित किया है। प्रत्येक व्यवसाय के लिए कम से कम डिग्री का ग्रहण किया जाना आवश्यक है जो कि व्यवसाय के सिद्धान्तों को आगे की ओर प्रोत्साहित करता है। कई व्यवसायों में अलग-अलग स्तर पर डिग्रियां प्रदान की जाती हैं और व्यवसाय के साथ विषेष क्षेत्र को भी स्पष्ट करता है।

2.प्रवेश के मानक:- व्यवसाय को जीविका के रूप में अपनाने के लिए आवश्यक है कि प्रवेश के मानकों को परिभाषित किया जाये। प्रवेश के मानक उस स्थान को परिभाषित करते है जहां पर से जीविका प्रारम्भ की जाती है। सभी व्यवसाय लोगों के द्वारा स्वीकार किये जाने के पश्चात् ही कोई व्यक्ति किसी भी व्यवसाय का सदस्य बन

सकता है। विधि, अभियत्रिकी चिकित्सन लेखा, शिक्षण इत्यादि के मानक परिभाषित है। ये सभी मानक शिक्षा को ग्रहण करने, अनुभव को प्राप्त करने प्रशिक्षणों के द्वारा ज्ञान को अर्जित करने और व्यवसाय में एक नये कर्ता के रूप में शुरू करने इत्यादि में परिभाषित मानकों को अपनाया जाता हैं।

3.आचार संहिता:- अधिकतर व्यवसायों की आचार संहिताएं अथवा नीति मानक समान होते है, आचार संहिता का मुख्य उद्देश्य यह स्पष्ट करता है कि उपयुक्त व्यवहार के द्वारा व्यवसाय का संचालन किस प्रकार से किया जायेगा जो कि अस्वीकार योग्य व्यवहार को अलग करता है। इस आचार संहिता अथवा किसी भी व्यवसाय केा आवष्श्क सीमाओं में वैधानिक नियन्त्रण स्थापित करती है।

4.व्यवसाय के प्रति सेवा उन्मुख:- सेवा उन्मुख वास्तव में व्यवसाय के सदस्यों के गुणों की ओर इंगित करता है। इन गुणों के द्वारा सदस्य व्यवसाय को स्वयं बेहतर स्थिति में स्थापित करते हैं। व्यावसायिक समय, धन तथा ऊर्जा के द्वारा वचनों से बंधे होते हैं कि वे अपने विचारों एवं अनुभवों को प्रदर्षित करेगें तथा अपने विशेष ज्ञान का उपयोग करते हुए व्यवसाय के प्रशासन में अपना योगदान देंगे। एक व्यावसायिक की वचनबद्धता के द्वारा ही व्यवसाय नियोक्ता से ज्यादा सुदृढ़ होता है अधिकतर स्थिति में व्यावसायिक, व्यवसाय के मानकों और संहिता का उल्लंघन होने पर रोजगार के संगठनों को छोड़कर अन्य किसी संगठन से जुड़ जाते हैं।

5.संगठन का अनुमोदन:- एक अधिकृत संस्था अथवा अनुमोदित संगठन के कई उद्देश्य होते हैं। इसके अपने निर्धारित मानक अथवा नियमन संस्था होती है। इसका उद्देश्य विचारों का आदान-प्रदान एवं प्रकाशित करना, अनुसंधान को प्रोत्साहित करना, कार्यक्रमों को विकसित करना इत्यादि।

जॉन एडम्स् ने एक व्यवसाय की निम्नलिखित विशेषताओं को बताया है जो इस प्रकार है -

- व्यवसाय, व्यावसायिक रूप से स्थापित सामाजिक संस्थाओं से सम्बन्धित होते हैं और मुख्य रूप से उन आवश्यक सेवाओं को बनाये रखते हैं अथवा समाज को प्रदान की जाती है,
- प्रत्येक व्यवसाय किसी न किसी विशेष आवश्यकता अथवा कार्य से सम्बन्धित होती है। यथा शारीरिक एवं सांवेगिक स्वास्थ्य को बनाये रखना, स्वतंत्रता एवं अधिकारों का संरक्षण करना, सीखने के अवसरों में वृद्धि करना इत्यादि,
- व्यवसायद सामूहिक रूप से अथवा व्यक्तिगत रूप से विशेष ज्ञान, विशेष व्यवहार एवं निपुणता पर आधारित होता है जो कि व्यवसाय अभ्यास के लिए आवश्यक है। यथा ज्ञान, व्यवहार और निपुणता गैर व्यावसायिकों द्वारा प्राप्त नहीं होते हैं,
- सेवार्थी की सेवाओं में व्यवसाय के सदस्य निर्णय की प्रक्रिया में शामिल होते हैं। ये सभी निर्णय स्थापित ज्ञान, सिद्धान्त अवधारणाओं द्वारा प्रेरित होते हैं तथा अन्य सम्बन्धित निर्णयों अथवा दशाओं पर सम्भावित प्रभाव पड़ता है,
- व्यवसाय एक से अधिक अन्य शाखाओं से बंधे रहते हैं और इसके आधार पर अपने स्वयं के ज्ञान एवं निपुणता को विकसित करते हैं,
- व्यवसाय एक अथवा एक से अधिक व्यावसायिक संगठनों को संचालित करता है। जो कि सामाजिक जवाबदेही की सीमाओं से बंधे होते हैं और व्यवसाय के वास्तविक कार्य को स्वायत्ता प्रदान करते हैं तथा

उचित दशाओं का निर्माण करते हैं (जैसे प्रवेष, शैक्षिक मानक, परीक्षा एवं लाइसेंस, जीविका के आधार, आचार संहिता एवं निष्पादन के मानक व्यवसायिक शाखा),

- व्यवसाय प्रवेश के निष्पादन के मानकों तथा उसके आगे चलने की मान्यताओं से सहमत होते हैं,
- व्यावसायिक विद्यालयों अथवा संस्थाओं में समान्यतया व्यवसाय के लिए लोगों को तैयार करने सम्बन्धित कार्यक्रमों का निर्माण किया जाता है,
- व्यवसाय की मान्यता के लिए जन समूह में आस्था एवं विष्वास का स्तर ऊँचा होना चाहिए तथा व्यक्तिगत स्तर पर अभ्यासकर्ता से यह आशा की जाती है कि वह उपलब्ध सेवाओं के अतिरिक्त प्रयासों द्वारा सेवा देने का कार्य करेगा,
- व्यक्तिगत अभ्यासकर्ता में सुदृढ़ एवं मजबूत सेवा करने की प्रेरणा तथा जीवन पर्यन्त उसको निभाने की इच्छाशक्ति होनी चाहिए जो कि एक विशेष गुण है,
- व्यक्तिगत स्तर पर अभ्यास करने का अधिकार, व्यावसायिक अभ्यास के सामथ्र्य की जवाबदेही, तथा
- व्यावसायिक इस बात को स्वीकार करते हैं कि व्यवसाय के प्रति तथा लोगों के प्रति जवाबदेह हैं।

मिरॉन ल्यूबेल के अनुसार व्यवसाय के गुण

मिरॉन ल्यूबेल ;1978द्ध ने एक व्यवसाय की निम्नलिखित विशेषताओं का उल्लेख किया है:-

1 क्रमानुसार सिद्धान्त:- व्यावसायिक के पास ज्ञान का भण्डार होता है जो कि सिद्धान्तों, कार्यात्मक प्रक्रियाओं पर आधारित है तथा औपचारिक अधिकार शिक्षा को प्रेरित करता है।

2 प्राधिकार:- सेवार्थी को प्रदान की जाने वाली सेवाओं की प्रकृति एवं उसके विस्तार पर व्यावसायिक का नियन्त्रण होता है क्योंकि प्रदान की जाने वाली सेवाओं की गुणवत्ता को समान्यतयः सेवार्थी समझने में असमर्थ होते हैं।

3 सामुदायिक अनुमोदन:- व्यावसायिक को प्राप्त होने वाली डिग्री की प्रमाणिकता सामुदायिक अनुमोदन के द्वारा प्रभावित होती है अर्थात् व्यवसाय को सामुदायिक अनुमोदन प्रदान होना आवश्यक है

4 आचार संहिता:- आचार संहिता, व्यवसाय में निहित व्यवहारों के मानक होते हैं जोकि व्यवस्थित तरीके से कार्य करने की पद्धति को स्पष्ट करते हैं जिसके आधार पर लोगों की सहायता अथवा सेवा प्रदान करने का प्रयास किया जाता है।

5 संस्कृति:- व्यवसायकर्ता अपने कैरियर के प्रति प्रतिबद्ध होते हैं तथा व्यक्तिगत रूप से अपने कार्यों को पूर्ण करने का प्रयास करते हैं तथा उन्हें कार्य से सन्तुष्टि, मौद्रिक लाभ के अतिरिक्त आदर एवं सम्मान के लिए भी करते हैं।

उपरोक्त व्यवसाय के गुणों एवं विशेषताओं का अध्ययन करने के पश्चात् निम्नलिखित सामान्य गुण एवं विशेषतायें एक व्यवसाय में पाई जाती है, जो कि निम्नवत् है:-

(i)उत्तरादायित्व की भावना:- व्यवसायिक सेवार्थी से सम्बन्धित महत्वपूर्ण मामलों केा समझने का प्रयास करते हैं और इसीलिए वे सहायता एवं उत्तरदायित्व से बंधे हुए होते हैं। दी हुई अन्तरनिहित बाध्यता में व्यवसायिक कार्य

समान्यतया उन विशेष परिस्थितियों में जहां देखभाल में कभी अपर्याप्त कौशल अथवा अनुचित आचार संहिताएं सेवार्थी बुरी तरह से नष्ट करती है। अतः व्यावसायिक का महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व होता है कि सेवार्थी को समुचित स्थान देते हुए उससे सम्बन्धित मामलों को समझे और समाधान प्रस्तुत करे।

(ii)जवाबदेही:- व्यावसायिक, जो कि सेवार्थी को सहायता प्रदान करता है, का उत्तरदायित्व है कि वह सेवार्थी को दी जाने वाली सेवाओं की गुणवत्ता के प्रति जवाबदेह हो।

(iii)सैद्धान्तिक एवं विशेषीकृत ज्ञान:- व्यावसायिक द्वारा प्रदान की जाने वाली विशेष सेवाएं सिद्धान्त, ज्ञान एवं निपुणता पर आधारित होता है। सामान्यता व्यवसाय को समझने के लिए बाह्य कार्यक्षमता की आवश्यकता होती है। कभी-कभी विशेषीकृत ज्ञान एवं निपुणता के द्वारा ही तकनीकियों एवं उपकरणों का प्रयोग किया जाता है।

(iv)स्वायत्ता:- व्यावसायिक पूर्ण उत्तरदायित्व के साथ अपने कार्यों पर पूरा नियन्त्रण रखते हैं। व्यावसायिक सेवार्थी के कार्य को निर्देशित एवं आवश्यक शर्तों केा परिभाषित करते हैं।

(v)सेवार्थी कों महत्ता:- व्यवसायिक कार्यों में संलग्न व्यावसायिक, व्यापारियों की तरह ग्राहक चयन करने के स्थान पर सेवार्थी के चयन में किसी भी प्रकार का विभेद नहीं करते हैं।

(vi)प्रत्यक्ष कार्यात्मक सम्बन्ध:- व्यावसायिक सामान्यतयः अपने सेवार्थी के साथ प्रत्यक्ष कार्यात्मक सम्बन्ध बनाते हुए कार्य करते हैं। इसमें किसी के मध्यस्थता की आवश्यकता नहीं पड़ती है।

(vii)नैतिक बाध्यता:-अन्य विशेषताओं के अतिरिक्त व्यवसाय के लिए आचार संहिता एक अनिवार्य शर्त हैं। व्यावसायिक विशेष आचार संहिता के द्वारा बंधे हुए होते हैं। व्यावसायिक सामान्य आचार संहिता अथवा नैतिक मूल्यों द्वारा बिना किसी आपसी मतभेद एवं समझौते के सेवार्थी हितों के ध्यान में रखते हुए लाभ प्रदान करते हैं।

(viii) विशेष दक्षता पर आधारित:- एक व्यवसाय में व्यावसायिक का रोजगार एवं सफलता विशेष दक्षता पर आधारित होता है और स्वैच्छिक सम्बन्धों के आधार पर ही अपने को स्थापित करते हैं बजाय इसके कि भ्रष्टाचार में लिप्त है। इसलिए एक व्यावसायिक सेवार्थी को विशेष दक्षता के आधार पर ही आकर्षित होता है। इस विशेषता के न पाये जाने पर उत्तरादायित्व, जवाबदेही, नैतिक बाध्यता सम्बन्धी मूल निरर्थक होते हैं।

व्यवसाय से मिलते-जुलते कई समनार्थी कार्य समाज में किये जाते हैं। जिससे लोगों में भ्रान्तियां उत्पन्न होती है। इनमें से कुछ कार्यों को व्यवसाय से अन्तर स्थापित करने का प्रयास किया गया है।

13.5 व्यापार एवं व्यवसाय में अन्तर

व्यापार और व्यवसाय एक दूसरे के पूरक हैं परन्तु दोनों में अन्तर पाया जाता है। यह अन्तर निम्नवत् हैः-

1.न्यूनतम अर्हता:- व्यापार को शुरू करने के लिए किसी भी प्रकार की योग्यता/न्यूनतम अर्हता की आवश्यकता नहीं होती है जबकि व्यवसाय के लिए न्यूनतम तकनीकी अथवा शैक्षिक अर्हता का होना अनिवार्य है।

2.पूंजी:- व्यापार को शुरू करने अथवा बनाये रखने के लिए पर्याप्त मात्रा में पूंजी आवश्यक है जबकि व्यवसाय में वास्तविक पूंजी से तात्पर्य सामथ्र्य तथा विशेष ज्ञान से है।

3.उद्देश्य:- व्यापार का मुख्य उद्देश्य लाभ को अर्जित करना है जबकि व्यवसाय में सेवा को केन्द्र माना जाता है तथा लाभ का स्थान गौड़ है।

4.जोखिम:- व्यापार मे जोखिम की सम्भावना सदैव विद्यामान होती है जबकि व्यवसाय में न्यूनतम जोखिम अथवा न के बराबर जोखिम होता है।

5.गोपनीयता:- व्यापार में किसी भी चीज का हस्तांतरण करने समय गोपनीयता अनिवार्य नहीं है जबकि व्यवसाय सेवार्थी से सम्बन्धित सभी चीजों में गोपनीयता को बनाये रखता है।

6.विशेषीकरण :- व्यापार को शुरू करते समय किसी भी प्रकार की विशेषीकृत ज्ञान का होना आवश्यक नहीं है जबकि व्यवसाय के किसी संस्था से जुड़ते समय विशेषीकृत ज्ञान का होना आवश्यक है।

7.आचार संहिता:- व्यापार के लिए आचार संहिता का होना जरूरी होना नहीं है जबकि व्यवसाय के नियमन के लिए आचार संहिता का होना आवश्यक है।

8.विज्ञापन:- सामान्यतः व्यापार में उत्पाद के विक्रय को बढ़ाने के लिए विज्ञापन का सहारा लिया जाता है जबकि व्यवसाय में आचार संहिता के अधार पर विज्ञापन किया जाना पूर्णतया निषेध है।

9.कार्यकुशलता:- व्यापार में कार्यकुशलता का आंकलन केवल लाभ के आधार पर किया जाता है जबकि व्यवसाय में किसी भी स्थिति मे प्रदान की जाने वाली सेवाओं की गुणवत्ता का आधार कार्यकुशलता होता है।

10.हस्तांतरण:- व्यापार को सरलता से एक से दूसरे को हस्तांतरित किया जा सकता है जबकि व्यवसाय में शामिल विशेषीकृत ज्ञान को किसी अन्य व्यक्ति को हस्तांतरित नहीं किया जा सकता है।

13.6 पेशा और व्यवसाय में अन्तर

पेशा (Occupation)तथा व्यवसाय (Profession) एक दूसरे के पूरक है। Occupation और Profession समान है परन्तु इन दोनों के मध्य अन्तर पाया जाता है। Occupation और Profession शब्द में अन्तर को समझने के लिए एक उदाहरण के द्वारा इसे आसानी से समझ सकते हैं - एक व्यवसाय के लिए गहन अध्ययन तथा विशेषीकृत ज्ञान का होना जरूरी है। जबकि दूसरी ओर Occuapation के लिए गहन प्रशिक्षण का होना जरूरी नहीं है तथा व्यक्ति के पास विशेषीकृत ज्ञान का होना आवश्यक नहीं है। एक व्यवसाय ;Professionद्ध को एक Occuapation माना जा सकता है जब एक व्यक्ति को विशेष ज्ञान और उसकी विशेष निपुणता का भुगतान किया जाये। डाक्टर, इंजीनियर, वकील, पत्रकार, वैज्ञानिक तथा अन्य ऐसे कई लोगों को ;Professionद्ध व्यावसायिक श्रेणी में रखा जाता है। जबकि दूसरी ओर Occupation में ऐसे लोग होते हैं, जिन्हें उनके ज्ञान के आधार पर भुगतान नहीं किया जाता है बल्कि वे क्या उत्पादित ;Produceद्धकरते हैं। ड्राइवर, क्लर्क इत्यादि को Occupation में शामिल किया जाता है। Profession में व्यक्ति को आंतरिक मामलो में स्वतंत्रा एवं स्वायत्ता प्राप्त होती है जबकि Occupation में स्वायत्ता नहीं होती है। Profession आचार संहिताओं द्वारा निर्देशित होता है जबकि Occupation में आचार संहिताओं का होना आवश्यक नहीं है।

13.7 सारांश

सारांश के रूप में व्यवसाय का मुख्य उद्देश्य समाज में लोगों को उनकी आवश्यकता के अनुरूप व्यावसायिक सेवा प्रदान करना है। जिससे कि आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके। व्यवसाय में ज्ञान और विज्ञान का समावेश होता है तथा नवीन ज्ञान को विशिष्ट शैक्षिक पद्धति के द्वारा सिखाया जाता है। व्यवसाय को सामाजिक मान्यता प्राप्त होना आवश्यक है, क्योंकि इसके द्वारा सामाजिक उद्देश्यों एवं लक्ष्यों की पूर्ति की जाती है।

13.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

(1) व्यवसाय से आप क्या समझते है?

(2) व्यवसाय के मानदण्डों का उल्लेख कीजिए।

(3) व्यवसाय का अर्थ एवं परिभाषा स्पष्ट कीजिए।

(4) विकैन्डेन के अनुसार व्यवसाय के गुणों को समझाइये।

(5) व्यापार और व्यवसाय में अन्तर अन्तर स्पष्ट कीजिए।

(6) व्यवसाय और पेशा में अन्तर अन्तर स्पष्ट कीजिए।

(7) व्यवसाय की विशेषताओं को समझाइये।

(8) जाॅन एडम्स् के द्वारा दिये गये व्यवसाय के गुणों का उल्लेख कीजिए।

(9) ल्यूबेल द्वारा दिये गये व्यवसाय के गुणों का उल्लेख कीजिए।

(10) व्यवसाय पर अपने विचारों को व्यक्त कीजिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. Friedlander, W. A. Indtrodution of Social Welfare, Prentice Hall, INC. New York, 1995.
2. Thomas P.T.: Profession Traning in Social Work, in Sugata Das Gupta (ed) "Towards in Pilosophy of Social Work in India Popular Books Services, New Delhi, 1967.
3. Ahamad, Mirza Raffiuddin, Samaj Kayra: Darshan evam Pranaliyan, Repid Books Services, Lucknow, 1969.
4. Mishra, P.D. Social Work Profession in India, New Royal Book Co., Lucknow, 2004.
5. Sudan K.S., Samaj Karya: Siddhant evam Abhyas, N.S. Publications Lucknow, 2011.
6. Mishra, P.D., Samaj Karya: Itihas, Darshan evam Pranaliyan, New Royal Book Co. Lucknow, 2004.
7. Singh, D.K., and Bhartiya, A.K., Social Work: Philosophy and Methods, New Royal Book Co. Lucknow, 2009.
8. Shastri R.R., Social Work Tradition in India, Welfare Forum and Research Organization, Varanasi, 1986.
9. Dinitto, D.M. and Mcneece, C.A. Social Work Issues and Opportunities: In a Challenging Profession, LYCEUM Books INC, Chicago, 2008.
10. O.Hare, Thomas, Essential Skills of Social Work Practics: Assesment Intervetion Evaluation LYCEUM Books INC, Chicago, 2009.
11. Adams, R.; Dominelli, L. and Payne, M.; Social Work: Themes, Issues and Critical Debates, Second edition (ed), Palgrave, New York, 1998.

ईकाई-14

समाज कार्य :एक व्यवसाय के रूप में

इकाई की रूपरेखा

14.0 उद्देश्य

14.1 प्रस्तावना

14.2 भूमिका

14.3 समाज कार्य व्यवसाय का अर्थ एवं परिभाषाएं

14.4 समाज कार्य व्यवसाय की विशेषताएं

14.5 सारांश

14.6 अभ्यास प्रश्न

14.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

14.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप -

1. समाज कार्य व्यवसाय को व्यावसायिक स्तर पर आने वाली कठिनाईयों को स्पष्ट करना है |
2. समाज कार्य व्यवसाय ने व्यावसायिक स्तर को प्राप्त किया है अथवा नहीं ,यह भी जान सकेंगे |

14.1 प्रस्तावना

समाज कार्य व्यवसाय का उद्देश्य मानव कल्याण के उद्देश्य की प्राप्ति करना है। समाज कार्य व्यवसाय में व्यावसायिक समाज कार्यकर्ता द्वारा विशेष ज्ञान एवं निपुणता तथा विशिष्ट प्रणालियों का प्रयोग करते हुए समाज में व्यक्ति, समूह अथवा समुदाय की समस्याओं अथवा आवश्यकताओं को पूरा करने का प्रयास करता है। समाज कार्य व्यवसाय की मान्यता को लेकर भी वाद-विवाद है क्योंकि समाज कार्य व्यवसाय पूर्ण रूप से व्यावसायिक है कि नहीं यह विश्वास दिलाने में अभी तक असमर्थ रहा है।

14.2 भूमिका

मानव सभ्यता एवं संस्कृति के विकास के प्रारम्भ से ही समाज कार्य का भी उद्भव माना जाता है। ऐसा माना जाता है कि प्रत्येक समाज और युग में असहाय, निर्धन एवं निराश्रित व्यक्ति रहें है। जिन्हें किसी न किसी प्रकार की सहायता की आवश्यकता रही होगी। इन आवश्यकताआंे की पूर्ति हेतु समाज का कोई न कोई सदस्य सहायता प्रदान करता रहा है। इसके पीछे चाहे धार्मिक भावना, परोपकार की भावना अथवा पाप एवं पुण्य की भावना रही हो। इसी भावना से प्रेरित होकर के लोगों ने आवश्यकताग्रस्त व्यक्ति की सहायता संस्थागत रूप से करना प्रारम्भ कर दिया। जिसने बाद में एक व्यवसाय का रूप धारण कर लिया।

14.3 समाज कार्य व्यवसाय का अर्थ एवं परिभाषा

समाज कार्य एव व्यावसायिक सेवा है जो वैज्ञानिक ज्ञान एवं मानव सम्बन्धों की निपुणता पर आधारित है। यह व्यक्तियों को अकेले या समूह या समुदाय में सहायता करता है ताकि वे सामाजिक व वैयक्तिक संतुष्टि एवं स्वतंत्रता प्राप्त कर सके। फ्रीडलैण्डर ने स्पष्ट रूप से कहा है कि समाज कार्य एक व्यवसाय है। सामान्यता व्यवसाय के अन्तर्गत औषधि, कानून, प्रौद्योगिकी को सम्मिलित करते है और समाज कार्य ने यह रूप किस प्रकार से प्राप्त किया है अथवा उन विशेषताओं को जो इसे व्यवसाय का स्वरूप प्रदान करती है, किस प्रकार प्राप्त किया, यह चर्चा का विषय बन गया है। समाज कार्य का व्यावसायिक रूप उस समय से प्रारंभ हुआ जब अनुभव किया गया कि वर्तमान सामाजिक समस्याओं को सुलझाने के लिए विशेष ज्ञान एवं निपुणताओं की आवश्यकता है। सहानुभूति, सद्भावना, प्रेम आदि गुणों के साथ-साथ विभिन्न निपुणतायें होने पर ही इन समस्याओं से निपटा जा सकता है। इन निपुणताओं तथा ज्ञान का विकास प्रशिक्षण के द्वारा ही सम्भव है क्योंकि लोगों की सहायता करना ही सामाजिक कार्य है। अतः जो लोग इसमें लगे है उन्हें उनकी सेवा के बदले में भुगतान किया जाये।

समाज कार्य के कई विशेषज्ञों ने समाज कार्य के व्यावसायिक रूप पर अपने मत प्रकट किये है-

प्रोफेसर ब्राउन के अनुसार किसी भी जीविका को तब तक व्यवसाय नहीं कहा जा सकता है जब तक उसमें ज्ञान और विज्ञान दोनों का समावेश न हो। प्रोफेसर ब्राउन का मत है कि समाज कार्य में वह सभी छः गुण विद्यमान है जिनका व्यवसाय में होना आवश्यक है। फ्लेक्सनर ने बताया है कि विशेष रूप से छठा गुण समाज कार्य में पूर्ण रूप से विद्यमान है।

कोहेन ने समाज कार्य की व्यावसायिक स्थिति का उल्लेख करते हुए ध्यान आकर्षित किया है कि पूर्व में अमेरिका में समाज कार्य अपनी किशोरावस्था में है, जो कि एक सन्तोषजनक व्यावसायिक स्तर प्राप्त कर सका है। कोहेन के अनुसार समाज कार्य ने पिछले कई वर्षों से अत्यधिक उन्नति की है, परन्तु अभी तक समाज को पूर्ण रूप से यह विश्वास दिलाने में असफल रहा है कि वह व्यक्ति जो समाजकार्य की शिक्षा व प्रशिक्षण प्राप्त किये हो, वह उन व्यक्तियों से अच्छा कार्य कर सकता है, जो शिक्षण एवं प्रशिक्षण प्राप्त नहीं है।

कोहेन के अनुसार समाज कार्य को व्यावसायिक स्तर प्राप्त करने में कई प्रकार की कठिनाईयों का सामना करना पड़ रहा हैः-

1. जो कार्य समाज कार्य करता हैं, उसके प्रति सभी अच्छे स्वाभाव वाले व्यक्ति उत्सुक रहे हैं। प्रशिक्षित होना या न होना उनके लिए कोई अर्थ नहीं रखता। समाज में इस प्रकार की भावना होते हुए भी बहुत अधिक व्यक्ति ऐसे हैं जो यह नहीं मानते कि व्यावसायिक कार्यकर्ता के लिए एक विशेष प्रकार की वैज्ञानिक शिक्षा, प्रशिक्षण, अनुभव, बुद्धि या एक विशेष व्यक्तित्व की आवश्यकता होती है। जबकि यह आवश्यक नहीं कि वह हर व्यक्ति, जिसके हृदय में दया की भावना है, वह उसी विधि से कार्य करेगा, जैसे किया जाना चाहिये।

2. समाज कार्य में संघर्ष एवं वाद-विवाद का होना दूसरी कठिनाई है। इसी वाद-विवाद के कारण समाज कार्य के क्षेत्र की सीमा अभी तक पूर्ण रूप से निर्धारित नहीं की जा सकी है।

3. समाज कार्य का उद्देश्य मानव कल्याण है जिसमें अन्य व्यवसायों का भी योगदान होता है। इसी कारण कुछ व्यक्तियों को समाज कार्य की आवश्यकता में ही संदेह होने लगता है और वह समाज कार्य एवं अन्य व्यवसायों में अन्तर नहीं कर पाते।

फ्रीडलैण्डर ने व्यवसायों की शिक्षा के विकास के 3 चरणों का उल्लेख किया हैः-

1. अनुभवी अध्यापकों एवं अभ्यासकर्ताओं की देखरेख में प्रशिक्षण,

2. शिक्षा के लिए शिक्षा संस्थानों की स्थापना,

3. विश्वविद्यालयों के द्वारा व्यावसायिक शिक्षा संस्थाओं को मान्यता देना और उन्हें अपने शैक्षिक एवं शैक्षिक कार्यक्रम का भाग बनाना।

विभिन्न समाज कार्य के विद्धानों द्वारा व्यक्त किये गये विचारों एवं अध्ययनों के आधार पर जिन गुणों एवं विशेषताओं का उल्लेख किया गया है उसके आधार पर यह देखना समीचीन होगा कि समाज कार्य में कौन से गुण और विशेषताएं हैं, जो समाज कार्य को एक व्यवसाय की संज्ञा प्रदान कर सके। इन विशेषताओं एवं गुणों को व्यावसायिक दृष्टिकोण से निम्नलिखित रूप में संदर्भित किया जा सकता है:-

1. क्रमानुसार सिद्धान्त:- समाज कार्य की व्यावसायिक सेवा वैज्ञानिक ज्ञान और विशेष कला (निपुणता) पर आधारित है। इस ज्ञान का बहुत बड़ा भाग अन्य सामाजिक विज्ञानों से लिया गया है। इस ज्ञान का शेष भाग समाज कार्य के अपने अभ्यास के आधार पर विकसित किया गया है। समाज कार्य की प्रणाली समाज कार्य अनुसंधान का अभ्यास सामाजिक समस्याओं के अध्ययन करते समय होता है। समस्याओं के समाधान में ज्ञान का प्रयोग भी होता है और परीक्षण भी। इसी कारण समाज कार्य का ज्ञान व्यावहारिक और वैज्ञानिक रूप ग्रहण करता है। इस ज्ञान का व्यावहारिक प्रयोग इसे विशेष कला का रूप भी देता है। यह विशेष कला (निपुणता) समाज कार्य की व्यावसायिक सेवा का आधार बनती है। यह विशेष निपुणता बौद्धिक प्रशिक्षण द्वारा अर्जित की जा सकती है और व्यावसायिक कार्यकर्ताओं में योग्यता का विकास करती है। इसके अतिरिक्त जो भी नया ज्ञान सामने आता है वह साहित्य एवं सम्मेलनों के माध्यम से कार्यकर्ताओं तक पहुंचाया जाता है। समाज कार्य में निम्न प्रमुख क्षेत्रों का ज्ञान कराया जाता हैः-

- मानव व्यवहार तथा सामाजिक पर्यावरण:- व्यक्तित्व, इसके कारक, सिद्धान्त, सामाजिक पक्ष, मनोचिकित्सकीय पक्ष, मानव सम्बन्ध, समूह, सामाजिक संस्थाएँ, समाजीकरण, सामाजिक नियंत्रण, पर्यावरण, प्रौद्योगिकी आदि।

- समाज कार्य के क्षेत्र:- बाल विकास, महिला सशक्तिकरण, युवा कल्याण, वृद्धों का कल्याण, श्रम कल्याण, ग्राम्य विकास नगरीय विकास, अनुसूचित एवं जनजातीय कल्याण, परिवार कल्याण, सामाजिक सुरक्षा, अपराधी सुधार, आदि।

- सामाजिक समस्यायें:- अपराध, बाल अपराध, मद्यपान, मादक द्रव व्यसन, भिक्षावृत्ति, वैश्यावृत्ति, बेराजगारी, जातिवाद, सम्प्रदायवाद, भ्रष्टाचार, राष्ट्रीय एकीकरण आदि।

- समाज कार्य के विशिष्ट सिद्धान्त:- वैयक्तिकरण का सिद्धान्त, स्वीकृति का सिद्धान्त, सेवार्थी के आत्म निश्चय का सिद्धान्त, गोपनीयता का सिद्धान्त, आत्मप्रकटन का सिद्धान्त आदि।

व्यावसायिक समाज कार्यकर्ता को मानव व्यवहार का समुचित ज्ञान होता है। उसमें सुनने तथा अवलोकन करने की अभूतपूर्व क्षमता होती है। उसमें परानुभूति की योग्यता होती है। उसमें सेवार्थी की भावनाओं को समझने की क्षमता होती है। वह सेवार्थी की योग्यता, गरिमा एवं महानता को स्वीकार करता है। उसका यह दृढ़ विश्वास है कि व्यक्ति में समस्या समाधान की क्षमता होती है केवल उसे इसके बारे में जागरूक करना होता है।

2. विशेष प्रणालियां एवं प्रविधियां:- समाज कार्य का उद्देश्य मानव कल्याण हैं, जिसमें अन्य व्यवसाय भी रूचि रखते हैं, परन्तु समाज कार्य की प्रणालियां एवं प्रविधियां इसे अन्य व्यवसायों से अलग करती हैं। जिसके उद्देश्य समान हो सकते हैं परन्तु कार्यरीतियां अलग है। समाज कार्य की अपनी विशेष प्रणालियां हैं जो इसकी अपनी विशिष्टता है। समाज कार्य के अभ्यास की अपनी विशेष प्रविधियां हैं और इस प्रकार व्यवसाय के इस मानदण्ड पर भी समाज कार्य पूरा उतरता है। अभ्यास करने की यह प्रविधियां एवं नियम विशेष शिक्षा पद्धति द्वारा दूसरों को सिखाए जा सकते हैं और इनका व्यावहारिक प्रयोग किया जा सकता है। समाज कार्यकर्ता में निपुणताओं का विकास शिक्षण तथा प्रशिक्षण द्वारा किया जाता है। समाज कार्यकर्ता कार्यक्रम की निपुणता द्वारा ही सेवार्थी के साथ उद्देश्यपूर्ण स्थापित करता है तथा किसी प्रकार्यात्मक समझौते पर पहुँचता है। वह सामाजिक स्थितियों के विश्लेषण में निपुण होती है। उसमें व्यक्तियों एवं समूहों की भावनाओं को समझने तथा उनसे निपटने की क्षमता पाई जाती है। वह सेवार्थी को आत्मनिर्भर बनाने में निपुण होती है। वह समुदाय तथा संस्था के स्रोतों एवं साधनों को समयानुसार उपयोग में लाता है। उसमें सबसे बड़ी निपुणता सम्बन्धों के रचनात्मक उपयोग की होती है। वह आत्मबोधन, प्रत्यक्षीकरण, समस्या विश्लेषण, व्यावसायिक सम्बन्धों का प्रयोग तथा निदान व उपचार के तरीकों के उपयोग में दक्ष होता है। कार्यकर्ता वैयक्तिक तथा सामूहिक आत्मा के चेतना, जागरण, संगठन तथा नियोजन, प्रति व्यवस्था निर्माण तथा प्रशासनिक प्रविधियों का प्रयोग करता है।

3. समाज कार्य की प्रणालियाँ तथा प्रविधियाँ:- वैयक्तिक समाज कार्य, सामूहिक समाज कार्य, सामुदायिक संगठन, समाज कल्याण प्रशासन, सामाजिक क्रिया तथा समाज कार्य शोध।

समाज कार्यकत्र्ता के पास 3 प्रमुख यंत्र होते है

- स्वयं का प्रयोग,
- कार्यक्रम नियोजन, और
- सेवार्थी के साथ सम्बन्ध।

4. समाज कार्य की शैक्षिक पद्धति:- समाज द्वारा मान्यता प्राप्त मुख्य व्यवसायों की शिक्षा के विकास में तीन चरण रहें हैं। समाज कार्य की शिक्षा के विकास का अध्ययन करने से पता चलता है कि सभी देशों में इसकी शिक्षा के विकास में भी यही तीन चरण रहे हैं। इसकी शिक्षा के लिए शिक्षण संस्थाओं की स्थापना होती आई है और हर देश में ऐसी शिक्षण संस्थाओं में समय के साथ वृद्धि हुई है और ऐसी शिक्षण संस्थाएं या तो विश्वविद्यालय की अध्यापन प्रणाली एवं पाठ्यक्रम का भाग बनकर विकसित हुई हैं या इन्हें विश्वविद्यालय द्वारा स्नातक, स्नात्कोत्तर, पी0 एच-डी0 एवं डी0लिट0 स्तर की शिक्षा प्रदान करने के लिए मान्यता प्राप्त है। यह शिक्षा विश्वविद्यालयों के विभागों तथा स्वत्रंत रूप से कार्यरत समाज कार्य विद्यालयों के माध्यम से दी जाती है। समाज कार्य की शिक्षा अनुभवी शिक्षकों एवं अभ्यासकर्ताओं की देखरेख में प्रदान की जाती है। समाज कार्य शिक्षा में सैद्धान्तिक एवं व्यवहारिक दोनों प्रकार की शिक्षा दी जाती है। विद्यार्थियों को समाज कार्य अभ्यास के लिए विभिन्न संस्थाओं में भेजा जाता है। उन्हें चिकित्सालयों, श्रम कल्याण केन्द्रों, आवास ग्रहों, विद्यालयों, मलिन बस्तियों, सामुदायिक विकास केन्द्रों, निर्देशन केन्द्रों आदि में क्षेत्रीय कार्य करने के लिए भेजा जाता है। व्यवसाय के इस मानदण्ड पर भी समाज कार्य पूरा उतरता है।

5. व्यावसायिक संगठन:- व्यावसायिक समिति की स्थापना और इस व्यावसायिक संगठन द्वारा सेवा के स्तर या मानदण्ड निर्धारित किया जाना और आचार-संहिता का ग्रहण किया जाना एक और विशेषता है जो किसी भी

जीविका को व्यवसाय का स्तर प्रदान करती है। इस प्रकार व्यावसायिक संगठन व्यवसाय को स्थिरता प्रदान करता है।

समाज कार्य के विकास के साथ-साथ सभी देशों में व्यावसायिक संगठन भी संगठित किए गए हैं। कुछ देशों में तो यह व्यावसायिक संगठन बहुत प्रभावशाली है और समाज कार्यकर्ताओं के व्यावसायिक हितों का संरक्षण करते हैं। उनकी व्यावसायिक समस्याओं को सुलझाने में यह सफल हुए हैं। इन व्यावसायिक संगठनों का उद्देश्य सामाजिक सेवा के स्तर को ऊँचा करना, कार्यकर्ताओं की योग्यताओं में उन्नति करना, इनके हितों की रक्षा करना और इनके व्यावसायिक व्यवहार पर नियंत्रण रखना है। समाज कार्य के यह संगठन कई स्तरों पर बनाये गये हैं। शिक्षा संस्थाओं के स्तर पर, कार्यकर्ताओं के स्तर पर, समाज कार्य के विद्यार्थियों के स्तर पर, समाज कार्य के विभिन्न क्षेत्रों में कार्य करने वाले कार्यकर्ताओं के स्तर पर-जैसे मेडिकल सोशल वर्कर्स, साइकिऐट्रिक सोशल वर्कर्स, ग्रुप वर्कर्स आदि जैसे व्यावसायिक संगठन देखने को मिलते हैं। कुछ देशों में समाज कार्य की संस्थाओं की भी समितियां/संघ बने हुए हैं। भारत में प्रमुख रूप से असोशियेसन ऑफ स्कूल्स ऑफ सोशल वर्क इन इण्डिया, नेशनल असोशिएसन फॉर प्रोफेशनल सोशल वर्कर तथा महाराष्ट्र में राज्य स्तर पर महाराष्ट्र असोशियेसन ऑफ सोशल वर्क एजूकेटर्स व्यावसायिक संगठन विद्यमान है।

6. आचार-संहिता:- व्यवसाय के कार्यकर्ताओं के पालन के लिए आचार-संहिता का निर्माण किया जाना एक ऐसा महत्वपूर्ण कार्य है जो व्यावसायिक संगठन ही कर सकते हैं। अमेरिका में समाज कार्य के व्यावसायिक संगठन, अमेरिकन एसोसिएशन ऑफ वर्कर्स एवं नेशनल एसोसिएशन ऑफ सोशल वर्कर्स ने एक आचार-संहिता का प्रतिपादन किया है। जिसका पालन करना प्रत्येक व्यावसायिक सदस्य के लिए अनिवार्य है। प्रोफेसर अहमद ने व्यावसायिक आचार-संहिता के पांच भागों का उल्लेख किया है:-

अ. सेवार्थियों से सम्बद्ध

1. सेवार्थी के कल्याण को समुदाय के कल्याण के अनुकूल रखना,
2. वैयक्तिक लक्ष्यों एवं अभिमतों की अपेक्षा व्यावसायिक उत्तरदायित्व को प्रधानता देना,
3. सेवार्थी के अपने विषय में स्वयं निर्णय लेने के अधिकार को स्वीकार करना,
4. सेवार्थी को गोपनीयता का आश्वासन देना, और
5. सेवार्थी की सहायता बिना किसी भेदभाव के करना एवं ऐसा करते समय वैयक्तिक अन्तरों का आदर करना।

ब. नियोजक संस्था से सम्बद्ध:

1. संस्था के कार्यक्रमों, नीतियों एवं कर्मचारीगण के व्यवहारों का ज्ञान रखना और उनमें उन्नति करने का प्रयास करना,
2. व्यावसायिक समाज कार्य की आचार संहिता के विरूद्ध नीति एवं कार्यरीति वाली संस्था में सेवा न ग्रहण करना,
3. संस्था में सेवा के लिए किये गये समझौते का पालन करना, और
4. संस्था की नीतियों एवं कार्यरीतियों के निर्माण में कर्मचारियों को भाग लेने के अवसर उपलब्ध कराना।

स. व्यावसायिक साथियों से सम्बद्धः-

1. व्यावसायिक साथियों की स्थिति एवं उनकी योग्यता का आदर करना,
2. व्यावसायिक साथियों को अपने ज्ञान एवं अनुभव से लाभान्वित करना,
3. व्यावसायिक साथियों को अपने-अपने उत्तरदायित्व पूरा करने में सहायता देना,
4. व्यावसायिक साथियों के आपसी भेदों का आदर करते हुए उन्हें दूर करने का प्रयास करना, और
5. कर्मचारियों की नियुक्ति, पदोन्ति, पदच्युक्ति, निष्पक्षता एवं विषयात्मक सूचना के आधार पर करना।

द. समुदाय से सम्बद्धः-

1. ज्ञान एवं निपुणताओं का प्रयोग समुदाय की उन्नित के कार्यक्रमों में करना,
2. संस्थाओं एवं व्यक्तियों द्वारा समाज कार्य के अनैतिक प्रयोग से समुदायों को सुरक्षित रखना,
3. समुदाय से अपने सम्बन्धों को व्यावसायिक शिक्षा, प्रशिक्षण अनुभव एवं कुशलता से प्रभावित करना और इनकी व्याख्या करना, और
4. अपने कथनों को व्यक्त करते समय एवं व्यवहार करते समय यह स्पष्ट कर देना कि वह एक व्यक्ति के रूप में कहे और किये गये हैं या किसी समिति या संस्था के प्रतिनिधि के रूप में।

य. समाज कार्य के व्यवसाय से सम्बद्ध

1. व्यवसाय के आदर्शों का समर्थन करना और उनमें उन्नति का प्रयास करना,
2. एक उच्च स्तर की सेवा प्रदान करके व्यवसाय में जनता के विश्वास को बनाये रखना और उसे बढ़ाने का प्रयास करना,
3. व्यवसाय को बाहरी न्यायहीन आक्रमणों और अनुचित प्रतिनिधित्व से सुरक्षित रखना, और
4. समाज कार्य एवं व्यावसायिक सेवा में विषयात्मक सुधार लाने के उत्तरदायित्व को स्वीकार करना जिससे समाज कार्य को आलोचना से बचाया जा सके।

6. सामुदायिक मान्यता एवं अनुमोदनः- व्यवसाय को सामुदायिक अनुमोदन प्राप्त होना आवश्यक माना गया है। वैश्यावृत्ति एवं भिक्षावृत्ति को सामाजिक अनुमोदन प्राप्त नहीं है जिससे इनको व्यावसायिक स्तर नहीं दिया जा सकता। व्यवसाय का उपयोगी होना भी आवश्यक है तभी समुदाय से इसे मान्यता भी मिलेगी। अमेरिका में समाज कार्य को पूर्ण रूप से सामाजिक अनुमोदन प्राप्त है। सरकारी एवं गैरसरकारी निजी संस्थाएं दोनों ही समाज कार्य में शिक्षा एवं प्रशिक्षण प्राप्त कार्यकर्ताओं की ही नियुक्ति करती है। समाज कार्य सेवाएं अमेरिका में बहुत अधिक एवं विस्तृत रूप में पाई जाती है। अन्य देशों में केवल कुछ क्षेत्रों में ही समाज कार्य में शिक्षित एवं प्रशिक्षित कार्यकर्ता नियुक्त किए जाते हैं। समाज कार्य की शिक्षा संस्थाओं में वृद्धि इस बात का प्रतीक है कि इसे अब समाज का अनुमोदन प्राप्त है और समाज के विशेष क्षेत्रों में केवल समाज कार्य की शिक्षा एवं प्रशिक्षण प्राप्त कार्यकर्ताओं को ही नियुक्त किया जाना इस बात को सिद्ध करता है कि समाज कार्य को मान्यता प्राप्त है।

14.4 समाज कार्य व्यवसाय की विशेषताएं

समाज कार्य में वह सभी गुण एवं विशेषताएं हैं जो किसी भी जीविका को व्यावसायिक स्तर प्रदान करती हैं। परन्तु यह विश्वास केवल सिद्धान्त पर आधारित है, वास्तविकता इससे भिन्न हैं। आज भी अनेक विद्वानों का विचार है कि समाज कार्य व्यवसाय नही है क्योंकि यह कोई ऐसा कार्य नही करता जो असाधारण हो। कार्यकर्ता का व्यवहार एवं उनकी दक्षता कोई विशिष्ट नहीं होती। प्रशिक्षित तथा अप्रशिक्षित कार्यकर्ता में व्यावहारिक अंतर स्पष्ट नही होता है। त्याग की भावना ही निपुणता तथा सहायता की इच्छा जाग्रत करती है, प्रशिक्षण का कोई विशेष महत्व नही होता है। कार्यकर्ता आत्मछवि को विकसित करने में असफल रहे हैं। व्यावसायिक संगठन महत्वपूर्ण भूमिका नही निभा पा रहें है तथा समाज कार्य का उपयुक्त वैज्ञानिक ज्ञान नही है। इन आलोचनाओं के बावजूद भी समाज कार्य व्यावसायिक विशेषताओं को धीरे-धीरे विकसित कर रहा है, जिसे सभी लेाग स्वीकार कर रहे हैं। समाज कार्य व्यवसाय की मुख्य विशेषताएं निम्नवत् हैं:-

1. क्रमानुसार सिद्धान्त का पाया जाना।
2. व्यवसाय से सम्बन्धित विकसित प्रणालियां एवं प्रविधियां।
3. समाज कार्य व्यवसाय की शिक्षण एवं प्रशिक्षण की विकसित पद्धति।
4. समाज कार्य व्यवसाय से सम्बन्धित व्यावसायिक संगठन का होना।
5. व्यावसायिक समाज कार्यकर्ता के लिए समाज कार्य अभ्यास आचार संहिता का होना।
6. समाज कार्य व्यवसाय को सामाजिक अनुमोदन प्राप्त होना।

14.5 सारांश

सारांश के रूप में समाज कार्य की शिक्षण संस्थाओं तथा व्यावसायिक संगठनों में वृद्धि इस बात का द्योतक है कि इसे सामाजिक मान्यता प्राप्त है। समाज के विशेष क्षेत्रों में, समाज कार्य व्यवसाय में प्राप्त शिक्षित एवं प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं की नियुक्ति इस बात का प्रमाण है कि समाज कार्य को लोगों द्वारा स्वीकार किया जा रहा है। अतः यह स्पष्ट होता है कि समाज कार्य में वे सभी गुण एवं विशेषताएं व्याप्त हैं जो किसी भी जीविका को व्यावसायिक स्तर प्रदान करती हैं।

14.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

(1) समाज कार्य व्यवसाय से आप क्या समझते है?

(2) समाज कार्य की विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

(3) समाज कार्य व्यवसाय का अर्थ एवं परिभाषा स्पष्ट कीजिए।

(4) क्या समाज कार्य एक व्यवसाय है?

(5) कोहेन के द्वारा समाज कार्य व्यवसाय से सम्बन्धित कठिनाईयों को स्पष्ट कीजिए।

(6) समाज कार्य व्यवसाय के क्रमानुसार सिद्धान्त की व्याख्या कीजिए।

(7) प्रोफेसर अहमद द्वारा व्यावसायिक सदस्य के लिए अनिवार्य आचार संहिता के विभिन्न भागों का उल्लेख कीजिए।

(8) समाज कार्य की प्रणालियों को बताइये।

(9) समाज कार्य व्यवसाय की अवधारणा को समझाइये।

(10) समाज कार्य व्यवसाय पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. Friedlander, W. A. Indtrodution of Social Welfare, Prentice Hall, INC. New York, 1995.
2. Thomas P.T.: Profession Traning in Social Work, in Sugata Das Gupta (ed) "Towards in Pilosophy of Social Work in India Popular Books Services, New Delhi, 1967.
3. Ahamad, Mirza Raffiuddin, Samaj Kayra: Darshan evam Pranaliyan, Repid Books Services, Lucknow, 1969.
4. Mishra, P.D. Social Work Profession in India, New Royal Book Co., Lucknow, 2004.
5. Sudan K.S., Samaj Karya: Siddhant evam Abhyas, N.S. Publications Lucknow, 2011.
6. Mishra, P.D., Samaj Karya: Itihas, Darshan evam Pranaliyan, New Royal Book Co. Lucknow, 2004.
7. Singh, D.K., and Bhartiya, A.K., Social Work: Philosophy and Methods, New Royal Book Co. Lucknow, 2009.
8. Shastri R.R., Social Work Tradition in India, Welfare Forum and Research Organization, Varanasi, 1986.
9. Dinitto, D.M. and Mcneece, C.A. Social Work Issues and Opportunities: In a Challenging Profession, LYCEUM Books INC, Chicago, 2008.
10. O.Hare, Thomas, Essential Skills of Social Work Practics: Assesment Intervetion Evaluation LYCEUM Books INC, Chicago, 2009.
11. Adams, R.; Dominelli, L. and Payne, M.; Social Work: Themes, Issues and Critical Debates, Second edition (ed), Palgrave, New York, 1998.
12. Clark, S. Social Work as Community Development: A Management Model for Social Change, Second Eddition (ed), Ashgate Publishing Ltd., England, 2000.
13. Colby, Ira and Dziegielewski, S., Introdution to Social Work: The People's Profession, Second Eddition (ed), LYCEUM Books INC, Chicago, 2004.
14. Srivastava S.P. "Addressing the future of Social Work in India" Social Work Education in India (ed) by S.Signh and S. Swaminathan New Royal Books Co. 2003.
15. Singh, Surendra,: Future Chellanges before Social Work Proffesion in India and Reuired Response, Contemporary Social Work Volume 12 October 1995.

इकाई -15

भारत में समाज कार्य व्यवसाय

इकाई की रूपरेखा

15.0 उद्देश्य

15.1 प्रस्तावना

15.2 भूमिका

15.3 भारत में समाज कार्य एक व्यावसायिक सेवा के रूप में

15.4 सारांश

15.5 अभ्यास प्रश्न

15.6 सन्दर्भ ग्रन्थ

15.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप -

1. भारत में समाज कार्य व्यवसाय के विकास एवं स्थिति को समझ सकेंगे।

2. भारत में समाज कार्य व्यवसाय किस सीमा तक व्यवसाय के मानदण्ड या कसौटी पर पूरा उतरता है, इसका विश्लेषण कर पायेंगे।

15.1 प्रस्तावना

भारत में समाज कार्य व्यवसाय अभी तक प्रारम्भिक स्तर पर है। अर्थात् जो स्थान समाज कार्य व्यवसाय को अमेरिका में प्राप्त है। वह व्यावसायिक स्तर अभी प्राप्त नहीं हैं। भारत में समाज कार्य व्यवसाय की प्रणालियों एवं प्रविधियों का व्यावहारिक प्रयोग विषय में नवीन एवं शोध कार्य उस स्तर के नहीं है। जिससे समाज कार्य को एक व्यवसाय के रूप में विकसित किया जा सकता है। परन्तु वर्तमान समय में जिस प्रकार से समाज कार्य की उपादेयता समाज में बढ़ रही है और उसे लोगों के द्वारा स्वीकार किया जा रहा है, प्रतीत होता है कि समाज कार्य अपने व्यावसायिक स्वरूप को प्राप्त करने में अत्यधिक निकट है।

15.2 भूमिका

भारत में समाज कार्य की औपचारिक शिक्षा का प्रारम्भ बीसवीं शताब्दी में हुआ था। भारत में समाज कार्य शिक्षा का प्रारम्भ सन् 1936 से माना जाता है। सन् 1936 में बम्बई (वर्तमान समय में मुम्बई) सर दोराबजी टाटा ग्रजुऐट स्कूल ऑफ सोशल वर्क की स्थापना हुई थी। यह भारत की प्रारम्भिक संस्था थी। तब से लेकर आज तक भारत में समाज कार्य शिक्षा को प्रदान करने के लिए शिक्षण संस्थाओं में उत्तरोत्तर वृद्धि हुई है तथा व्यावसायिक स्तर की ओर अग्रसर है।

15.3 भारत में समाज कार्य एक व्यावसायिक सेवा के रूप में

समाज कार्य का उद्भव मानव सभ्यता के उद्भव से माना जाता है क्योंकि ऐसा प्रतीत होता है कि जबसे मानव ने सामूहिक जीवन जीना प्रारम्भ किया होगा तभी से उसे अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु किसी न किसी की सहायता की आवश्यकता पड़ी होगी। समाज कार्य का प्रारम्भिक विकास दान, निर्धनों की सहायता, समाज सुधार तथा परोपकार की भावना से हुआ होगा। ऐतिहासिक दृष्टिकोण से यदि देखा जाये तो समाज कार्य का व्यावसायिक स्वरूप बीसवीं शताब्दी की देन है। समाज कार्य से सम्बन्धित व्यावसायिक संगठनों, शिक्षण एवं प्रशिक्षण प्रदान करने वाली संस्थाओं, समाज कार्य शिक्षण से सम्बन्धित साहित्य ने समाज कार्य को व्यावसायिक स्वरूप प्राप्त करने में सहायता दी है।

समाज कार्य एक व्यावसायिक सेवा है जो कि स्वयं नवीन ज्ञान पर आधारित है। व्यावसाय के रूप में समाज कार्य का उदय उन्नीसवीं शताब्दी के उन प्रयासों से हुआ जब कई समाज सुधारकों ने नागरिकों को सामाजिक समस्याओं के प्रति जागरूक करने तथा उनकी सामाजिक स्थिति को बेहतर बनाने में सामाजिक विधानों का निर्माण करने के लिए मानवीय दृष्टिकोण से सम्बन्धित आन्दोलनों की शुरूआत की। सन् 1893 में प्रथम बार समाज कार्य की औपचारिक शिक्षा प्रदान करने के लिए इसकी आवश्यकता पर बल दिया गया। जिसका परिणाम यह हुआ कि सन् 1898 में एक छः सप्ताहिक प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाया गया जो बाद में छः मासिक प्रशिक्षण में बदल गया और यही प्रयास एक प्रसिद्ध समाज कार्य की शिक्षण संस्था ''न्यूयार्क स्कूल आऑफ सोशल वर्क'' के रूप में विकसित हुआ।

भारत में समाज कार्य के व्यावसायिक रूप की शुरूआत सर्वप्रथम सन् 1936 ''सर दोराबजी टाटा ग्रेजुएट स्कूल ऑफ सोशल वर्क'' की स्थापना से माना जाता है। तब से लेकर आज तक समाज कार्य की शिक्षण संस्थाओं का विकास जिस गति से हुआ है वह इस बात का द्योतक है कि भारत में समाज कार्य को मान्यता प्राप्त है और वह धीरे-धीरे व्यावसायिक स्वरूप को प्राप्त करता जा रहा है परन्तु एक सत्य यह भी है कि भारत में समाज कार्य को वह व्यावसायिक स्तर प्राप्त नहीं है जो कि अन्य देशों को प्राप्त है। भारत में समाज कार्य व्यावसाय का स्वरूप क्या है इसे निम्नलिखित मानदण्डों अथवा कसौटियों पर परखा जा सकता है:-

1 क्रमानुसार सिद्धान्त:- भारत में भीर समाज कार्य के वही मौलिक सिद्धान्त है जो समाज कार्य के विकसित रूप में अन्य देशों में हैं। अमेरिका और अन्य देशों में जिसमें भारत भी सम्मिलित है, जो भी नया ज्ञान समाज कार्य के साहित्य के रूप में समाने आता है वे भारत मे भी समाज कार्य के वैज्ञानिक ज्ञान का भाग बन जाता है। अपने और अन्य देशों के अभ्यासकर्ताओं के प्रयासों के फलस्वरूप नवीन अनुभव एवं शोध कार्य द्वारा जो भी नया ज्ञान सामने आता है उसे समाज कार्य की शिक्षा एवं प्रशिक्षण के पाठ्यक्रम का भाग बनाकर दूसरों को हस्तांतरित किया जाता है। सबसे बड़ी कठिनाई जो स्वीकार की जा सकती है वह यह है कि भारत में समाज कार्य के सिद्धान्तों के विषय में, समाज कार्य की प्रणालियों एवं प्रविधियों के व्यावहारिक प्रयोग के विषय में नवीन अनुभव एवं शोध कार्य उस स्तर के नहीं है जिससे समाज कार्य को एक व्यवसाय के रूप में विकसित किया जा सके।

2 व्यावसायिक शिक्षा:- भारत में भी समाज कार्य की परम्परा उतनी ही प्राचीन है जितनी अन्य देशों में, मुख्य रूप से योरोपीय देशों में मानी जाती है। यह परम्परा भारतीय समाज में भी चली आ रही है परन्तु पाश्चात्य देशों में इसने व्यावहारिक समाज कार्य का रूप धारण कर लिया है।

भारत में समाज कार्य की औपचारिक शिक्षा का आरम्भ बीसवीं शताब्दी में हुआ जब बम्बई में एक संस्था सोशल सर्विस लीग ने एक छः सप्ताह का संक्षिप्त पाठ्यक्रम समाज कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण हेतु बनाया।

1936 में बम्बई में ही दोराबजी टाटा ''ग्रेजुएट स्कूल ऑफ सोशल वर्क '' की स्थापना हुयी। इस विद्यालय की स्थापना के बाद भारत के अन्य स्थानों पर कई विश्वविद्यालयों ने समाज कार्य की शिक्षा के लिए पाठ्यक्रमों का आयोजन किया। लखनऊ, आगरा, वाराणसी, दिल्ली, उदयपुर, नागपुर, मद्रास, पटना, कलकत्ता, बम्बई, मदुराई, धारवार, बंगलौर, अहमदाबाद, बड़ौदा, कुरूक्षेत्र, पटियाला आदि कई स्थानों पर विश्वविद्यालयों एवं विद्यालयों में समाज कार्य की औपचारिक शिक्षा दी जाती है। अधिकतर विद्यालयों में स्नातकोत्तर स्तर की शिक्षा दी जाती है। स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम के अतिरिक्त कुछ विद्यालयों में समाज कार्य की पी0एच0डी0 की उपाधि के लिए सुविधाएं उपलब्ध हैं।

यूनिवर्सिटी ग्रान्टस कमीशन द्वारा नियुक्त की गयी समिति ने 1960 में अपने प्रतिवेदन में यह संस्तुति की कि समाज कार्य की शिक्षा अन्य विद्यालयों में पूर्व स्नातक स्तर पर भी दी जानी चाहिए।

भारत में समाज कार्य के विद्यालयों का विकास स्वतंत्रता के बाद हुआ क्योंकि 1948 तक केवल टाटा इन्स्टीट्यूट ऑफ सोशल साइन्सेज में ही समाज कार्य की शिक्षा दी जाती थी। 1958 मे समाज कार्य के छः विद्यालय एवं संस्थाएं है जो समाज कार्य में शिक्षा एवं प्रशिक्षण देती है। लगभग एक तिहाई विश्वविद्यालयों मे पी.-एच.डी. की उपाधि की सुविधा उपलब्ध है और दो में डी.लिट. की उपाधि की। समाज कार्य के विश्वविद्यालयों में समाज कि विभिन्न क्षेत्रों में विशेषीकरण की सुविधाएं उपलब्ध है। इन विद्यालयों में समाज की विभिन्न क्षेत्रों में विशेषीकरण की सुविधाएं उपलब्ध है। इन विद्यालयों में समाज कार्य की शिक्षा व्याख्यान एवं क्षेत्रीय कार्य में अनुभवी अभ्यासकर्ताओं की देख-रेख में जाती है। समाज कार्य की शिक्षा संस्थाओं में लगातार वृद्धि हो रही है।

उपरोक्त विवेचन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि भारत में समाज कार्य शिक्षा एवं प्रशिक्षण सम्बन्धी व्यवसाय के मानदण्ड पर भी पूरा खरा उतरता है।

1.3.3 व्यावसायिक संगठन - व्यवसाय में संगठन होने के मानदण्ड पर समाज कार्य पूरी तरह से पूरा खरा नहीं उतरता। भारत में समाज कार्य का व्यावसायिक संगठन तो है परन्तु यह संगठन बहुत ही दुर्बल है। बहुत कम व्यावसायिक समितियों की थोड़ी बहुत गतिविधियां केवल चुनाव के आस-पास ही देखने में आती है। इन समितियों द्वारा व्यावसायिक कार्यकर्ताओं के हित में कार्य देखने में आती है। इन समितियों द्वारा व्यावसायिक कार्यकर्ताओं के हित में कार्य करने के एक आध प्रयास अवश्य देखने में आते हैं। जब आन्ध्र प्रदेश की सरकार ने अपने राज्य की एक शिक्षा संस्था की समाज कार्य की उपाधि की अनिवार्यता को एक विशेष सेवा के लिए रद्द कर दिया, समाज कार्य के सभी व्यावहारिक संगठनों ने मिलकर प्रयास किया और आन्ध्र प्रदेश की सरकार को अपना निर्णय बदलना पड़ा। एक आध समितियां ऐसी भी हैं जो वार्षिक सम्मेलन करके अपने क्षेत्र की समस्याओं पर विचार-विमर्श करती हैं और शोध कार्य पर आधारित व्यावसायिक लेख प्रस्तुत करने का अवसर देती हैं। समाज कार्य की यह समितियां विद्यालय के स्तर पर भी और देश के स्तर पर भी हैं। एक संगठन इण्डियन कान्फ्रेंस आॅफ सोशल वर्क है जिसका नाम अब बदलकर इण्डियन काउन्सिल ऑफ सोशल वेलफेयर कर दिया गया है। इस संस्था का मुख्य कार्य वार्षिक सम्मेलन करना है जिसमें समाज कल्याण के विभिन्न पहलुओं पर विचार विमर्श होता है। इस संस्था का सदस्य कोई भी ऐसा व्यक्ति हो सकता है जो समाज कल्याण में रूचि रखता हो। सदस्यता के लिए प्रशिक्षण प्राप्त समाज कार्यकर्ता होना आवश्यक नहीं है।

1951 में एक और व्यावसायिक संगठन इण्डियन ऐसासिएशन ऑफ दी एलुमिनाई स्कूल ऑफ सोशल वर्क नामक समिति के नाम से स्थापित किया गया। इसे अन्तर्राष्ट्रीय समाज कार्यकर्ता संघ की मान्यता प्राप्त है। यह समिति समाज कार्य के व्यावसायिक स्तर को बनाए रखने और उसे ऊँचा करने का प्रयास करती है। केवल वही

व्यक्ति इस संस्था का सदस्य हो सकता है जिसने मान्यता प्राप्त विद्यालय में समाज कार्य में स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त की हो और जो भारत का नागरिक हो।

इस समिति की शाखाएं कई नगरों मे भी हैं। यह समिति विचार गोष्ठियों का आयोजन करती है और कई वर्षों तक पत्रिका 'सोशल वर्क फोरम' प्रकाशित करती रही हैं। इस पत्रिका का प्रकाशन अब एक अन्य संस्था के हाथ में हैं।

दिसम्बर 1952 में मद्रास में एक और अन्तर्राष्ट्रीय संस्था की स्थापना हुई। इस संस्था का नाम 'इन्टरनेशनल फेडरेशन ऑफ सोशल वरकर्स है। इस फेडरेशन की सदस्यता उन राष्ट्रीय व्यावसायिक समाज कार्य संगठनों को ही उपलब्ध है जो अपने नियमों में सदस्यता के स्तर की व्याख्या करेंगे। अमेरिकन एसोसिएशन ऑफ सोशल वर्कर्स इस फेडरेशन की सदस्य है।

एसोसिएशन ऑफ स्कूल्स ऑफ सोशल वर्क नाम की एक और भी व्यावसायिक संस्था है जो समाज कार्य विद्यालयों में आपसी सहयोग स्थापित करने का प्रयास करती है जिससे समाज कार्य की शिक्षा में उन्नति हो सके। परन्तु यह समिति अधिक सक्रिय नहीं हो सकी है।

ऑल इण्डियन एसोसिएशन ऑफ ट्रेंड सोशल वरकर्स नामक एक औक्र व्यावसायिक संस्था है जिसकी शाखाएं कई नगरों मे भी है।

समाज कार्य के विद्यालयों में अपने-अपने एलुमिनाई एसोसिएशन हैं जिनकी सदस्यता केवल अपने-अपने विद्यालय से प्रशिक्षण प्राप्त विद्यार्थियों तक ही सीमित है। इनमें से कुछ समितियां अपनी-अपनी पत्रिका प्रकाशित करती हैं। लखनऊ विश्वविद्यालय सोशल वर्क एलुमिनाई एसोसिएशन भी एक पत्रिका 'लखनऊ यूनीवर्सिटी जनरल ऑफ सोशल वर्क जिसे बदल कर अब कॉनटेम्पारेरी सोशल वर्क कर दिया गया है, के नाम से प्रकाशित करती है। कुछ समाज कार्य विद्यालय एवं विश्वविद्यालय अपने स्तर पर प्रकाशन करते हैं। कुछ समाज काय विद्यालय एवं विश्वविद्यालय अपने स्तर पर प्रकाशन करते हैं जैसे-एक प्रसिद्ध पत्रिका टाटा इंस्टीट्यूट द्वारा 'इण्डियन जनरल ऑफ सोशल वर्क' प्रकाशित होता है। निर्मला निकेतन बम्बई भी एक पत्रिका प्रकाशित करता है। महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी ने भी एक पत्रिका प्रकाशित करता है। महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी ने भी एक पत्रिका प्रकाशित की है।

परन्तु जैसा पहले कहा जा चुका है समाज कार्य की व्यावसायिक समितियों में से कोई भी सक्रिय एवं प्रभावशाली नहीं है और सदस्यों के व्यावसायिक व्यवहारों पर इन समितियों का किसी भी प्रकार का नियंत्रण नहीं है।

1.3.4 आचार संहिता-समाज कार्य की व्यावसायिक समितियां सक्रिय एवं प्रभावशाली न होने के कारण समाज कार्यकर्ताओं को समाज कार्य की आचार-संहिता का पालन करने पर विवश करने का कोई प्रयास नहीं किया जा रहा है। समाज कार्य की शिक्षा एवं प्रशिक्षण के बाद जो एक विशेष व्यक्तित्व लेकर विद्यार्थी निकलते हैं उनसे ही आशा की जाती है कि वह समाज कार्य द्वारा स्वीकृत आचार-संहिता का पालन आप करेंगे।

1.3.5 सामाजिक मान्यता एवं अनुमोदन -भारत में समाज कार्य को उस स्तर की सामाजिक मान्यता नहीं प्राप्त है जितनी अमेरिका या अन्य पाश्चात्य देशों में मिली है परन्तु फिर भी कई ऐसे चिन्ह है जिनसे पता चलता है कि धीरे-धीरे यह मान्यता पर्याप्त मात्रा में प्राप्त होने लगी है। फैक्ट्रीज ऐक्ट के अनुसार औद्योगिक कारखानों में श्रमिकों की संख्या के अनुसार श्रम कल्याण अधिकारी नियुक्त करना अनिवार्य है। अन्य कई क्षेत्रों जैसे शिशु कल्याण, महिला कल्याण, बाधितों का कल्याण, परिवार कल्याण नियोजन आदि में प्रशिक्षण प्राप्त कार्यकर्ताओं की नियुक्ति की

जाती है। इसके अतिरिक्त चिकित्सालयों में मेडिकल सोशल वर्कर एवं साईकिएट्रिक सोशल वर्कर पदों पर भी समाज कार्य में प्रशिक्षण प्राप्त कार्यकर्ताओं की नियुक्ति की जाती है। बहुत सी अनुसंधान संस्थाओं में विभिन्न सामाजिक, आर्थिक एवं जनसंख्या अध्ययनों जैसे शोध कार्यों में भी समाज कार्य कार्यकर्ता शोध कार्य की प्रणालियों में निपुणता रखते हैं। यह निपुणता उन्हें स्नातकोत्तर स्पर पर शोध कार्य के पाठ्यक्रमों जिसमें कक्षा व्याख्यान, क्षेत्रीय शोध कार्य पर आधारित प्रतिवेदन आदि सम्मिलित हैं, द्वारा सिखाई जाती है।

उपरोक्त विवेचन के बाद कहा जा सकता है कि भारत में समाज कार्य को मान्यता प्राप्त हो रही है और उसे समाज का अनुमोदन धीरे-धीरे प्राप्त हो रहा है। परन्तु समाज से सम्पूर्ण मान्यता उस समय तक नहीं मिल सकेगी जब तक समाज कार्यकर्ता विभिन्न सामाजिक समस्याओं जैसे सामाजिक अन्याय, समाजिक शोषण, सामाजिक तनाव आदि को सुलझाने में सक्रिय नहीं होते। सामाजिक शोषण, सामाजिक तनाव आदि को सुलझाने में सक्रिय नहीं होते।

15.4 सारांश

सारांश के रूप में भारत में समाज कार्य व्यवसाय के विकास के क्रमबद्ध विकास से स्पष्ट होता है कि समाज कार्य को मान्यता प्राप्त हो रही है। समाज कार्यकर्ता विभिन्न सामाजिक समस्याओं को सुलझाने में अपनी सक्रिय भूमिका को प्रतिपादित कर रहें हैं।

15.5 अभ्यासार्थ प्रश्न

(1) भारत में समाज कार्य व्यवसाय से आप क्या समझते है?

(2) भारत में समाज कार्य की विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

(3) क्या भारत में समाज कार्य ने व्यवसाय स्वरूप को प्राप्त किया है?

(4) भारत में समाज कार्य व्यवसाय के महत्व को बताइये।

(5) भारत में समाज कार्य व्यवसाय पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

(6) निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

(अ) भारत में व्यावसायिक संगठन

(ब) सामाजिक मान्यता एवं अनुमोदन

(स) व्यावसायिक शिक्षा

(द) क्रमानुसार सिद्धान्त

15.6 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. Friedlander, W. A. Indtrodution of Social Welfare, Prentice Hall, INC. New York, 1995.
2. Thomas P.T.: Profession Traning in Social Work, in Sugata Das Gupta (ed) "Towards in Pilosophy of Social Work in India Popular Books Services, New Delhi, 1967.
3. Ahamad, Mirza Raffiuddin, Samaj Kayra: Darshan evam Pranaliyan, Repid Books Services, Lucknow, 1969.

4. Mishra, P.D. Social Work Profession in India, New Royal Book Co., Lucknow, 2004.
5. Sudan K.S., Samaj Karya: Siddhant evam Abhyas, N.S. Publications Lucknow, 2011.
6. Mishra, P.D., Samaj Karya: Itihas, Darshan evam Pranaliyan, New Royal Book Co. Lucknow, 2004.
7. Singh, D.K., and Bhartiya, A.K., Social Work: Philosophy and Methods, New Royal Book Co. Lucknow, 2009.
8. Shastri R.R., Social Work Tradition in India, Welfare Forum and Research Organization, Varanasi, 1986.
9. Dinitto, D.M. and Mcneece, C.A. Social Work Issues and Opportunities: In a Challenging Profession, LYCEUM Books INC, Chicago, 2008.
10. O.Hare, Thomas, Essential Skills of Social Work Practics: Assesment Intervetion Evaluation LYCEUM Books INC, Chicago, 2009.
11. Adams, R.; Dominelli, L. and Payne, M.; Social Work: Themes, Issues and Critical Debates, Second edition (ed), Palgrave, New York, 1998.
12. Clark, S. Social Work as Community Development: A Management Model for Social Change, Second Eddition (ed), Ashgate Publishing Ltd., England, 2000.
13. Colby, Ira and Dziegielewski, S., Introdution to Social Work: The People's Profession, Second Eddition (ed), LYCEUM Books INC, Chicago, 2004.
14. Srivastava S.P. "Addressing the future of Social Work in India" Social Work Education in India (ed) by S.Signh and S. Swaminathan New Royal Books Co. 2003.
15. Singh, Surendra,: Future Chellanges before Social Work Proffesion in India and Reuired Response, Contemporary Social Work Volume 12 October 1995.

ईकाई-16

समाज कार्य प्रक्रिया

इकाई की रूपरेखा

16.0 उद्देश्य

16.1 प्रस्तावना

16.2 भूमिका

16.3 समाज कार्य प्रक्रिया का अर्थ

16.4 समाज कार्य प्रक्रिया के चरण

16.5 समाज कार्य प्रक्रिया में मूल्यांकन एवं प्रतिपुष्टि

16.6 सारांश

16.7 अभ्यास प्रश्न

16.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

16.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप -

1.समाज कार्य प्रक्रिया के चरणों के विषय में भी जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

2.समाज कार्य प्रक्रिया के द्वारा किस प्रकार से हस्तक्षेप के द्वारा व्यक्ति, समूह अथवा समुदाय की मनोसामाजिक अथवा आवश्यकताओं को पूरा किया जा सकता है,इसके विषय में जान जायेंगे |

3.एक व्यावसायिक समाज कार्यकर्ता को किन-किन महत्वपूर्ण पहलुओं को ध्यान में रखना आवश्यक है, इससे अवगत हो जायेंगे |

16.1 प्रस्तावना

समाज कार्य प्रक्रिया का मुख्य उद्देश्य व्यक्ति, समूह अथवा समुदाय की मनोसामाजिक समस्या तथा आवश्यकताग्रस्त व्यक्तियों सहायता हस्तक्षेप के द्वारा करना है। समाज कार्य प्रक्रिया के माध्यम से व्यक्ति, समूह अथवा समुदाय की स्थिति को बेहतर बनाना तथा उनको वे सभी अवसर प्रदान करना है जो उनके सामंजस्य में बाधा उत्पन्न करती है। जिससे कि वे एक अच्छा जीवन स्तर जी सके और सामाजिक उत्तरदायित्व का उचित निर्वाहन कर सके।

16.2 भूमिका

समाज कार्य अभ्यास विशेष वैज्ञानिक ज्ञान पर आधारित है। समाज कार्य में अभ्यास का विकास समाज कार्य ज्ञान पर आधारित पर निपुणता, क्षेत्रीय अनुभव तथा सतत् शिक्षा द्वारा हुआ है। बिना उचित ज्ञान, सैद्वान्तिक

जागरूकता, व्यावसायिक अभ्यास तथा निपुणता के, व्यक्ति की स्थिति का आकलन नहीं किया जा सकता है। इसीलिए सैद्वान्तिक ज्ञान, निपुणता, क्षेत्रीय अनुभव, समाज कार्य ज्ञान के विकास का मुख्य आधार है। समाज कार्य ज्ञान अभ्यास आधारित शोध तथा समाज कार्य हस्तक्षेप के मूल्यांकन के बगैर समाज कार्य ज्ञान स्थैतिक, अनुपयोगी एवं अप्राप्त हो जायेगा।

16.3 समाज कार्य प्रक्रिया का अर्थ

समाज कार्य अभ्यास विशेष वैज्ञिानिक ज्ञान पर आधारित है। समाज कार्य में अभ्यास का विकास समाज कार्य ज्ञान पर आधारित पर निपुणता, क्षेत्रीय अनुभव तथा सतत् शिक्षा द्वारा हुआ है। बिना उचित ज्ञान, सैद्वान्तिक जागरूकता, व्यावसायिक अभ्यास तथा निपुणता के, व्यक्ति की स्थिति का आकलन नहीं किया जा सकता है। इसीलिए सैद्वान्तिक ज्ञान, निपुणता, क्षेत्रीय अनुभव, समाज कार्य ज्ञान के विकास का मुख्य आधार है। समाज कार्य ज्ञान अभ्यास आधारित शोध तथा समाज कार्य हस्तक्षेप के मूल्यांकन के बगैर समाज कार्य ज्ञान स्थैतिक, अनुपयोगी एवं अप्राप्त हो जायेगा।

समाज कार्य एक व्यावसायिक क्रिया है जो कि व्यक्तियों समूहों अथवा समुदायों की सामाजिक कार्यात्मकता की क्षमताओं को बनायें रखने अथवा उसमें वृद्वि करने तथा लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सामाजिक स्थिति को अनुकूल बनाने सहायता करती है। समाज कार्य एक व्यावहारिक विज्ञान है जिसके द्वारा लोगो की स्थिति को बेहतर बनाने के लिए प्रभावी रूप से मनोसामाजिक एवं सामाजिक परिवर्तन के लिए सहायता की जाती है।

16.4 समाज कार्य प्रक्रिया के चरण

समाज कार्य अभ्यास के द्वारा व्यक्तियों, समूहों अथवा समुदायों को सामाजिक कार्यात्मकता में वृद्वि करने के लिए सेवार्थी के साथ मुख्य पाच चरणों में कार्य करना पड़ता है जिसे चित्र के द्वारा समझा जा सकता है और समाज कार्य अभ्यास प्रक्रिया संक्षिप्त प्रकार हैं-

समाज कार्य प्रक्रिया के चरण

- समस्या की पहचान (Problem Identification)
- आकलन एवं लक्ष्य का निर्धारण (Assessment and Goal setting)
- कार्य योजना का विकास (Action Plan Development)
- कार्य योजना को लागू करना (Implementation of Action Plan)
- समापन (Termination)

समस्या की पहचान - समाज कार्य अभ्यास प्रक्रिया का प्रथम चरण समस्या की पहचान करना है। समाज कार्यकर्ता हस्तक्षेप के द्वारा समस्याओं की पहचान करने एवं उसे सही रूप से परिभाषित करने में सेवार्थी की सहायता करता है। समाज कार्यकर्ता की भूमिका स्पष्ट रूप से समस्या की गत्यात्मकता, समस्या का प्रारम्भ एवं अन्त के विषय में जानकारी प्राप्त करने में तार्किक दृष्टिकोण को अपनाता है। समाज कार्यकर्ता सेवार्थी की समस्या पर पूर्ण विचार-विमर्श करता है तथा गम्भीरता एवं पूर्ण समर्पण के

साथ सेवार्थी की सहायता करने को तैयार होता है। सहायता प्रदान करने के इस प्रारम्मिक चरण में समाज कार्यकर्ता अपने अनुभव के द्वारा सेवार्थी के साथ सौहार्द एवं घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित करता है। घनिष्ठ सम्बन्ध की स्थापना से सेवार्थी सहज महसूस करते हुए परिवर्तन के लिए तैयार होता है। इस प्रक्रिया में अम्यास कर्ता सेवार्थी को साधारण सलाह देने दूर रहता है। समाज कार्यकर्ता का चाहिए प्रक्रिया के प्रथम चरण में ही समापन (Termination) के विषय में सेवार्थी से विचार विमर्श कर ले। ऐसा करने से सेवार्थी इस बात के लिए जागरूक हो जाता है कि उसके साथ क्या होने वाला है तथा उपचार के पश्चात उसके लिए क्या आवश्यक है।

कार्यकर्ता के लिए प्रत्येक सत्र अथवा मीटिंग के पश्चात् संक्षिप्तीकरण कर, तकनीकियों का उपयोग करना आवश्यक है, क्योंकि सेवार्थी यह पूछ सकता है कि सत्र में क्या-क्या सम्मिलित किया गया है और निर्धारित उद्देश्यों और लक्ष्यों की प्राप्ति में क्या प्रगति हुई है। सत्र में कार्यकर्ता द्वारा किये गये प्रयासों का संक्षिप्तीकरण सेवार्थी के लिए नही किया जाना चाहिए अपितु सेवार्थी द्वारा स्वयं के शब्दों से संक्षिप्तीकरण किया जाना चाहिए। सेवार्थी द्वारा दिये गये कथन के आधार पर समाज कार्यकर्ता को यह ज्ञात होता है कि निर्धारित लक्ष्यों में किन-किन आवश्यकताओं की पूर्ति हुई है और इसका क्या परिणाम हुआ है।

समाज कार्य अम्यास प्रक्रिया के प्रथम चरण में समाज कार्यकर्ता यह भी निर्धारित और उसका मूल्यांकन करता है कि किस प्रकार से हस्तक्षेप के पश्चात् अभ्यास की प्रक्रिया प्रभावी होगी, क्योंकि प्रत्येक अध्ययन में अपनायी गयी तकनीकियां अलग-अलग होती है।

आकलन एवं लक्ष्य का निर्धारण - समाज कार्य अभ्यास प्रक्रिया का दूसरा मुख्य चरण आंकलन एवं लक्ष्य का निर्धारण करना है। यह चरण सेवार्थी को सहायता प्रदान करता है जिससे कि वह लक्ष्यों अथवा उददेश्यों को निश्चित कर सके, जो कि एक दुष्कर्य कार्य होता है। कार्यकर्ता तथा सेवार्थी की सहायता के लिए सेवार्थी की आवश्यकताओं का आंकलन करते है और किस प्रकार से समस्या को जाना जा सकता है, का प्रयास करते है। लक्ष्य सम्पूर्णता को स्पष्ट करता है तथा उद्देश्यों द्वारा अन्तिम लक्ष्य को प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है। जिसके आधार पर प्राप्त होने वाले परिणाम का मापन किया जा सकता है। लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को निर्धारित करते समय निम्नालिखित महत्वपूर्ण बिन्दुओं को ध्यान में रखना चाहिए -

- यह आश्वस्त करना कि कार्यकर्ता तथा सेवार्थी हस्तक्षेप के लिए सहमत है,
- सेवार्थी को अवसर प्रदान करना जिससे कि वह अपनी समस्या को सम्बोधित कर सके,
- उपचार की उपयुक्त रणनीतियों के चयन के अवसर प्रदान करना अथवा आधार प्रदान करना,
- हस्तक्षेप की प्रगति तथा सत्र के लिए सेवार्थी को सहायता प्रदान करना,
- प्रभावी हस्तक्षेप की माप करने के लिए उद्देश्यों को निर्धारित करना। उद्देश्यों तथा लक्ष्यों के निर्धारण के पश्चात निम्नलिखित को लागू करना चाहिए -

1. लक्ष्यों तथा उद्देश्यों को सेवार्थी की आवश्यकताओं से सम्बन्धित करना जिससे हस्तक्षेप के पश्चात प्राप्त किया जा सके,

2. लक्ष्यों तथा उद्देश्यों को उचित रूप में परिभाषित करना जिससे कि सेवार्थी को यह ज्ञान हो सके कि वह क्या चाहता है,

3.उद्देश्य स्पष्ट होने चाहिए, जिससे सेवार्थी अभ्यास प्रक्रिया पर विश्वास कर सके अन्यथा वह हस्तक्षेप प्रक्रिया को नकार सकता है,

4. उद्देश्य एवं लक्ष्य ऐसे होने चाहिए जिससे कि कार्यकर्ता मार्ग दर्शन प्राप्त कर सके,

5.सम्भावित लक्ष्य एवं उद्देश्य नकारात्मक न होकर के सकारात्मक होने चाहिए , और

6.सभी लक्ष्यों पर सेवार्थी की सहमति होनी चाहिए क्योकि बगैर सहमति के पूर्वाग्रह की सम्भावना बनी रहती है।

क्रिया योजना विकास - एक बार लक्ष्यों एवं उद्देश्यों स्पष्ट रूप से पहचान हो जाने के बाद समाज कार्यकर्ता कार्य योजना के विकास के लिए सेवार्थी की सहायता करता है। समाज कार्यकर्ता की भूमिका परिवर्तन और क्रिया के लिए उपयुक्त रणनीतियों की पहचान करने के लिए सर्वोपरि होती है। कार्य योजना को लागू करने के लिए समाज कार्यकर्ता प्रत्यक्ष रूप से अथवा सलाह के लिए समर्थ हो सकता है और वह सामान्य है तो विशेषज्ञ सेवाए प्रदान करने के लिए अन्य किसी विशेषज्ञ से मदद ले सकता है जिसमें सेवार्थी की मंजूरी आवश्यक है।

कार्य योजना में एक कार्य अथवा कार्यों की श्रंखला होती है। प्रत्येक कार्य स्पष्ट एवं विशेष होता है जिसका अनुश्रवण, कार्यकर्ता तथा सेवार्थी दोनो के द्वारा समय सीमा में किया जाता हैं। प्रत्येक कार्य पूर्व में किये गए प्रयासो से सम्बन्धित होता तथा साथ में निर्धारित किये गये लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को दिशा निर्देश प्रदान करता है।

कार्य योजना लागू करना - कार्य योजना को तब लागू किया जाता है जब सेवार्थी इसके लिए तैयार हो जाता है। कार्य योजना लागू करते समय कार्यकर्ता तथा सेवार्थी साथ में सेवार्थी की प्रगति का अनुश्रवण करते है। यह क्रिया योजना मूल्यांकन का एक भाग है जो कि साक्ष्य आधारित अभ्यास है। इसलिए अभ्यास मूल्यांकन यह निर्धारित करता है कि समस्या को दूर करने में उपयोगी है अथवा नहीं। अनुश्रवण द्वारा कार्यकर्ता तथा सेवार्थी लक्ष्य आधारित प्रगति का आंकलन करने में समर्थ होते हैं, हस्तक्षेप की प्रभविकता को जानते है, प्रगति अथवा कमी के प्रति सेवार्थी की प्रतिक्रिया का परीक्षण करते हैं तथा सम्प्रेरणा में वृद्धि करते है। सतत् अनुश्रवण की प्रक्रिया सेवार्थी तथा कार्यकर्ता को अधिकार देती है कि प्रक्रिया में आने वाली बाधाओं अथवा सुदृढ़ता का पता लगाए तथा नई रणनीतियों को निर्मित करके आने वाली बाधाओं को दूर करे। इसके अतिरिक्त मुख्य रूप से अनुश्रवण के द्वारा यह भी पता लगाया जाता है कि परिवर्तन के लिए किये जा रहे प्रयासों के प्रति सेवार्थी का क्या सकारात्मक विचार है।

कार्य-योजना को लागू करने में समाज कार्यकर्ता के लिए आवश्यक उसे अभ्यास का पूर्ण ज्ञान हो। समाज कार्य अभ्यास का ज्ञान समाज कार्यकर्ता के लिए आवश्यक है क्योंकि सेवार्थी की सहायता करने के लिए उसे कई प्रकार की रणनीतियों का उपयोग करना होता है।

समापन - समाज कार्य अभ्यास का आखिरी चरण प्रक्रिया का समापन है। सेवार्थी तथा समाज कार्यकर्ता कार्यशील सम्बन्धों को समाप्त करते है और इसके लिए कौन सी रणनीति विकसित करने के लिए उपयोगी हो सकती है, को परिभाषित करते है। अधिकतर बहुत से सेवार्थी समापन के चरण पर इस बात को महसूस करते हैं कि उन्हे अन्य अतिरिक्त सेवाएं और क्या सहायता चाहिए। ऐसी स्थिति में समाज कार्यकर्ता सेवार्थी को सूचित करता

है कि सतत् हस्तक्षेप के अन्य विकल्प क्या है तथा उपयुक्त सन्दर्भ सेवाओं द्वारा कैसे सांवेगिक विकास को प्राप्त कर सकते है। इसके लिए सामूहिक चिकित्सा, व्यक्ति वृद्वि-निर्देशित चिकित्सा तथा चिकित्सा को शामिल किया जा सकता है।

उपरोक्त चरणों को समाज कार्य प्रक्रिया में अपनाया जाता है परन्तु कोई भी अभ्यास प्रक्रिया तब तक सफल नहीं हो सकती है जब तक कि उसका सतत् मूल्यांकन न हो और प्रदान की जाने वाली सेवायें अथवा सहायता के विषय में प्रतिपुष्टि न प्राप्त हो। इसीलिए समाज कार्य अभ्यास प्रक्रिया मे मूल्यांकन एवं प्रतिपुष्टि, अभ्यास प्रक्रिया के प्रत्येक चरण पर लागू की जाती है।

16.5 समाज कार्य प्रक्रिया में मूल्यांकन एवं प्रतिपुष्टि

किसी भी प्रक्रिया की सफलता अथवा असफलता का मापन मूल्यांकन तथा प्रतिपुष्टि के द्वारा किया जा सकता है। मूल्यांकन एवं प्रतिपुष्टि प्रक्रिया के लिए अतिमहत्वपूर्ण है क्योंकि इसका उपयोग प्रक्रिया के प्रत्येक चरण पर किया जाता है। इसका लाभ यह होता है कि प्रत्येक चरण में किये जाने वाले कार्यों अथवा उद्देश्यों की प्राप्ति कहां तक संभव हो सकती है तथा आवश्यकता के अनुरूप उसमें किसी भी प्रकार के परिवर्तन की आवश्यकता है तो उसे यथाशीघ्र लागू किया जा सके। मूल्यांकन तथा प्रतिपुष्टि की भूमिका समाज कार्य प्रक्रिया में क्या हो सकती है, इसका संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है जिससे इसकी उपयोगिता को समझा जा सकता है।

एक अभ्यास प्रक्रिया तभी सफल मानी जा सकती है जब हस्तक्षेप के द्वारा सेवार्थी की कार्यात्मकता के स्तर में महत्वपूर्ण परिवर्तन लाये। इन परिवर्तनों को आवश्यक रूप से साक्ष्य आधारित अभ्यास के द्वारा ही मापा जा सकता है। हस्तक्षेप की प्रभावशीलता को प्रतिपुष्टि के द्वारा आसानी से मापा जा सकता है अथवा सेवार्थी के व्यवहार में आये परिवर्तन को हस्तक्षेप के द्वारा पूर्व में किये गये प्रयासों तथा पश्चात् की कार्य योजना के द्वारा प्राप्त परिणामों को मानक स्केल के द्वारा तुलनात्मक अध्ययन के द्वारा मापा जा सकता है। नियोजित अभ्यास मूल्यांकन तथा प्रतिपुष्टि हस्तक्षेप के लिए आवश्यक है इसीलिए शोध, मूल्यांकन एवं प्रतिपुष्टि को समाज कार्य अभ्यास की प्रक्रिया के प्रत्येक चरण पर शमिल किया जाता है।

16.4 सारांश

सारांश के रूप में समाज कार्य प्रक्रिया के द्वारा हम यह कह सकते हैं कि समाज कार्य हस्तक्षेप के माध्यम से सेवार्थी की आवश्यकताओं को पूरा करने में वैज्ञानिक तथा विशेष ज्ञान एवं निपुणता के द्वारा समाज कार्यकर्ता अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का प्रतिपादन करता है।

16.5 अभ्यासार्थ प्रश्न

(1) समाज कार्य प्रक्रिया से आप क्या समझते है?

(2) समाज कार्य प्रक्रिया के विभिन्न चरणों का उल्लेख कीजिए।

(3) समाज कार्य प्रक्रिया मे मूल्यांकन एवं प्रतिपुष्टि का क्या महत्व है?

(4) निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

(अ) समस्या की पहचान

(ब) कार्य योजना

(स) समापन

(द) कार्य योजना का विकास

(य) कार्य योजना को लागू करना

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. Dinitto, D.M. and Mcneece, C.A. Social Work Issues and Opportunities : In a Challenging Profession, LYCEUM Books INC, Chicago, 2008.
2. O.Hare, Thomas, Essential Skills of Social Work Practics: Assesment Intervetion Evaluation LYCEUM Books INC, Chicago, 2009.
3. Adams, R.; Dominelli, L. and Payne, M.; Social Work : Themes, Issues and Critical Debates, Second edition (ed), Palgrave, New York, 1998.
4. Clark, S. Social Work as Community Development: A Management Model for Social Change, Second Eddition (ed), Ashgate Publishing Ltd., England, 2000.
5. Colby, Ira and Dziegielewski, S., Introdution to Social Work: The People's Profession , Second Eddition (ed) LYCEUM Books INC, Chicago, 2004.

इकाई -17

समाज कार्यकर्ता की भूमिका एवं कार्य

इकाई की रूपरेखा

17.0 उद्देश्य

17.1 प्रस्तावना

17.2 भूमिका

17.3 समाज कार्यकर्ता की भूमिका एवं कार्य

17.4 सारांश

1.5 अभ्यास प्रश्न

1.6 सन्दर्भ ग्रन्थ

17.0 उद्देश्य

प्रस्तुत अध्याय का उद्देश्य समाज कायकर्ता की भूमिका एवं कार्यों को स्पष्ट करना है। समाज कार्यकर्ता समाज कार्य प्रक्रिया के द्वारा विभिन्न प्रकार की भूमिकाओं का प्रतिपादन करते हुए व्यक्ति, समूह अथवा समुदाय की मनोसामाजिक अथवा मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा करने में सहायता प्रदान करता है।

17.1 प्रस्तावना

समाज कार्यकर्ता का मुख्य उद्देश्य लोगों की सहायता करना जिससे कि वे सामंजस्यपूर्ण जीवन व्यतीत कर सके। समाज कार्यकर्ता व्यावसायिक के रूप में कार्य करता है और समुदाय में आत्मनिर्भरता तथा आत्मनिर्देशन का विकास करता है। जिससे कि व्यक्ति, समूह अथवा समुदाय स्वयं निर्णय कर सके और अपने संसधानों को गतिमान कर सके। समाज कार्यकर्ता वास्तव में एक सहायता देने वाला व्यक्ति है जो कि सेवार्थी की आवश्यकताओं तथा उपलब्ध संसाधनों के मध्य सामंजस्य स्थापित करते हुए उद्देश्यों की पूर्ति में सहायक होता है।

17.2 भूमिका

वर्तमान समय में अधिकतर समाज कार्यकर्ता विभिन्न प्रकार की भूमिकाओं का प्रतिपादन कर रहे हैं। एक व्यवसाय में प्रत्येक व्यक्ति से यह आशा की जाती है कि वह निश्चित क्रियाओं का सम्पादन करेगा। यथा एक चिकित्सक से यह आशा की जाती है कि वह बीमार व्यक्ति की स्थिति का निदान करने के लिए कुछ परीक्षण करेगा, उपचार देगा तथा परिणाम का मूल्यांकन करेगा। इसी प्रकार जब एक व्यक्ति समाज कार्यकर्ता की भूमिका का निर्वहन करता है तो यह आशा की जाती है कि अभ्यास की परिस्थितियों का विश्लेषण सावधानीपूर्वक करेगा, अतिमहत्वपूर्ण हस्तक्षेप तकनीकियों को लागू करेगा, और किए गए प्रयासों की सफलता अथवा असफलता का आंकलन करेगा। अतः व्यवसाय के व्यक्तिगत रूप से एक व्यक्ति की भूमिका क्या होगी, का निर्धारण व्यावसायिक मानकों और सीमाओं द्वारा होता है कि समाज कार्यकर्ता क्या करेगा अथवा नहीं।

17.3 समाज कार्यकर्ता की भूमिका एवं कार्य

एक व्यवसाय में प्रत्येक व्यक्ति से यह आशा की जाती है कि वह निश्चित क्रियाओं का सम्पादन करेगा। यथा एक चिकित्सक से यह आशा की जाती है कि वह बीमार व्यक्ति की स्थिति का निदान करने के लिए कुछ परीक्षण करेगा, उपचार देगा तथा परिणाम का मूल्यांकन करेगा। इसी प्रकार जब एक व्यक्ति समाज कार्यकर्ता की भूमिका का निर्वहन करता है तो यह आशा की जाती है कि अभ्यास की परिस्थितियों का विश्लेषण सावधानीपूर्वक करेगा, अतिमहत्वपूर्ण हस्तक्षेप तकनीकियों को लागू करेगा, और किए गए प्रयासों की सफलता अथवा असफलता का आंकलन करेगा। अतः व्यवसाय के व्यक्तिगत रूप से एक व्यक्ति की भूमिका क्या होगी, का निर्धारण व्यावसायिक मानकों और सीमाओं द्वारा होता है कि समाज कार्यकर्ता क्या करेगा अथवा नहीं।

वर्तमान समय में अधिकतर समाज कार्यकर्ता विभिन्न प्रकार की भूमिकाओं का प्रतिपादन कर रहे हैं। कुछ विशेष प्रकार की भूमिकाओं एवं कार्यों का निवर्हन कर रहे हैं तो कुछ सामान्य कार्यकर्ता के रूप में वृहत् स्तर पर अपनी भूमिका को प्रतिपादित कर रहे हैं।

एक व्यवसाय के व्यावसायिक कार्यकर्ता के कार्य एवं भूमिका सामाजिक प्रतिमानों तथा ऐतिहासिक परम्पराओं द्वारा परिभाषित की जाती है, वैधानिक संहिताओं तथा प्रशासनिक नियमनों के द्वारा कार्य करने की अनुमति दी जाती है, जिसमें संस्थागत नीतियों एवं प्रक्रियाओं की भूमिका होती है। यथा एक समाज कार्यकर्ता सेवार्थी की स्थिति का अध्ययन करने में एक मध्यस्थ कर्ता, एक परामर्शदाता अथवा एक चिकित्सक अथवा एक वैयक्तिक प्रबन्धक की भूमिका का निवर्हन करता है।

मध्यस्थकर्ता के रूप में समाज कार्यकर्ता

समाज कार्य विशेष रूप से सहायता प्रदान करने वाला व्यवसाय है जो कि लोगों की सहायता करता है जो उनके सामाजिक पर्यावरण से सम्बन्धित होते हैं। ऐसे स्थान पर समाज कार्यकर्ता एक व्यावसायिक व्यक्ति होता है जो सेवार्थी तथा सामुदायिक संसाधनों के मध्य सम्बन्ध स्थापित करने में सहायता करता है। एक मध्यस्थता की स्थिति में समाज कार्यकर्ता सेवार्थी की आवश्यकताओं, उसके प्रेरणाओं का आंकलन तथा विभिन्न संसाधनों को उपयोग करने की क्षमता तथा संसाधनों को प्राप्त करने में सहायता करता है।

मानवीय सेवाओं के एक मध्यस्थकर्ता के रूप मे समाज कार्यकर्ता उपलब्ध विभिनन प्रकार की सेवाओं एवं कार्यक्रमों के विषय में जानकारी प्राप्त होती है। प्रत्येक की शक्ति एवं सीमाओं का आंकलन करता है तथा संसाधनों के आंकलन करने की प्रक्रिया को समझता है। ये सभी संसाधन सामाजिक प्रावधानों यथा धन, भोजन, वस्त्र, आवास तथा/अथवा सामाजिक सेवाओं में परामर्श, चिकित्सा, सामूहिक अन्तःक्रिया पुनर्वास सम्बन्धी सेवाएं हो सकती है।

समाज कार्यकर्ता के कार्य:-

- सेवार्थी स्थिति का आंकलन:- मध्यस्थता के प्रथम चरण में सेवार्थी की योग्यता और आवश्यकताओं का सही रूप से आंकलन करते हुए वृहत् स्तर पर समझने का प्रयास करता है। एक निपुण मध्यस्थकर्ता सेवार्थी की स्वैच्छिक वादिता, संस्कृति, बोलने की क्षमता, सांवेगिक स्थिरता, बौद्धिकता तथा परिवर्तन के लिए कटिबद्धता इत्यादि कारकों आंकलन करने में निपुण होता है।

- संसाधनों का आंकलन:- एक समाज कार्यकर्ता उन विभिन्न संसाधनों का पता लगाने का प्रयास करता है जिससे सेवार्थी की आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके। अपनी संस्था जिससे वह सम्बद्ध है अथवा अन्य सामुदायिक संस्थाओं द्वारा दी जाने वाली सेवाओं यथा सेवा की गुणवत्ता, सेवाओं के प्रकार, सेवाओं की लागत, सेवा को प्राप्त करने की योग्यता, इत्यादि के प्रति जागरूक होता है। अतिरिक्त रूप में समाज कार्यकर्ता संसाधनों को उपयोग में लाने वाले उचित मार्ग के विषय में भलीभांति परिचित होता है।

- संदर्भ सेवाएं:- आवश्यक संसाधनों से सेवार्थी की सम्पर्क स्थापित होने की प्रक्रिया में समाज कार्यकर्ता सेवार्थी की योग्यता एवं प्रेरणा के अनुसार यह निर्णय करता है कि सेवार्थी इच्छानुसार किन सेवाओं को स्वीकार करेगा अथवा नहीं। इस निर्णय के आधार पर समाज कार्यकर्ता सन्दर्भ प्रक्रियाओं से ज्यादा से ज्यादा अथवा न्यूनतम स्तर पर सक्रिय होता है। समाज कार्यकर्ता इस बात की जांच करता अथवा परखता है कि सेवार्थी की आवश्यकताओं की पूर्ति हो पा रही है या नहीं। ऐसी स्थिति में पुनः कार्य करने की आवश्यकता पड़ती है।

- सेवा व्यवस्था सम्बन्ध:- मध्यस्थता की स्थिति में समाजकार्य समाज कार्यकर्ता सेवा वितरण व्यवस्था के प्रत्येक स्तर पर लगातार सेवार्थी से सम्बन्ध बनाये रखता है। समाज कार्यकर्ता संस्था, कार्यक्रम तथा सेवाओं एवं संचार के माध्यमों, सूचनाओं, संसाधनों को गतिमान करने, संस्था की योजनाओं में, सूचनाओं में सुदृढ़ता प्रदान करना तथा लगातार सम्पर्क बनाये रखता है।

- सूचना प्रदान करना:- समाज कार्यकर्ता सेवार्थी को लगातार सूचना प्रदान करता है। इसके अतिरिक्त समाज कार्यकर्ता सामान्य जन सेवाओं के सेवार्थी की आवश्यकताओं तथा उपलब्ध सेवाओं के बीच जागरूकता स्थापित करता है।

अधिवक्ता के रूप में समाज कार्यकर्ता

वकालत करना समाज कार्य का मुख्य आधार है जो कि आचार संहिता द्वारा संचालित होती है। वकालत एक या एक से अधिक व्यक्तियों, समूहों, शामिल अथवा समुदायों की ओर प्रत्यक्ष रूप से बचाव करना, आलम्बन देना अथवा सिफारिश करने की क्रिया का एक माध्यम तथा साथ में सामाजिक न्याय के लक्ष्य की प्राप्ति अथवा संरक्षित करने का तरीका है। समाज कार्यकर्ता वकालत की विभिन्न विधियो के साथ परिवर्तन की प्रक्रिया में सेवार्थी के आत्मनिर्धारण एवं सहभागिता के सिद्धान्त का अधिकतम उपयोग करते हुए संतुलन बनाने का प्रयास करता है और यह भी प्रयास करता है कि सेवार्थी अपने उद्देश्यें की प्राप्ति स्वतः वकालत करके कर सके। एक समाज कार्यकर्ता सेवार्थी की विशेषताओं का चयन करते हुए उचित देखभाल करता है तथा नकारात्मक के विरूद्ध अथवा सम्पूर्ण अपेक्षित क्रियाओं के प्रति तैयार रहती है।

समाज कार्यकर्ता के कार्य

- सेवार्थी अथवा वैयक्तिक वकालत:- इस प्रकार की वकालत में यह देखा जाता है कि सेवार्थी सेवाओं अथवा संसाधनों को प्राप्त करने योग्य है, अथवा प्राप्त किया है। इस प्रक्रिया में सेवार्थी से सम्बन्धित सूचनाओं को एकत्र किया जाता है तथा यह निर्धारित किया जाता है कि वह आवश्यक सेवाओं के लिए योग्य है। यह प्रक्रिया सेवार्थी को अपील करने में सहायता प्रदान करती है और अन्य स्थिति में यदि आवश्यकता पड़ती है तो सेवा प्रदान करने वाले अथवा संस्था के विरूद्ध वैधानिक कार्यवाही की जाती है।

- वर्ग वकालत:- इस प्रकार के कार्य में समाज कार्यकर्ता सेवार्थी के समूहों अथवा जनसंख्या के एक भाग जिनकी सामान्य समस्या है, को सेवाएं प्रदान की जाती है। विशेष रूप से लोगों के समूहों को सेवाओ से प्राप्त होने वाले लाभों अथवा नागरिक अधिकारों से प्राप्त होने वाले लाभों में आने वाली बाधाओं अथवा रूकावटों को दूर करने में वर्ग वकालत के द्वारा कार्य किया जाता है। सामान्यतः इस प्रकार के प्रयासों का उद्देश्य संस्था के नियमों, सामाजिक नीतियों, कानूनों इत्यादि में परिवर्तन लाना होता है।

शिक्षक के रूप में समाज कार्यकर्ता

अधिकतर समाज कार्यकर्ता अभ्यास सेवार्थी अथवा सेवार्थी समूह के जीवन से सम्बन्धित समस्याओं को समझने अथवा उनके जीवन में आने वाली या उत्पन्न होने वाली समस्याओं/संकट की रोकथाम में शिक्षा प्रदान करता है। जिसका मुख्य उद्देश्य सेवार्थी को सशक्त करना है। शिक्षक की भूमिका में समाज कार्यकर्ता सेवार्थी को यह समझाने का प्रयास करता है कि किस प्रकार परिस्थितियों को स्वीकार किया जाये। जो परिस्थितियां लोगों पर नकारात्मक प्रभाव डालती है को समझने के लिए सूचनाएं, योग्य सलाह, सम्भावित विकल्पों की व्याख्या और उसके प्रभाव को जानने में सेवार्थी को सहायता करता है तथा उसके जीवन से सम्बन्धित विभिन्न मुद्दों से सम्बन्धित सूचनाएं उपलब्ध कराता है जिससे कि वह उचित निर्णय ले सके।

समाज कार्य अभ्यास का आधारभूत उद्देश्य है कि सेवार्थी को अकार्यात्मक व्यवहार को परिवर्तित करे और सामाजिक अन्तक्रिया के विभिन्न पक्षों को प्रभावशाली रूप से सीखे। इस प्रक्रिया के द्वारा सेवार्थी समाज के प्रतिमानों कानूनों अथवा नियमों सामाजिक निपुणता का विकास, कार्यात्मक भूमिका को सीखना, तथा अपने व्यवहार के प्रति अन्तर्दृष्टि को प्राप्त करता है। इस प्रक्रिया में सेवार्थी की सहायता साक्षात्कार द्वारा अथवा संरचित शैक्षिक क्रियाओं यथा कार्यशाला द्वारा की जाती है।

समाज कार्यकर्ता के कार्य:-

- सामाजिक और दैनिक जीवन जीने की कला:- शिक्षक, सेवार्थी के कौशल का उपयोग संघर्ष समाधान, मुद्रा प्रबन्धन, जन यातायात के उपयोग, जीवन के नये आयाम के साथ समायोजन, वैयक्तिक देखभाल एवं स्वच्छता, प्रभावी संचार इत्यादि इस क्रिया के उदाहरण हैं, जहां पर समाज कार्यकर्ता के रूप में नियमित रूप से कार्य करते रहते हैं।

- व्यवहार परिवर्तन में सहायता:- समाज कार्यकर्ता संकेतात्मक अभिगम का प्रयोग करते हुए यथा भूमिका प्रतिपादन, मूल्यों का स्पष्टीकरण, व्यवहार आशोधन के द्वारा सेवार्थी के अन्तरावैयक्तिक व्यवहार को प्रभावी बनाता है।

- प्रारम्भिक रोकथाम:- ऐतिहासिक दृष्टिकोण से यदि देखा जाये जो स्पष्ट होता है कि समाज कार्य व्यवसाय मानवीय समस्याओं एवं उससे सम्बन्धित लोगों की स्थिति से सम्बन्धित रहा है। वर्तमान में समाज कार्यकर्ता ने प्राथमिक रोकथाम की ओर अत्यधिक ध्यान दिया है। समस्याओं के विकास की रोकथाम कई स्थानों पर निरोधात्मक प्रयासों के द्वारा समाज कार्यकर्ता ने एक शिक्षक यहां तक की एक जन शिक्षककर्ता की भूमिका का प्रतिपादन कर रहा है। उदाहरण के रूप में पूर्व विवाह परामर्श, परिवार नियोजन से सम्बन्धित सूचनाओं को देना तथा सामाजिक मुद्दों एवं समस्याओं के प्रति लोगों को जागरूक करना।

परामर्शदाता/चिकित्सक के रूप में समाज कार्यकर्ता

समाज कार्यकर्ता ने अधिकतर एक परामर्शदाता/चिकित्सक की भूमिका में साक्ष्य आधारित मूल्यांकन का निष्पादन करता है तथा वैयक्तिक पारिवारिक तथा सामूहिक स्तर पर लोगों से सम्बन्धित सामाजिक एवं सांवेगिक मुद्दों पर आधारित स्थिति पर हस्तक्षेप द्वारा प्रयास करता है। इस प्रकार की भूमिका में समाज कार्यकर्ता के लिए आवश्यक है कि उसे मानवीय व्यवहार एवं सामाजिक पर्यावरण लोगों को कैसे प्रभावित करता है, सेवार्थी की आवश्यकताओं का पता लगाने की योग्यता, सेवार्थी को हस्तक्षेप द्वारा कैसे सहायता प्रदान की जा सकती है, कौन सी हस्तक्षेप तकनीकियों को अपनाया जायेगा तथा परिवर्तन की प्रक्रिया के द्वारा सेवार्थी को निर्देशित करने की योग्यता, इत्यादि का ज्ञान हो।

समाज कार्यकर्ता के कार्य:-

- मनोसामाजिक आंकलन एवं निदान:- सेवार्थी की स्थिति को समझने के लिए उसकी प्रेरणाओं, क्षमताओं तथा परिवर्तन के अवसरों का आंकलन करना, आवश्यक है। सेवार्थी तथा उसके पर्यावरण को प्रोत्साहित करने के लिए सूचनाओं का अवधारणात्मक संकलन होना आवश्यक है। इसके साथ ही समाज कार्यकर्ता को निदान के उद्देश्य की प्राप्ति लिए आवश्यक है कि शोध, कार्यक्रम नियोजन इत्यादि के विषय में ज्ञान हो।

- उचित देखभाल - एक परामर्शदाता/चिकित्सक की यह भूमिका नहीं है कि वह हमेशा सेवार्थी अथवा सामाजिक स्थितियों को परिवर्तित करने का प्रयास करे बल्कि यह भी आवश्यक है कि लगातार सेवार्थी को सम्बल प्रदान करे अथवा उसकी देखभाल करे।

- सामाजिक उपचार:- एक समाज कार्यकर्ता का, सहायता करने के लिए सेवार्थी का उससे सम्बन्धित लोगों एवं समूहों से कैसे रिश्ते हैं, सामाजिक सम्बन्धों में परिवर्तन के लिए किये गये सेवार्थी के प्रयासों को आलम्बन प्रदान करना, समस्या समाधान अथवा अन्तरवैयक्तिक परिवर्तन के प्रयासों मे सेवार्थी को सम्मिलित करना, तथा सामाजिक परिस्थितियों और/अथवा व्यक्तियों के बीच संघर्षों अथवा असमानताओं को दूर करना इत्यादि कार्य सम्मिलित हैं। प्रत्यक्ष रणनीतियों द्वारा सेवार्थी के साथ आमने-सामने तथा अप्रत्यक्ष रणनीतियों द्वारा सेवार्थी को सन्दर्भित सेवाओं द्वारा सहायता प्रदान करने के प्रयास किये जाते हैं।

प्रबन्धक के रूप में समाज कार्यकर्ता

विभिन्न संस्थाओं द्वारा सेवार्थी को प्रदान की जाने वाली सेवाओं के लिए समाज कार्यकर्ता एक प्रबन्धक की भूमिका निवर्हन करता है। एक प्रबन्धकर्ता की भूमिका में समाज कार्यकर्ता का कार्य सहायता के लिए आवश्यकताओं का पता लगाना, सफल जीवन में आने वाली बाधाओं के मार्गों का पता लगाना, सेवार्थी को सलाह देने के लिए योग्य सहायताकर्ता से सम्पर्क स्थापित करना, और सेवार्थी को प्रत्यक्ष रूप से सेवाएं प्रदान करने के अवसर उपलब्ध कराना है। वास्तव में समाज कार्यकर्ता समस्याओं के समाधान हेतु दी जाने वाली सहायता तथा सेवा योजना की सफलता का मूल्यांकन करता रहता है। एक कुशल प्रबन्धक के रूप में समाज कार्यकर्ता के लिए आवश्यक है कि वह उद्देश्य के प्रति उन्मुख, क्रियाशील एवं सकारात्मक सोच वाला हो।

समाज कार्यकर्ता के कार्य

- सेवार्थी की पहचान एवं परिचय - इस कार्य में समाज कार्यकर्ता ऐसे लोगों का पता लगाता है जो कि सेवा चाहते हो, तथा वे परिवर्तन की निर्देशित प्रक्रियाएं, जो सकारात्मक रूप से जीवन की गुणवत्ता को प्रभावित करती है, का प्रत्यक्ष रूप से पता लगाता है।

- सेवार्थी का आंकलन - इस कार्य में सूचनाओं का संकलन और सेवार्थी की आवश्यकताओं का आंकलन, जीवन की स्थिति तथा संसाधनों का निरूपण करना है।

- सेवा उपचार योजना का निर्माण करना - सेवार्थी तथा सेवाओ के मध्य समन्वय स्थापित करना, सहायता प्रदान करते समय सेवार्थी को विभिन्न प्रकार संसाधनों द्वारा सेवाएं प्रदान करना। नियमित रूप से सेवार्थी तथा सेवा प्रदान करने वाले के बीच समन्वय स्थापित करते हुए सेवाओं का सतत् मूल्यांकन करना तथा उसका अनुवर्तन प्राप्त करना।

परिवर्तनकर्ता के रूप में समाज कार्यकर्ता

समाज कार्य, व्यक्ति विशेष तथा पर्यावरण जिसमे समाज कार्यकर्ता वैयक्तिक, समूहों समुदायों अथवा सामाजिक व्यवस्था में आवश्यकता परिवर्तन लाने हेतु सहयोग, दोनों पर केन्द्रित करता है। परिवर्तनकर्ता की भूमिका, समाज कार्यकर्ता की भूमिका को अन्य व्यवसायों से अलग करता है। जब कार्यकर्ता सेवार्थी के साथ प्रत्यक्ष रूप से कार्य करता है तो मानवीय सेवाओं की आवश्यकताओं तथा व्यक्ति के तनाव को कम करने की स्थिति को पहचानने में बेहतर स्थिति में होता है। समाज कार्यकर्ता सेवार्थी को यह आश्वस्त करता है कि आवश्कताओं की पूर्ति हेतु संसाधन तथा सामाजिक समस्याओं की स्थिति में परिवर्तन लाने अथवा संसाधनों को अभिप्रेरित करने का उत्तरदायित्व उसका है। सामाजिक परिवर्तन आसान नहीं है तथा राजनैतिक परिवेश में यह कार्य करना अत्यधिक कठिन है।

समाज कार्यकर्ता के कार्य

- सामाजिक समस्याओं अथवा नीतियों का विश्लेषण करना,

- सामुदायिक संसाधनों को गतिमान करना,

- सामाजिक संसाधनों को विकसित करना।

पथप्रदर्शक के रूप में समाज कार्यकर्ता

समाज कार्यकर्ता पथप्रदर्शक के रूप में कार्य करता है। वह व्यक्ति, समूह एवं समुदाय की सहायता करता है जिससे कि वह अपने उद्देश्यों को निश्चित कर सके और उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति के साधनों का पता लगा सके। कार्यकर्ता अपने पूर्व अनुभव के आधार पर सेवार्थी को सचेत करता है कि वह असत्य मार्ग का अनुसरण न करे। समाज कार्यकर्ता सेवार्थी को आवश्यक सूचना उपलब्ध कराता है परन्तु वह स्वयं किसी सुझाव को मानने पर सेवार्थी को विवश नहीं कर सकता। समाज कार्यकर्ता सामाजिक परिवर्तन का दिशा निर्देशक होता है। इस प्रकार एक मार्गदर्शक/पथप्रदर्शक के रूप में वह निम्नलिखित कार्य करता हैः-

समाज कार्यकर्ता के कार्य

- सामुदायिक लक्ष्य निर्धारण एवं लक्ष्य प्राप्ति के साधनों को खोजने में सहायता करना,

- लोगों में साथ कार्य करने के लिए कदम उठाना,
- समुदाय की वर्तमान स्थितियों में वस्तुनिष्ठतापूर्ण व्यवहार करना,
- सम्पूर्ण समुदाय के साथ सहायक होकर,
- भूमिका को सार्थक एवं समझने योग्य बनाना।

सामर्थ्यदाता के रूप में समाज कार्यकर्ता

समाज कार्यकर्ता का कार्य न केवल एक मार्गदर्शक के रूप में सदस्यों के रास्तों की बाधा मुक्त बनाना है, बल्कि एक व्यावसायिक कार्यकर्ता होने के कारण उसे सदस्यों में अपनी समस्याओ, आवश्यकताओं को जानने तथा उनसे मुकाबला करने की योग्यता का निर्माण करना भी है। इस प्रकार वह एक कुशल कार्यकर्ता की भूमिका में पूर्ण सहयोग लेकर सामथ्र्यदाता के रूप में वह निम्नलिखित कार्य करता है:-

समाज कार्यकर्ता के कार्य:-

- सामुदायिक असन्तोषों को केन्द्रित करना,
- संगठन को प्रोत्साहित करना,
- अन्तःवैयक्ति सम्बन्धों को बढ़ावा देना,
- सार्वजनिक उद्देश्यों पर बल देना।

विशेषज्ञ के रूप में समाज कार्यकर्ता

एक विशेषज्ञ के रूप में सामाजिक कार्यकर्ता सेवार्थी को सूचना, तकनीकी ज्ञान/अनुभव प्रणालियों के विषय में परामर्श इत्यादि उपलब्ध कराता है परन्तु वह स्वयं अपना मत सेवार्थी से मनवाने का प्रयास नहीं करता है। ऐसी स्थिति में उसे अपनी आत्म चेतना पर नियंत्रण रखना पड़ता है। समाज कार्यकर्ता सेवार्थी को जागरूक करता है और शोध की प्रणालियों द्वारा लाभ पहुंचाने का प्रयास करता है। वह कार्यक्रमों का स्वयं मूल्यांकन करता है और उसे सेवार्थी के समक्ष प्रस्तुत करता है। व्यावसायिक कार्यकर्ता अपने शिक्षण, प्रशिक्षण एवं व्यावहारिक अनुभव के कारण कार्य का एक विशेषज्ञ होता है। उसका पूर्ण सैद्धांतिक ज्ञान, वैज्ञानिक ज्ञान पर आधारित होता है। इस प्रकार वह एक विशेषज्ञ के रूप में निम्नलिखित कार्य करता है:-

समाज कार्यकर्ता के कार्य

- सामुदायिक कठिनाईयों के निदान में सहायता करना,
- अनुसंधान की निपुणता प्रदान करना,
- दूसरे समुदाय की सूचनाओं को उपलब्ध कराना,
- मूल्यांकन करना।

सक्रिय कार्यकर्ता के रूप में समाज कार्यकर्ता

एक सक्रिय कार्यकर्ता के रूप में उन क्षेत्रों में सफल सिद्ध हो सकता है जहां अधिकाधिक जनसंख्या अन्याय एवं पक्षपात का शिकार हो रही हो। वैसे कार्यकर्ता की भूमिका विवादास्पद है लेकिन ऐसे क्षेत्र में कार्यकर्ता सदस्यों की सहायता करता है जिससे वे समुदाय की पुरानी जर्जर व्यवस्था में परिवर्तन कर एक कल्याणकारी एवं न्यायिक सामाजिक ढांचे का निर्माण कर सकें। कार्यकर्ता के इस प्रकार के कार्य की आवश्यकता पर बल देते हुए मोरिस और रेइन ने कहा है कि यदि सामुदायिक विकास की प्रक्रिया में कोई भूमिका निभानी है तो पूर्णरूपेण उदासीन नहीं रहा जा सकता और सक्रिय कार्यकर्ता की भूमिका आवश्यक है। इसी प्रकार पानिक ने भी अपने विचार व्यक्त करते हुए बताया है कि सक्रिय कार्यकर्ता के रूप में समाज कार्यकर्ता विशेषकर सामुदायिक संगठन कार्यकर्ता की भूमिका एक न्यायिक घटना के समान है।

समाज कार्यकर्ता के कार्य

- समुदाय में एक प्रेरक की भूमिका को निभाना।
- कार्यक्रमों में सहभागिता के द्वारा लक्ष्यों की प्राप्ति में सहयोग करना।
- प्रगतिशील कार्यक्रमों के द्वारा लोगों को लगातार प्रोत्साहित करना।
- कार्यक्रम नियोजन में लोगों की सहभागिता को सुनिश्चित करने में सहायता प्रदान करना।

17.4 सारांश

सारांश के रूप में समाज कार्यकर्ता यह चाहता है कि सेवार्थी अपने विकास के लिए कार्यक्रमों का निर्माण करें, स्वयं निर्णय ले, अपने साधनों को स्वयं गतिमान करे इत्यादि। समाज कार्यकर्ता एक व्यावसायिक सहायक की भूमिका को निभाते हुए सेवार्थी में आत्मनिर्भरता एवं आत्मनिर्देशन का विकास करता है। जिससे सेवार्थी सामंजस्यपूर्ण जीवन व्यतीत कर सके।

17.5 अभ्यासार्थ प्रश्न

(1) व्यावसायिक समाज कार्यकर्ता से आप क्या समझते है?

(2) व्यावसायिक समाज कार्यकर्ता के कार्यों का उल्लेख कीजिए।

(3) व्यावसायिक समाज कार्यकर्ता की भूमिका का उल्लेख कीजिए।

(4) सामथ्र्यदाता के रूप में समाज कार्यकर्ता की भूमिका को स्पष्ट कीजिए।

(5) परिवर्तनकर्ता के रूप में समाज कार्यकर्ता के कार्यों को स्पष्ट कीजिए।

(6) विशेषज्ञ के रूप में समाज कार्यकर्ता की भूमिका को स्पष्ट कीजिए।

(7) सक्रियकर्ता के रूप में समाज कार्यकर्ता की भूमिका को स्पष्ट कीजिए।

(8) प्रबन्धक के रूप में समाज कार्यकर्ता के कार्यों को स्पष्ट कीजिए।

(9) शिक्षक के रूप में समाज कार्यकर्ता की भूमिका को स्पष्ट कीजिए।

(10) अधिवक्ता के रूप में समाज कार्यकर्ता की भूमिका को स्पष्ट कीजिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. Friedlander, W. A. Indtrodution of Social Welfare, Prentice Hall, INC. New York, 1995.
2. Thomas P.T.: Profession Traning in Social Work, in Sugata Das Gupta (ed) "Towards in Pilosophy of Social Work in India Popular Books Services, New Delhi, 1967.
3. Ahamad, Mirza Raffiuddin, Samaj Kayra: Darshan evam Pranaliyan, Repid Books Services, Lucknow, 1969.
4. Mishra, P.D. Social Work Profession in India, New Royal Book Co., Lucknow, 2004.
5. Sudan K.S., Samaj Karya: Siddhant evam Abhyas, N.S. Publications Lucknow, 2011.
6. Mishra, P.D., Samaj Karya: Itihas, Darshan evam Pranaliyan, New Royal Book Co. Lucknow, 2004.
7. Singh, D.K., and Bhartiya, A.K., Social Work: Philosophy and Methods, New Royal Book Co. Lucknow, 2009.
8. Shastri R.R., Social Work Tradition in India, Welfare Forum and Research Organization, Varanasi, 1986.
9. Dinitto, D.M. and Mcneece, C.A. Social Work Issues and Opportunities: In a Challenging Profession, LYCEUM Books INC, Chicago, 2008.
10. O.Hare, Thomas, Essential Skills of Social Work Practics: Assesment Intervetion Evaluation LYCEUM Books INC, Chicago, 2009.
11. Adams, R.; Dominelli, L. and Payne, M.; Social Work: Themes, Issues and Critical Debates, Second edition (ed), Palgrave, New York, 1998.
12. Clark, S. Social Work as Community Development: A Management Model for Social Change, Second Eddition (ed), Ashgate Publishing Ltd., England, 2000.
13. Colby, Ira and Dziegielewski, S., Introdution to Social Work: The People's Profession, Second Eddition (ed), LYCEUM Books INC, Chicago, 2004.
14. Srivastava S.P. "Addressing the future of Social Work in India" Social Work Education in India (ed) by S.Signh and S. Swaminathan New Royal Books Co. 2003.
15. Singh, Surendra,: Future Chellanges before Social Work Proffesion in India and Reuired Response, Contemporary Social Work Volume 12 October 1995.

इकाई-18

समाज कार्य व्यवसाय की चुनौतियां

इकाई की रूपरेखा

18.0 उद्देश्य

18.1 प्रस्तावना

18.2 भूमिका

18.3 समाज कार्य व्यवसाय की चुनौतियां

18.4 सारांश

18.5 अभ्यास प्रश्न

18.6 सन्दर्भ ग्रन्थ

18.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप –

1. समाज कार्य के समक्ष आने वाली चुनौतियों से अवगत हो।
2. वर्तमान समय में समाज कार्य व्यवसाय के समक्ष अनेक चुनौतियां है। समाज कार्य व्यवसाय को अपनी स्थिति तथा व्यावसायिकता को बनाये रखने के लिए पूर्ण प्रबन्ध करने पड़ेगे।

18.1 प्रस्तावना

वर्तमान समय में समाज कार्य व्यवसाय संक्रमण काल से गुजर रहा है जिसके कारण इसके समक्ष अनेक चुनौतियां उत्पन्न हो रही है। अपनी प्रासंगिकता को बनाये रखने के लिए समाज कार्य के लिए आवश्यक है कि ऐसी तकनीकियों, निपुणताओं तथा क्षमताओं को विकसित करें जिससे कि उत्पन्न चुनौतियों का सामना किया जा सके।

18.2 भूमिका

समाज कार्य का उद्देश्य समाज में लोगों को इस प्रकार से सेवायें प्रदान करना है जिससे कि वे सभ्य समाज का निर्माण कर सके। एक व्यवसाय समाज की परिकल्पना के बिना अपने उद्देश्यों, विषय वस्तु एवं अन्य निर्धारकों का निर्धारण नहीं कर सकता है। समाज कार्य व्यवसाय में समाज से सम्बन्धित लोगों के सामाजिक आवश्यकताओं तथा आयामों एवं जटिलताओं का समावेश गहनता पूर्वक दिखाई देता है। जिससे कि समाज कार्य व्यवसाय अन्य व्यवसायों की तरह किये जाने वाले कार्यों, नये ज्ञान एवं दृष्टिकोण को अपने अन्दर समाहित कर सके।

18.3 समाज कार्य व्यवसाय की चुनौतियाँ

शिक्षा एवं व्यवसाय एक दूसरे के पूरक हैं। जिसका उद्देश्य समाज में लोगों को इस प्रकार से सेवायें प्रदान करना है जिससे कि वे सभ्य समाज का निर्माण कर सके। एक व्यवसाय समाज की परिकल्पना के बिना अपने उद्देश्यों, विषय वस्तु एवं अन्य निर्धारकों का निर्धारण नहीं कर सकता है। समाज कार्य व्यवसाय में समाज से सम्बन्धित लोगों के सामाजिक आवश्यकताओं तथा आयामों एवं जटिलताओं का समावेश गहनता पूर्वक दिखाई देता है। जिससे कि समाज कार्य व्यवसाय अन्य व्यवसायों की तरह किये जाने वाले कार्यों, नये ज्ञान एवं दृष्टिकोण को अपने अन्दर समाहित कर सके।

यह विचारणीय है कि लगभग सात दशक पूर्ण होने के बाद भी भारत में समाज कार्य अभी भी एक नए व्यवसाय के रूप में अपनी पहचान बना रहा है अथवा दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि समाज कार्य व्यवसाय अपने पूर्ण स्तर को प्राप्त नहीं कर सका है और साथ ही समाज कार्य व्यवसाय ने व्यवसायिक क्षमताओं के आधार पर समाज में अपनी स्वीकृति को सिद्ध नहीं कर पाया है जबकि अन्य व्यवसाय यथा विधि, चिकित्सा, इत्यादि व्यवसायों ने अपनी पहचान को स्थापित किया है। भारत में समाज कार्य व्यवसाय नहीं है। समाज कार्य शिक्षा से सम्बन्धित बहुत से विद्धानों ने माना है कि समाज कार्य ने एक विषय के रूप में अपनी पहचान को स्थापित किया है न कि व्यवसाय के रूप में। यथा मंडल ने सन् 1983 में अपने अध्ययन व अवलोकन में यह पाया कि भारत में समाज कार्य की शिक्षा समाज की आवश्यकताओं के अनुरूप व समसामूहिक नहीं है । भारतीय समाज धीरे-धीरे वाह्य विश्व के सम्पर्क में आने के कारण बहुत ज्यादा जटिल होता जा रहा है तथा उसने विज्ञान एवं तकनीकी के क्षेत्र में बहुत अधिक वृद्धि की है। जिसके परिणामस्वरूप समाज कार्य व्यवसाय को अपने समक्ष बहुत सी गम्भीर चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। जिसका परिणाम यह हो रहा है कि समाज कार्य व्यवसाय, अपने अस्तित्व को बनाए रखने में अत्यधिक संघर्ष के दौर से गुजर रहा है। यह चुनौतियाँ समाज कार्य व्यवसाय को आन्तरिक व वाह्य परिवेश से प्राप्त हो रही है।

भविष्य को ध्यान में रखते हुए भारत में समाज कार्य व्यवसाय की यह चुनौतियाँ एक गहन एवं त्रुटिऋण विश्लेषण की मांग करती हैं। इसके अतिरिक्त भारतीय समाज के बदलते हुए प्रतिमानों ने विभिन्न प्रकार की नई-नई समस्याओं को जन्म देते हुए समाज कार्यकर्ता की पहचान को खतरे में डाला है। भारत में समाज कार्य व्यवसाय की अपनी पहचान नहीं है तथा अनेक ऐसे कारण है जिनकी वजह से समाज कार्य व्यवसाय संकट के दौर से गुजर रहा है जो कि निम्नवत् है:-

1 भारतीय परिप्रेक्ष्य में समाज कार्य ज्ञान का अभाव है:- शिक्षा के क्षेत्र मे यदि देखा जाये तो विशेषकर समाज कार्य हस्तक्षेप की विधियों के सन्दर्भ में यथा वैयक्तिक समाज कार्य, समूह समाज कार्य और सामुदायिक संगठन का विकास अमेरिका के परिवेश के अनुसार हुआ है। अमेरिका के द्वारा समाज कार्य शिक्षा के क्षेत्र में विकसित किया ज्ञान भारतीय परिप्रेक्ष्य के सही रूप से लागू नहीं होता है।

2. समाज कार्य व्यवसाय के प्रति सामुदायिक मान्यता का अभाव:- अभी तक लोगों के द्वारा समाज कार्य को एक व्यवसाय के रूप में स्वीकार नहीं किया गया है। राज्य द्वारा समाज कल्याण के क्षेत्र में जहां पर वृहत स्तर पर प्रशिक्षित समाज कार्यकर्ताओं की आवश्यकता है, समाज कार्यकर्ता को वैधानिक पहचान नहीं दे पाया है। स्वैच्छिक/गैर सरकारी संगठन भी इसके महत्व को स्वीकार नहीं कर पा रहे हैं।

3. समाज कार्य की अवधारणा में भ्रान्ति:- लगभग सात दशक पूर्ण होने के बाद भी समाज कार्य शिक्षा तथा प्रशिक्षित समाज कार्यकर्ताओं द्वारा अभी तक समाज कार्य की अवधारणा की स्पष्ट परिभाषा नहीं की जा सकी है।

4 सामान्य लोगों की पहुंच से बाहर:- भारतीय समाज में जहां तीन चैथाई जनसंख्या पिछड़े क्षेत्र में निवास करती है, के परिप्रेक्ष्य में देखा जाये तो स्पष्ट होता है कि समाज कार्य विषय में ज्यादातर लोग अज्ञान है, यहां तक कि नगरीय क्षेत्रों मे निवास करने वाले लोगों को भी इसके विषय में कम जानकारी है। प्रशिक्षण प्राप्त समाज कार्यकर्ता ग्रामीण क्षेत्रों में जहां पर लोग वास्तव में सहायता चाहते हैं, सहायता हेतु जाना नहीं चाहते हैं। यह एक बहुत बड़ा प्रश्न है कि वर्तमान व्यवस्था में कहां तक परिवर्तन किया जाये जिससे कि राष्ट्र के लोगों की आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके।

5 पाठ्यक्रम में नवीनता का अभाव:- वर्तमान समय में अपनायी जा रही शिक्षण पद्धति में आवश्यकतानुरूप परिवर्तन लाये जाये जो कि प्रभावशाली हो तथा भारतीय परिस्थिति के अनुसार व्याप्त समस्याओं एवं आवश्यकताओं के अनुरूप पाठ्यक्रम में परिवर्तन की आवश्यकता है। समाज कार्य शिक्षा से सम्बन्धित शिक्षण संस्थाओं द्वारा दी जाने वाली शिक्षा भारतीय परिस्थिति के अनुरूप नहीं है जिसके कारण समाज कार्य अभ्यास की तकनीकियों का प्रयोग नहीं हो पा रहा है। अतः आवश्कयता इस बात की है कि पाठ्यक्रम को वर्तमान आवश्यकता के अनुरूप निर्मित किया जाये जिससे कि समाज कार्य शिक्षा को अधिक प्रभावी बनाया जा सके।

6 समाज कार्य शिक्षा से सम्बन्धित विशेषीकरण:- समाज कार्य शिक्षा में छात्रों को अन्य विषयों की भांति सामान्य शिक्षा तथा विशेषीकरण से सम्बन्धित शिक्षण में उचित प्रशिक्षण नहीं दिया जा रहा है तथा जो भी विशेषीकरण प्रदान किया जा रहा है वह वर्तमान समय में प्रासंगिक नहीं है।

7 क्षेत्रीय कार्य में नवीनता का अभाव:- समाज कार्य शिक्षा से सम्बन्धित यू.जी.सी. मूल्यांकन समिति (1980) में इस बात पर बल दिया गया है किं समाज कार्य की क्लास रूम की शिक्षा तथा क्षेत्रीय कार्य के बीच समन्वय की कमी है तथा क्षेत्रीय कार्य में नवीनता का अभाव है।

8 अपर्याप्त अनुसंधान आधार:- समाज कार्य के क्षेत्र में जो भी अनुसंधान कार्य किये जा रहे हैं तथा जो भी कार्य हो रहे हैं उसकी उपयोगिता पर संदेह है तथा गुणवत्ता से परे हैं। आवश्यकता इस बात की है कि समाज कार्य की विधियों एवं तकनीकियों को प्रयोग करते हुए क्षेत्रीय कार्य अभ्यास में नवीनता लायी जाये और गुणवत्ता परक अनुसंधान कार्य को प्रेरित किया जाये।

9 छात्रों की गुणवत्ता के स्तर में गिरावट:- जब से समाज कार्य शिक्षा का प्रारम्भ भारत में हुआ है तभी से समाज कल्याण के क्षेत्र में तेजी से वृद्धि हो रही है। व्यावसायिक मान्यता न प्राप्त होने के कारण छात्र प्रबन्ध के अन्य विषयों में प्रवेश ले लेते हैं तथा अच्छे छात्र समाज कार्य विषय की ओर कम आकर्षित होते हैं।

10 अप्रभावशाली व्यावसायिक संगठन:- भारत में अभी तक प्रभावशाली संगठन की स्थापना नहीं हो पायी है तथा उसकी स्वीकारोक्ति भी नहीं है। प्रभावशाली संगठन के अभाव में समाज कार्य व्यवसाय अपनी पहचान बनाने में असमर्थ है।

व्यवसाय में व्याप्त चुनौतियां

समाज कार्य विभाग/संस्थाओं द्वारा दी जा रही समाज कार्य शिक्षा के सामने अनेक चुनौतियां है। व्यक्तिगत, सामूहिक तथा सामुदायिक स्तर पर सेवार्थी की मनो-सामाजिक समस्याओं के समाधान हेतु दी जाने वाली सुधारात्मक तथा उपचारात्मक सेवाओं की उचित रणनीतियों के अभाव होने के कारण व्यवस्था में परिवर्तन नहीं लाया जा सका है।

समाज कार्य पाठ्यक्रम में विभिन्नता से सम्बन्धित सामाजिक नीति, सामाजिक नियोजन, सामाजिक विकास इत्यादि जो कि व्यवस्थित परिवर्तन के लिए सहायता प्रदान करती है, विशेषकर मानवाधिकार के क्षेत्र और सामाजिक न्याय की स्थापना से सम्बन्धित विषयों को शामिल करना।

समाज कार्य पाठ्यक्रम में विशेष रूप से मानव संसाधन प्रबन्धन एवं विकास के लिए तथा लोक केन्द्रित विकास की लक्ष्य की प्राप्ति हेतु यथा स्थान को उपलब्ध कराना। मानव सम्बन्धों से सम्बन्धित विभिन्न तकनीकियों एवं विधियों को विकसित करना तथा समाज कार्य सेवाओं को प्रदान करने एवं उचित माध्यमों को विकसित करने के लिए, इत्यादि समाज कार्य शिक्षा के पाठ्यक्रम में शामिल करना। समय-समय पर उभरते हुए नये विषयों जैसे सामाजिक न्याय, मानवाधिकार, आतंकवाद, पर्यावरण संरक्षण, उपभोक्ता संरक्षण तनाव प्रबन्धक, सामाजिक विकास, संचार, जनहित याचिका इत्यादि को समाज कार्य शिक्षा में शामिल किया जाये जिससे कि प्रासंगिकता बनी रहे।

समाज कार्य शिक्षा से सम्बन्धित अधिकतर साहित्य की रचना विदेशी भाषाओं विशेषकर अंग्रेजी में की गई जो कि अमेरिका अथवा ब्रिटीश विद्धानों द्वारा लिखा गया है। ऐसी स्थिति में जरूरत इस बात कि है कि भारतीय सामाजिक आर्थिक राजनैतिक एवं सांस्कृतिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए भारतीय विद्धानों द्वारा पुस्तकों अथवा साहित्य की रचना की जाये हैं तथा इस बात को भी ध्यान में रखा जाये कि भारत विविधताओं से युक्त देश अतः क्षेत्रीय भाषाओं में साहित्य रचना ज्यादा उपयोगी हो सकती है।

भारतीय समाज के परिप्रेक्ष्य में प्राथमिक रूप से समाज में व्याप्त विभिन्न समस्याओं एवं मौलिक मुद्दों जैसे गरीबी, बेरोजगारी, कुपोषण, अशिक्षा, गन्दगी, मानवाधिकारों का हनन, ग्राहकों का शोषण आदि,, बंटाईदारों को जमीन का मालिकाना हक, जमींदारी- उन्मूलन, परिवार के एक सदस्य को रोजगार की गारण्टी, मुख्यतया उन लोगों पर प्रतिबन्ध लगा कर जिनके परिवार के लोग सरकारी नौकरियों में पहले से मौजूद हैं, एवं उदार ब्याज प्रणाली के अन्तर्गत लोगों को ऋण प्रदान करवाकर रोजगार सुनिश्चित करने की व्यवस्था, 14 वर्ष से कम उम्र के बच्चों के लिए शिक्षा सुनिश्चित करना एवं सभी के लिए मकान की व्यवस्था जैसे मुद्दों को समाज कार्य शिक्षा के अन्तर्गत सम्मिलित करना चाहिए।

समाजकार्य संकाय सदस्यों के लिए प्रशिक्षण का अभाव, समाजकार्य शिक्षकों एवं व्यवसायियों में विचारों के आदान-प्रदान की कमी, व्यवसायिक एवं उद्योग घरानों की कम रूचि, दान दाता संस्थाओं में समाजकार्य के प्रति रूचि का अभाव, समाजकार्य को विश्वविद्यालयी व्यवस्था के अन्तर्गत बढ़ावा, समाजकार्य विद्यालयों की स्वायत्ता को समाप्त कर उसे विश्वविद्यालय के एवं विभाग के रूप में स्थापित कर देना (कई विश्वविद्यालय के समाज कार्य विभागों में समाजकार्य को सामान्यतया स्नातक के एक विषय के रूप में शामिल किया गया है जिसमें क्षेत्र कार्य (फील्डवर्क) पाठ्यक्रम एवं प्रयोगात्मक विषयों को शामिल नहीं किया गया है)।

अभिकरण आधारित फील्डवर्क को विभिन्न समाजकार्य विभागों एवं विद्यालयों द्वारा बढ़ावा दिया जाना चाहिये। स्वैच्छिक संगठनों एवं समाज कार्य विभागों/विद्यालयों के बीच सम्मिलित भागीदारी का सर्वथा अभाव है जिसे दुरूस्त किये जाने की आवश्यकता है। सामान्यतया समाजकार्य विद्यालयों को स्वैच्छिक संगठनों से लाभ उनके विद्यार्थियों को प्रशिक्षण प्रदान करने के रूप में प्राप्त होता है।

समाज कार्य स्नातक एवं परास्नातक विभिन्न संगठनों में उच्च पदों को पाने में काफी भाग्यशाली रहे हैं। पर वे व्यावसायिक समाज कार्यकर्ता के रूप में पहचान बनाने में बड़ी चुनौती का सामना कर रहे हैं, क्योंकि उनके वरिष्ठ खास करके नौकरशाह सामाजिक कार्यो एवं चुनौतियों की समुचित समझ नहीं रखते।

समाजकार्य कर्ता एक अलगाव की भावना के साथ कार्य कर रहे हैं यहाँ तक कि अस्पताल, उद्योग, शहरी विकास, ग्रामीण विकास, आदि में भी जहां उन्हें बाकी व्यवसायियों के साथ निकटता एवं मिलजुल कर कार्य करने की आवश्यकता है।

सामाजिक कार्यकर्ताओं के अपने विश्वविद्यालय एवं विभागों से सम्बन्ध बिल्कुल नहीं है। सामान्यतया पुराने छात्रों के संगठन की बैठक आदि जैसे दुर्लभ अवसरों पर वे व्यक्तिगत विषयों पर ही बात-चीत करते हैं जैसे प्रोमोशन, वेतन में बढ़ोत्तरी आदि जैसे मसलों पर बातें करते हैं और व्यावसायिक मुद्दों जैसे सामाजिक कल्याण प्रशासकों कैडर या राष्ट्रीय समाज कल्याण संगठन जैसे मुद्दों पर बात नहीं करते।

बड़े संगठनों में कार्य करने वाले सामाजिक कार्यकर्ता अपने बाकी सहयोगियों की तरह ही स्वयं की आवश्यकताओं को पूरा करने पर अधिक ध्यान दे रहे हैं, और वे अपने कार्यो को ठीक तरीके से करने की बजाय अपने वरिष्ठ एवं बास को खुश करने में सारा वक्त लगाने लगे हैं।

अनेक सामाजिक कार्यकर्ता जो नौकरी पाने में असफल रहे हैं एवं अपनी स्वयं की संख्या बनाकर कार्य कर रहे हैं वे समाज के लिए अपने उत्तरदायित्वों एवं कार्यो का निर्वहन करने की बजाय राष्ट्रीय एवं अन्तराष्ट्रीय दानदाता संस्थाओं से धन प्राप्त करने में लगे रहते हैं।

अन्य व्यावसायों से उत्पन्न चुनौतियां

अपनी व्यवसायिक उन्नति के लिए सभी व्यवसाय के लोग अपना अभ्यास क्षेत्र और प्रभाव क्षेत्र बढ़ाने के लिए अधिकाधिक प्रयास करते हैं एवं पारस्परिक व्यवसाय में अपनी भागीदारी अधिक से अधिक सुनिश्चित करने की कोशिश करते हैं। सन् 1948 में जब इसके सेक्शन 49 में श्रम कल्याण अधिकारी की नियुक्ति की व्यवस्था 500 या उससे अधिक की कर्मचारियों की संख्या पर की गयी थी एवं साथ ही उसके लिए सामाजिक कार्य के क्षेत्र में डिग्री/डिप्लोमा की अनिवार्यता ने निर्विवाद रूप से इस पद के लिए समाजकार्य विद्यार्थियों को अधिकृत किया था। लेकिन जब से प्रबन्ध संस्थानों ने कार्मिक प्रशासन में डिग्री देनी शुरू की तब से समाजकार्य विद्यार्थियों के सामने एक नयी समस्या का प्रादुर्भाव हुआ। गृहविज्ञान को समाजकार्य के विकल्प के रूप में विचारित किया जा रहा है। परिवार परामर्शदाता को मनोविज्ञान से चुनौती मिल रही है।

स्वयं सेवी संगठनों और महात्मा गांधी की परम्परा को सुरक्षित रखने वाले कार्यकर्ताओं से चुनौतियां

सामाजिक सेवा एवं सामुदायिक संगठन के क्षेत्र में समाजकार्य को स्वयं सेवी संस्थाओं से बड़ी चुनौती का सामना कर पड़ रहा है। गांधी जी के पद चिन्हों पर चलने वाले कार्यकर्ता पूरी लगन एवं निष्ठा से सामाजिक सेवा को अन्जाम दे रहे हैं। इस समय वे लोग व्यवसायिक सामाजिक कार्यकर्ताओं के वेतन आदि पर विरोध जताते है एवं यह बताने की कोशिश करते हैं कि व्यवसायिक सामाजिक कार्यकर्ता उनसे किसी भी मामले में बेहतर नहीं हैं। इस तरह की चुनौतियों का सामना समाज के सामने कुछ अच्छा करके ही किया जा सकता है।

नौकरशाही से चुनौतियां

नौकरशाही को प्रशासन में एक स्थिर पद प्राप्त होता है तथा वे राजनीतिज्ञों के भ्रमित करने की अपनी विशेषज्ञता के द्वारा अन्य क्षेत्रों में अपना प्रभाव बढ़ाते हैं तथा निर्णय लेने के अधिकार को स्वयं सुरक्षित रखते हैं। राज्य सरकार के बहुत से पद जो सामाजिक कार्य के प्रकृति के हैं जैसे समाज कल्याण अधिकारी खण्ड विकास अधिकारी, श्रम अधिकारी, सी.डी.पी.ओ. आदि पर चयनित व्यक्ति लोकसेवा आयोग की एलॉयड सेवा में आते हैं जो पहले सीधे

समाज कार्य विद्यार्थियों की सीधी नियुक्ति द्वारा भरे जाते थे। समाजकार्य अभी भी प्राथमिक परीक्षा में एक विषय के रूप में नहीं है एवं मुख्य परीक्षा में इसके प्रावधान को लोक सेवकों के अत्यधिक विरोध का सामना करना पड़ा है। राजनीतिक लाबिंग एवं राजनीतिज्ञों को समझाकर ही इस तरह की समस्या से निजात पाया जा सकता है किन्तु दूरदर्शी रूप से इसका समाधान एक वैधानिक समाज कार्य शिक्षा परिषद के गठन से ही सम्भव है।

18. 4 सारांश

सारांश के रूप में समाज कार्य व्यवसाय के समक्ष उत्पन्न चुनौतियां इस बात का संकेत करती हैं कि अन्य व्यावसायों की तरह यदि वर्तमान समय के अनुरूप समाज कार्य की शिक्षा में आवश्यक परिवर्तन नहीं किये गये तो समाज कार्य व्यवसाय का अस्तित्व सदैव संकट में बना रहेगा। अतः आवश्यकता है कि चुनौतियों का सामना करते हुए ऐसे प्रयास किये जायें जिससे कि समाज कार्य व्यवसाय को अपनी पहचान के संकट से न गुजरना पड़े।

18.5 अभ्यासार्थ प्रश्न

(1) समाज कार्य व्यवसाय के समक्ष कौन-कौन सी चुनौतियां हैं?

(2) समाज कार्य व्यवसाय के समक्ष उत्पन्न चुनौतियां से किस प्रकार निपटा जा सकता है?

(3) समाज कार्य व्यवसाय की पहचान को बनाये रखने के लिए कौन सी रणनीतियों/उपायों को अपनाया जा सकता है।

(4) समाज कार्य व्यवसाय तथा गांधीवादी दर्शन को समझाइये।

18.6 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. Friedlander, W. A. Indtrodution of Social Welfare, Prentice Hall, INC. New York, 1995.
2. Thomas P.T.: Profession Traning in Social Work, in Sugata Das Gupta (ed) "Towards in Pilosophy of Social Work in India Popular Books Services, New Delhi, 1967
3. Ahamad, Mirza Raffiuddin, Samaj Kayra: Darshan evam Pranaliyan, Repid Books Services, Lucknow, 1969.
4. Mishra, P.D. Social Work Profession in India, New Royal Book Co., Lucknow, 2004.
5. Sudan K.S., Samaj Karya: Siddhant evam Abhyas, N.S. Publications Lucknow, 2011.
6. Mishra, P.D., Samaj Karya: Itihas, Darshan evam Pranaliyan, New Royal Book Co. Lucknow, 2004.
7. Singh, D.K., and Bhartiya, A.K., Social Work: Philosophy and Methods, New Royal Book Co. Lucknow, 2009.
8. Shastri R.R., Social Work Tradition in India, Welfare Forum and Research Organization, Varanasi, 1986.
9. Dinitto, D.M. and Mcneece, C.A. Social Work Issues and Opportunities: In a Challenging Profession, LYCEUM Books INC, Chicago, 2008.
10. O.Hare, Thomas, Essential Skills of Social Work Practics: Assesment Intervetion Evaluation LYCEUM Books INC, Chicago, 2009.
11. Adams, R.; Dominelli, L. and Payne, M.; Social Work: Themes, Issues and Critical Debates, Second edition (ed), Palgrave, New York, 1998.

12. Clark, S. Social Work as Community Development: A Management Model for Social Change, Second Eddition (ed), Ashgate Publishing Ltd., England, 2000.
13. Colby, Ira and Dziegielewski, S., Introdution to Social Work: The People's Profession, Second Eddition (ed), LYCEUM Books INC, Chicago, 2004.
14. Srivastava S.P. "Addressing the future of Social Work in India" Social Work Education in India (ed) by S.Signh and S. Swaminathan New Royal Books Co. 2003.
15. Singh, Surendra,: Future Chellanges before Social Work Proffesion in India and Reuired Response, Contemporary Social Work Volume 12 October 1995.